# کلیاتِ علی سردار جعفری

جلد دوم

(شاعری)

مرتب

علی احمد فاطمی

قومی کونسل برائے فروغ اردو زبان

وزارتِ ترقی انسانی وسائل، حکومتِ ہند

ویسٹ بلاک۔1، آر۔کے۔پورم، نئی دہلی۔110066

**Kulliyat-e-Ali Sardar Jafri-Vol. II (Poetry)**

*Edited by*

**Ali Ahmad Fatmi**

© قومی کونسل برائے فروغ اردو زبان، نئی دہلی

پہلا ایڈیشن : 1100

سنہ اشاعت : جولائی، ستمبر 2005، شک 1927

قیمت : -/200 روپے

شمار سلسلۂ مطبوعات : 1235

ISBN : 81-7587-103-2

ناشر: ڈائرکٹر، قومی کونسل برائے فروغ اردو زبان، ویسٹ بلاک 1، آر۔ کے۔ پورم نئی دہلی-110066

فون نمبر: 26103938، 26103381، 26179657 فیکس: 26108159

ای۔میل: urducoun@ndf.vsnl.net.in، ویب سائٹ: www.urducouncil.nic.in

طابع: لاہوتی پرنٹ ایڈز، جامع مسجد دہلی- 110006

# پیش لفظ

قومی کونسل برائے فروغ اردو زبان ایک قومی مقتدرہ کی حیثیت سے کام کررہی ہے۔ اس کی کارگذاریوں کا دائرہ کئی علوم کا احاطہ کرتا ہے جن میں اردو کی ان کتابوں کی مکرّر اشاعت بھی شامل ہے جو اردو زبان و ادب کی تاریخ میں سنگِ میل کی حیثیت رکھتی ہیں اور اب نایاب ہوتی جارہی ہیں۔ ہمارا یہ ادبی سرمایہ محض ماضی کا قیمتی ورثہ ہی نہیں، بلکہ یہ حال کی تعمیر اور مستقبل کی منصوبہ بندی میں ہماری رہنمائی بھی کرتا ہے۔ اس سے کماحقہ، واقفیت نئی نسلوں کے لیے بے حد ضروری ہے۔ قومی اردو کونسل ایک منضبط منصوبے کے تحت قدیم اور جدید عہد کی اردو کی تصنیفات شائع کرنے کی اس لیے بھی خواہاں ہے تاکہ اردو کے اس قیمتی علمی و ادبی سرمائے کو آنے والی نسلوں تک پہنچایا جاسکے اور زمانے کی دستبرد سے بھی اسے محفوظ رکھا جاسکے۔

عہدِ حاضر میں اردو کے مستند کلاسیکی متون کی حصولیابی، نیز ان کی کمپوزنگ اور پروف ریڈنگ ایک بہت بڑا مسئلہ ہے، لیکن قومی اردو کونسل نے حتی الوسع اس مسئلے پر قابو پانے کی کوشش کی ہے۔ کلیاتِ علی سردار جعفری اسی سلسلے کی ایک کڑی ہے جسے کونسل قارئین کی خدمت میں پیش کررہی ہے۔

اہلِ علم سے گزارش ہے کہ کتاب میں کوئی خامی نظر آئے تو تحریر فرمائیں تاکہ اگلی اشاعت میں دور کی جاسکے۔

**ڈاکٹر محمد حمید اللہ بھٹ**

ڈائرکٹر

# فہرست


| صفحہ | عنوانات | نمبر شمار |
|---|---|---|
| **17-57** | **5۔ ایشیا جاگ اٹھا** | |
| **59-179** | **6۔ پتھر کی دیوار** | |
| 61 | حرفِ اول | 1 |
| 71 | دیباچہ طبع ثانی | 2 |
| 73 | پتھر کی دیوار | 3 |
| 81 | موت | 4 |
| 85 | مقتول ماتا | 5 |
| 87 | بمبئی | 6 |
| 92 | دکن کی شہزادی | 7 |
| 94 | اودھ کی خاکِ حسیں | 8 |
| 101 | میرے خواب | 9 |
| 107 | شادی کا دن | 10 |
| 108 | جیل کی رات | 11 |
| 109 | تمھاری آنکھیں | 12 |
| 112 | تجدیدِ وفا | 13 |
| 114 | نیند | 14 |
| 118 | ایک سال | 15 |
| 123 | زنداں بہ زنداں | 16 |
| 125 | خونیں ہاتھ | 17 |

| | | |
|---|---|---|
| 18 | بھوکی ماں، بھوکا بچہ | 127 |
| 19 | آخری رات | 129 |
| 20 | فیض کے نام | 131 |
| 21 | سجاد ظہیر کے نام | 137 |
| 22 | یلغار | 140 |
| 23 | متفرقات | 147 |
| 24 | اردو | 161 |
| 25 | غزل | 164 |
| 26 | اناج | 166 |
| 27 | غزل | 168 |
| 28 | تہنیت | 169 |
| 29 | حسنِ کشمیر | 172 |
| 30 | جہلم کا ترانہ | 174 |
| 31 | رائفل کی گولیوں کا نغمہ اور نئے شعری پیکر کی تخلیق | 177 |
| **7۔** | **ایک خواب اور** | **181-313** |
| 1 | حرفِ اوّل | 183 |
| 2 | ایک خواب اور | 185 |
| 3 | ہاتھوں کا ترانہ | 187 |
| 4 | زندگی | 190 |
| 5 | سرِ طور | 193 |
| 6 | ذوقِ طلب | 196 |
| 7 | ہم نے دیکھا ہے | 198 |
| 8 | غزل (شکستِ شوق) | 199 |
| 9 | مشرق و مغرب | 201 |

| | | |
|---|---|---|
| 10 | تین شرابی | 205 |
| 11 | قطعہ (تبسم لب ساقی) | 215 |
| 12 | محفلِ یاراں | 215 |
| 13 | جشنِ بادہ گساراں | 216 |
| 14 | مرے عزیزو، مرے رفیقو | 218 |
| 15 | نذرِ عقیدت | 224 |
| 16 | غزل (میں جہاں تم کو بلاتا ہوں) | 225 |
| 17 | جامِ محبت | 226 |
| 18 | سو رنگ | 227 |
| 19 | غزل (لغزشِ گام) | 228 |
| 20 | غزل (گماں اور) | 229 |
| 21 | غزل (دل کے سوا) | 230 |
| 22 | غزل (کھلے ہیں گلزار) | 231 |
| 23 | غزل (ظلم کی کچھ معیاد نہیں ہے) | 232 |
| 24 | غزل (سینہ فگار آتے ہیں) | 233 |
| 25 | غزل (دل کے آنگن میں) | 234 |
| 26 | غزل (یاد آئے ہیں) | 235 |
| 27 | لمحوں کے چراغ | 236 |
| 28 | یہ زندگی ہے | 237 |
| 29 | حسین تر | 238 |
| 30 | میرا سفر | 240 |
| 31 | کوچۂ چاک گریباں | 243 |
| 32 | ایک بات | 244 |
| 33 | نوالہ | 245 |
| 34 | دو چراغ | 246 |

| | | |
|---|---|---|
| 35 | دردِ عشق | 248 |
| 36 | اہلِ درد | 249 |
| 37 | دو شعر (منزل کوئی نہیں) | 250 |
| 38 | دو شعر (یہ نہ پوچھ) | 250 |
| 39 | دو شعر (شوق کی راہ میں) | 251 |
| 40 | دو شعر (اے ساقی) | 251 |
| 41 | غزل (خزاں ہے چار دن کی) | 252 |
| 42 | تین شعر (خونِ دل) | 243 |
| 43 | غزل (خیر مناؤ) | 254 |
| 44 | تخلیق کا کرب | 255 |
| 45 | دو شعر (برگ خشک وزرد) | 255 |
| 46 | دو شعر (تمام رات) | 256 |
| 47 | دو شعر (بات کرو) | 256 |
| 48 | دو شعر (پسند کیوں قاتلوں کو آئیں) | 257 |
| 49 | تین شعر (یہ بوئے گل) | 257 |
| 50 | سلام | 258 |
| 51 | قطعہ (حُسن تیرا) | 259 |
| 52 | تین شعر (کنارِ شوق) | 260 |
| 53 | تین شعر (جنونِ زلفِ معنبر) | 260 |
| 54 | دو شعر (زخمِ تازہ کی سوغات) | 261 |
| 55 | قطعہ (ہوائے صبح مشرق) | 261 |
| 56 | پانچ شعر (جس سے .... کبھی) | 262 |
| 57 | آباد ویرانے | 263 |
| 58 | مرے خواب | 264 |
| 59 | ایک پھول | 265 |

| | | |
|---|---|---|
| 60 | قطعہ (شمعِ دلبری لے کر) | 266 |
| 61 | ترے پیار کا نام | 266 |
| 62 | جب ترا نام لیا | 267 |
| 63 | درد اک چاند ہے | 268 |
| 64 | غم کا ہیرا | 268 |
| 65 | اجنبی آنکھیں | 269 |
| 66 | شعلہ لبی | 269 |
| 67 | پیاس بھی ایک سمندر ہے | 270 |
| 68 | شعلہ و شبنم | 270 |
| 69 | یاقوت لبی | 271 |
| 70 | چاند کو رخصت کردو | 271 |
| 71 | آرزو کے صنم خانے | 272 |
| 72 | تم نہیں آئے تھے جب | 274 |
| 73 | تو مجھے اتنے پیار سے مت دیکھ | 276 |
| 74 | بہت قریب ہو تم | 277 |
| 75 | تمھارے ہاتھ | 278 |
| 76 | نسیم تیری قبا | 279 |
| 77 | پیاس کی آگ | 280 |
| 78 | قتالۂ عالم | 281 |
| 79 | قطعہ (نسیمِ صبحِ تصور) | 282 |
| 80 | غزل (خوگرِ روئے خوش جمال ہیں ہم) | 283 |
| 81 | غزل (ہے کہ نہیں) | 284 |
| 82 | غزل (حسرتِ دل ہے) | 285 |
| 83 | غزل (اور بھی تیز) | 286 |
| 84 | غزل (نغمۂ زنجیر ہے) | 287 |

| | | |
|---|---|---|
| 85 | تین شعر (رفیق بھی ہے) | 288 |
| 86 | دوسناٹے | 289 |
| 87 | شعلۂ حسن | 290 |
| 88 | قطعہ (آ تیرے ہونٹ چوم لوں) | 291 |
| 89 | قطعہ (ابھی جوان ہے) | 291 |
| 90 | تن کی چاندی، من کا سونا | 292 |
| 91 | قطعہ (متحد ہو کے اٹھے) | 293 |
| 92 | شامِ غم | 294 |
| 93 | لطفِ سخن | 296 |
| 94 | سناٹا | 297 |
| 95 | خنجروں کی روشنی | 298 |
| 96 | قطعہ (ہر ایک خوشی) | 299 |
| 97 | جب صبا آئے گی | 300 |
| 98 | قتلِ آفتاب | 301 |
| 99 | برہنہ پا ہے بہار | 302 |
| 100 | پیغمبرِ مسیحا دست | 305 |
| 101 | رہبر کی موت | 308 |
| 102 | صندل و گلاب کی راکھ | 309 |
| 103 | فاصلے | 311 |
| 104 | متفرق اشعار | 312 |
| **8** | **پیراہنِ شرر** | **315-380** |
| 1 | پیراہنِ شبنم پنڈت آنند نرائن ملاّ | 319 |
| 2 | حرفِ اوّل | 324 |
| 3 | پیراہنِ شرر | 333 |

| | | |
|---|---|---|
| 4 | تم بھی آؤ | 334 |
| 5 | انٹلیچول | 335 |
| 6 | یہ لہو | 337 |
| 7 | دعا | 339 |
| 8 | قطعہ | 341 |
| 9 | غزل | 342 |
| 10 | غزل | 343 |
| 11 | غزل | 344 |
| 12 | غزل | 345 |
| 13 | جنگ بازوں کا فرمان | 346 |
| 14 | کون دشمن ہے؟ | 347 |
| 15 | شہرِ تمنا | 351 |
| 16 | دستِ فریاد | 353 |
| 17 | اشکِ ندامت | 353 |
| 18 | صبحِ فردا | 354 |
| 19 | ہمارے نام | 357 |
| 20 | غزل | 360 |
| 21 | جرعہ جرعہ قطرہ قطرہ | 362 |
| 22 | چار شعر | 363 |
| 23 | موسموں کا گیت | 364 |
| 24 | حرفِ آخر | 373 |
| 25 | تاشقند کی شام | 375 |
| 26 | اسے نہ ڈھونڈھو | 377 |
| 27 | امانتِ غم | 378 |

## 9 لہو پکارتا ہے 381-470


| | | |
|---|---|---|
| 1 | حرف اول | 385 |
| 2 | ایک شعر | 386 |
| 3 | لہو پکارتا ہے | 387 |
| 4 | گفتگو | 389 |
| 5 | نظم | 391 |
| 6 | نظم | 392 |
| 7 | قطعہ | 392 |
| 8 | آرزوئے تشنہ لبی | 393 |
| 9 | چار شعر | 394 |
| 10 | دو شعر | 394 |
| 11 | غزل | 395 |
| 12 | تمھارا شہر | 396 |
| 13 | پھول، چاند، پرچم | 399 |
| 14 | لدی تسے | 401 |
| 15 | ایک پرانی داستان | 403 |
| 16 | اب بھی روشن ہیں | 405 |
| 17 | شعور | 407 |
| 18 | برہنہ فقیر | 408 |
| 19 | نفرتوں کی سپر | 410 |
| 20 | قطعہ | 411 |
| 21 | دو شعر | 411 |
| 22 | غزل | 412 |
| 23 | جشن دلداری | 413 |

| | | |
|---|---|---|
| 24 | غزل | 415 |
| 25 | دلنواز لہو | 416 |
| 26 | قطعہ | 417 |
| 27 | کون سچ بولے گا | 417 |
| 28 | تین شعر | 418 |
| 29 | دو شعر | 418 |
| 30 | قطعہ | 419 |
| 31 | دو شعر | 419 |
| 32 | دو شعر | 420 |
| 33 | خون کا اجالا | 420 |
| 34 | سجاد ظہیر | 421 |
| 35 | صلیب | 421 |
| 36 | چار شعر | 422 |
| 37 | غزل | 423 |
| 38 | نظم | 424 |
| 39 | غزل | 425 |
| 40 | دو شعر | 426 |
| 41 | غزل | 427 |
| 42 | شاعر | 428 |
| 43 | غزل | 429 |
| 44 | غزل | 431 |
| 45 | نظم | 432 |
| 46 | نظم | 432 |
| 47 | نظم | 432 |
| 48 | غزل | 433 |

| | | |
|---|---|---|
| 49 | غزل | 434 |
| 50 | غزل | 435 |
| 51 | صبح نو | 436 |
| 52 | کارل مارکس | 437 |
| 53 | غزل | 438 |
| 54 | غزل | 439 |
| 55 | خاموشی | 440 |
| 56 | چھوٹا سا دل | 441 |
| 57 | تین شعر | 442 |
| 58 | غزل | 443 |
| 59 | غزل | 444 |
| 60 | اشعار | 445 |
| 61 | تین شعر | 445 |
| 62 | ہندستان کے بھوکے اساتذہ | 446 |
| 63 | اشعار | 446 |
| 64 | نظم | 447 |
| 65 | اقبال کی آواز | 448 |
| 66 | تین شعر | 448 |
| 67 | غزل | 449 |
| 68 | تہنیت | 451 |
| 69 | غزل | 453 |
| 70 | قطعہ | 454 |
| 71 | تین شعر | 454 |
| 72 | کاسۂ سر | 455 |
| 73 | لمحۂ آفتاب | 456 |

| | | |
|---|---|---|
| 74 | غزل | 457 |
| 75 | افریقی لڑکی | 459 |
| 76 | حبشی میرا بھائی | 460 |
| 77 | لوئی آراگوں | 463 |
| 78 | پابلونرودا | 464 |
| 79 | جولیو کیوری | 466 |
| 80 | پال روبسن | 467 |
| 81 | ایلیا اہرن برگ | 469 |
| 82 | فیض احمد فیض | 469 |
| 83 | کرشن چندر | 470 |
| | **بعد چند نظمیں وغزلیں** | **471-533** |
| 1 | کربلا (ایک رجز) | 473 |
| 2 | آبلہ پا | 477 |
| 3 | غزل | 480 |
| 4 | غزل | 481 |
| 5 | غزل | 482 |
| 6 | سیلِ وقت (رقصِ خزاں) | 483 |
| 7 | خوابِ پریشاں | 484 |
| 8 | رقصِ ابلیس | 486 |
| 9 | رقصِ ابلیس کے بعد | 487 |
| 10 | دعائے مغفرت | 490 |
| 11 | ایک شعر | 490 |
| 12 | نومبر میرا گہوارہ | 491 |
| 13 | دل اور شکستِ دل | 504 |
| 14 | اے شہ سوارو | 506 |
| 15 | العطش | 508 |

| | | |
|---|---|---|
| 16 | پسِ دیوارِ زنداں | 510 |
| 17 | چار شعر | 511 |
| 18 | ہوسِ دل | 511 |
| 19 | دو شعر | 512 |
| 20 | نئی نسل کے نام | 512 |
| 21 | غزل | 514 |
| 22 | ایک شعر | 514 |
| 23 | راج نراج | 515 |
| 24 | غزل | 516 |
| 25 | غزل | 517 |
| 26 | غزل | 518 |
| 27 | ایک شعر | 518 |
| 28 | ایک شعر | 519 |
| 29 | ایک نظم | 519 |
| 30 | سمندر کی بیٹی | 520 |
| 31 | دو شعر | 522 |
| 32 | دولتِ دنیا کا حساب | 523 |
| 33 | کرشمہ | 524 |
| 34 | پروین شاکر | 525 |
| 35 | صفارت خانۂ جاں | 528 |
| 36 | نذرِ اختر الایمان | 529 |
| 37 | تین شعر | 529 |
| 38 | احمد فراز کے نام | 530 |
| 39 | وید مقدس | 531 |
| 40 | چنڈالِکا | 532 |
| 41 | غزل | 533 |

# ایشیا جاگ اٹھا

(سنِ اشاعت۔ پہلی بار۔ اکتوبر 1950،

دوسری بار۔ مارچ 1952)

یہ ایشیا کی حسین بستی ہے ٹینک کا راستا نہیں ہے
اڑیں گے جس میں تمھارے بمبار اب یہ ایسی ہوا نہیں ہے
تمھیں گزرنا پڑے گا ہر گام پر تلنگانے کی زمیں سے
تمھارے سر پر پہاڑ برسیں گے چھاپہ ماروں کی آستیں سے
بھنور کے حلقے تمھارے پیروں میں اپنی زنجیر ڈال دیں گے
ہواؤں کے ہاتھ تم کو نیلی فضا سے اوپر اچھال دیں گے

کرشن چندر کی حسین وجمیل

کہانیوں کے نام

جو

ایشیا کی جنگ آزادی کے خوبصورت ہتھیار ہیں

جو تھا نہیں ہے، جو ہے نہ ہوگا، یہی ہے اک حرفِ محرمانہ
قریب تر ہے نمود جس کی اسی کا مشتاق ہے زمانہ
جہانِ نو ہو رہا ہے پیدا، وہ عالمِ پیر مر رہا ہے
جسے فرنگی مقامروں نے بنا دیا ہے قمار خانہ

اقبال

# حرف اوّل

اب سے ہوگا ایشیا پر ایشیا والوں کا راج
دستِ محنت کو ملے گا دستِ محنت سے خراج
زندگی بدلی ہے بدلا ہے زمانے کا مزاج
پھوڑ دیں گے ہم یہ آنکھیں ہم کو مت آنکھیں دکھاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ہم نے دیکھے ہیں بہت ظلم وستم قہر و عتاب
نوچ لیں گے ہم تمھاری سلطنت کا آفتاب
ہم بھی دیں گے تم کو اب جوتے سے جوتے کا جواب
ہاں بڑے آئے کہیں کے لاٹ صاحب جاؤ جاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

لد گئے وہ دن کہ جب آقا تھے تم اور ہم غلام
ہم وہ بے حس تھے کہ تم کو جھک کے کرتے تھے سلام
آج ہم ہیں بددماغ وبدزبان و بدلگام!
سیر کا بدلہ ہے سیر اور پاؤ کا بدلہ ہے پاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ہاں کبھی تھا ایشیا مجبور و محکوم و فقیر
دوسروں کا ذکر کیا خود اپنی نظروں میں حقیر
قبر کا مردہ یہ جسمِ نو جوان و روحِ پیر
زخم خوردہ پیٹھ پر تاریک صدیوں کا دباؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ایشیا روحِ لطافت پیکرِ حسن و جمال
دھان کے کھیتوں کا سینہ ڈھاک کے پھولوں کے گال
بجلیوں کے نرم و نازک ہاتھ طوفانوں کے بال
آہن و فولاد ہے مضبوط شانوں کا گٹھاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ماؤ، استالن کا بھائی، لینن اعظم کا لال
مٹھیوں میں تتلیوں کی طرح ، روحِ ماہ و سال
نرم آنکھوں میں محبت گرم ماتھے پر جلال
اس کے کھیون ہار ہاتھ اور ایشیا والوں کی ناؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ڈالروں کے زور پر اس درجہ اترا تے ہو کیا
ہم کو اپنی توپ اپنے ٹینک دکھلاتے ہو کیا
ہائیڈروجن اور ایٹم بم سے دھمکا تے ہو کیا
ہم نہیں ڈرنے کے، جا کر اپنے بھوتوں کو ڈراؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

یہ کمینے، ملک کے غدّار، ڈالر کے غلام
جن کے منھ میں تم نے ڈالی ہے حکومت کی لگام
یہ بغل بچے، یہ پٹھو بھی نہیں آئیں گے کام
یہ تو ہیں بھاڑے کے ٹٹوان پہ مت بازی لگاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

تیوریاں بدلے ہوئے ہیں اب زمین و آسماں
بجلیاں لے کر اٹھا ہے دل کی آہوں کا دھواں
آنکھ سے آنسو کے بدلے ڈھل رہی ہیں گولیاں
بن گئے ہیں رائفل کی آنکھ اب سینے کے گھاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

دیکھتی ہیں مڑ کے صدیاں چین کی فوجوں کی شان
ہے ہمالہ کی بلندی پر بغاوت کی اٹھان
ندیوں کے دل پہ چھاپے مارقدموں کے نشان
دشمنوں کو گھیرے لیتا ہے پہاڑوں کا گھماؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ویت نامی فوج چلتی ہے کہ چلتے ہیں پہاڑ
موج سرکش ہے کہ اڑتے ہیں اچھلتے ہیں پہاڑ
انقلابی جوش ہے جیسے پگھلتے ہیں پہاڑ
چوٹیوں پر آج روشن ہیں بغاوت کے الاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

جنگلوں سے حملہ آور ہیں ملایا کے دلیر
گونجتے ہیں بادلوں کی طرح سے برما کے شیر
ہندو پاکستان جاگ اٹھے، نہیں ہے کوئی دیر
آمد آمد عدل کی، ظلم و ستم کا چل چلاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

خاک ایراں میں سلگتی ہیں دبی چنگاریاں
مصر و ترکی کی زمیں پر خون کی گلکاریاں
شام اور لبنان میں اٹھنے کی ہیں تیاریاں
وقت کی تلوار کا خم ہے کہ ابرو کا کھنچاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

بُن رہے ہیں جال مل کر آج تسبیح و جنیو
بچ کے جا سکتا نہیں دیسی بدیسی کوئی دیو
پڑ رہی ہے ہر قدم پر اک تلنگانے کی نیو
دھان اور گیہوں کے پودوں میں کمانوں کا جھکاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

آندھیوں کا زور ہے نعروں کی بوچھاروں کے ساتھ
نفرتوں کی بارشیں آنکھوں کے انگاروں کے ساتھ
موت اڑتی ہے تمھارے شاہی بمباروں کے ساتھ
اب نہیں ممکن تمھارے تاج و پرچم کا بچاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

آگ کا دریا ہے اب پورب کے سرچشموں کا تیل
بن گئی ہے آہنی زنجیر انگوروں کی بیل
شہ پہ شہ پڑتی ہے اب باقی کہاں ہے کوئی کھیل
پٹ چکے ہیں سارے مہرے شاہ وفرزیں بھی اٹھاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

تم کو کچے مال کے بدلے ملے گی ایک لات
بن گئے ہتھیار دہقانوں کے مزدوروں کے ہات
خاک کے سینے سے لاوا بن کے اب نکلے گی دھات
جان کی بازی ہے اب اس خاک کے ذرّوں کا بھاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

چل رہے ہیں وقت اور تاریخ کے کھیتوں میں ہل
پھل رہے ہیں پیڑ کی شاخوں میں تلواروں کے پھل
سانس لیتے ہی نج اٹھتے ہیں ہواؤں میں دہل
الاماں بگڑی ہوئی سرکش فضاؤں کا تناؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ایشیا ہنسیوں کا جنگل ہے تمھارے واسطے
ساحلوں کی ریت بھوبل ہے تمھارے واسطے
خون سے لبریز چھاگل ہے تمھارے واسطے
بوند پانی بھی نہ دیں گے تم کو پانی کے پیاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

تم جہاں بھی پاؤں رکھو گے زمیں ہٹ جائے گی
ظلم کی گردن ہوا کی دھار سے کٹ جائے گی
یہ فضا اک بم کے گولے کی طرح پھٹ جائے گی
سلطنت کی فکر چھوڑو خیر جانوں کی مناؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ایشیا کی خاک پر دم توڑتا ہے سامراج
ایشیا کی ٹھوکروں میں ہے ملوکیت کا تاج
ایشیا میں ایشیا کا جشن آزادی ہے آج
ایشیا کے خون میں ہے صبح مشرق کا رچاؤ
ایشیا سے بھاگ جاؤ

ایشیا کی جنگِ آزادی ہے اک دنیا کی جنگ
ہے ہمارے زخمِ دل میں سارے عالم کی امنگ
ہاں بدل جانے کو ہے اب مشرق و مغرب کا رنگ
آج سب مل کر پکارو، مل کے سب نعرے لگاؤ
'ایشیا سے بھاگ جاؤ'
'ایشیا سے بھاگ جاؤ'

## 1

یہ ایشیا کی زمین، تمدن کی کوکھ، تہذیب کا وطن ہے
یہیں پہ سورج نے آنکھ کھولی
یہیں پہ انسانیت کی پہلی سحر نے رُخ سے نقاب الٹی
یہیں سے اگلے یگوں کی شمعوں نے علم وحکمت کا نور پایا
اسی بلندی سے وید نے زمزمے سنائے
یہیں سے گوتم نے آدمی کی سمانتا کا سبق پڑھایا
یہیں سے مزدوک نے عدل وانصاف اور محبت کے راگ چھیڑے
ہماری تاریخ کی ہوائیں مسیح کے بول سن چکی ہیں
ہمارا سورج محمد مصطفیٰ کے سر پر چمک چکا ہے
اار اب ہمارے قدیم آکاش کے ستارے
قدیم آنکھوں سے ماؤ کی سرخ فوج کی شان دیکھتے ہیں

یہ خاک وہ خاک ہے کہ جس نے
سنہرے گیہوں کے موتیوں کو جنم دیا ہے
یہ خاک اتنی قدیم جتنی قدیم انساں کی داستانیں
عظیم اتنی عظیم جتنی ہمالیہ کی بلندیاں ہیں
حسین اتنی حسین جتنی حسیں اجنتا کی اپسرائیں
یہ اپنی فیاضیوں میں دریائے نیل وگنگا سے کم نہیں ہے۔
یہ گود بچوں سے اور پھولوں سے اور پھلوں سے بھری ہوئی ہے

حقیر کپلنگ مر چکا ہے
ذلیل چرچل کو شاید اب تک خبر نہیں ہے

ہمارے کھنڈروں کے نام بھی ان کی ساری بکواس سے گراں ہیں
ہمارا ورثہ مہنجد اڑو سے لے کے دیوارِ چین تک ہے
ہماری تاریخ تاج اور سیکری سے اہرامِ مصر تک ہے
ہمیں روایات کے خزانوں سے بابل و نینوا ملے ہیں
فصاحتوں نے ہمارے بچپن کے ہونٹ چومے
بلاغتوں نے بڑی حسیں لوریاں سنائیں
زبان کھولی تو وید، انجیل اور قرآن بن کے بولے
ہماری تخئیل آسمانوں کی ان بلندیوں کو چھو چکی ہے
جہاں سے فردوسی اور سعدی
نظامی، خیام اور حافظ کے چاند سورج چمک رہے ہیں
بلندیاں جن پہ والمیک اور پاک تلسی
کبیر اور سور حکمراں ہیں
انہیں فضاؤں کی بجلیاں ہیں
جو ساز اقبال اور ٹیگور کے ترانوں میں گونجتی ہیں
جو آج ناظم کی شاعری میں تڑپ اٹھی ہیں
جو لوہ سوں کی کہانی بن کر چمک رہی ہیں

## 2

گزر چکے ہیں ہمارے سر سے
ہزاروں سالوں کے تند طوفاں
مصیبتوں کی ہوائیں، ظلم و ستم کی آندھی
نہ جانے کتنے سکندروں کی وبائیں آئیں
ہزاروں چنگیز اور تیمور، ان گنت مانچو لٹیرے

کہیں سے راون کہیں سے ضحاک اپنے بالوں میں سانپ گوندھے
کہیں سے ہسٹنگز اور کلایو
کہیں سے ڈائر کہیں سے ویول
کوئی سیہ فام کوئی بھورا کوئی سفید اور کوئی پیلا
غرض ہر اک رنگ روپ کے بھیڑیوں کے حملے
مگر یہ انمول خاک پھر بھی حسین پھر بھی جواں رہی ہے
ہمارے رستم ہمارے ارجن مرے نہیں ہیں
وہ جنگلوں اور پہاڑیوں میں زمین پر کاشت کر رہے ہیں
ہمارے فرہاد اب بھی تیشے چلا رہے ہیں
جوان لیلیٰ حسین شیریں، کنواری ہیر اب بھی گا رہی ہے
شکنتلائیں گھنیرے پیڑوں کے سبز سایوں میں ناچتی ہیں
ہم ایشیا کے عوام سورج کی طرح ڈوبے ہیں اور ابھرے
دکھوں کی اگنی میں تپ کے نکھرے
ہماری آنکھوں کے آگے کتنی سیاہ صدیوں کی سانس ٹوٹی
نہ جانے کتنے بلند پرچم
ہماری نظروں کے سامنے سرنگوں ہوئے ہیں
الٹتے دیکھے ہیں تخت ہم نے
اجڑتے دیکھے ہیں تاج ہم نے
ہمارے سینے سے جانے کتنی رتھوں کے پہیے گزر چکے ہیں
مگر ہم اس بھوک، قتل، افلاس کے اندھیرے
حوادثِ روزگار کے تند و تیز شعلوں میں ان گنت جنم لے چکے ہیں
ہم اپنی دھرتی کی کوکھ میں بیج کی طرح دفن ہو گئے ہیں
مگر نئی صبح کی ہوا میں
بہار کی کونپلوں میں تبدیل ہو کے باہر نکل پڑے ہیں

3

ہماری نظروں میں اگلے وقتوں کے سورماؤں کے کارنامے
گئے یگوں کے افق دھندلکوں میں چھپ چکے ہیں
مگر پرانے دلاوروں کے پرانے چہرے
پرانے گرد و غبار میں جگمگا رہے ہیں
یہ بے دلی کیوں
جھجک یہ کیسی
چل اے بغاوت کے عزم اے انقلاب کے آہنی ارادے
اٹھا دے اے ذوق و شوق تاریخ کے رخ آتشیں سے بڑھ کر
ہمارے بیتے ہوئے مہ و سال کی نقابیں
پڑی وہ ڈنکوں پہ چوٹ گونجیں وہ ڈھول کی دل نشیں صدائیں
ہزاروں تلواریں بجلیوں کی طرح سے چمکیں
ہوا میں جھنکاریں ناچ اٹھیں
زمین کی کانپتی ہتھیلی پہ زلزلے، زلزلوں کی لہریں
وہ دیکھو الموط کی پہاڑی ابھر رہی ہے
بلند چوٹی پہ ایک دھوبی
وہ المقنع کہ جس کی نظروں کی آگ کے سرخ سرخ بادل
فضا میں پھیلے، زمیں پہ برسے
اور اپنی بیتاب بجلیوں سے
دیارِ بغداد میں خلافت کی شان و شوکت کو پھونک ڈالا
عرب کے جاگیردارو بھاگو
تمھاری فوجوں کی چھاونی پر کسان لشکر جھپٹ پڑے ہیں
زمین اور آسمان شعلوں کے پیرہن میں لرز رہے ہیں

دیارِ خیبر

جہاں پٹھانوں کے غول حلقوں میں ناچتے ہیں
اور ان کے ڈھولک کی تھاپ اورنگ زیب کا دل ہلا رہی ہے
یہ آفریدی ہیں اور وہ مہمند اور وہ شنواریوں کا جرگہ
دلوں پہ 'غیرت' کا لفظ دوشیزہ انگلیوں سے لکھا ہوا ہے
رباب کے تار 'جنگ اور جنگ' کہہ رہے ہیں
غرور کر اے زمینِ خیبر
کہ تجھ کو خوشحال خاں خٹک سا عظیم شاعر عطا ہوا ہے
وہ جس کا ہر لفظ اک رجز ہے
زمانہ اورنگ زیب کو بھولتا چلا جا رہا ہے لیکن
وہ باغی شاعر، وہ رہنما، سورما سپاہی
ہر اک صدی میں اٹھے گا خیبر کی وادیوں سے
نئی جوانی، نئی بہاروں، نئی تمنا کا ساز لے کر
جہاں کہیں دل کا درد ہوگا
جہاں کہیں غم کا سوز ہوگا
جہاں کہیں حق کی بات ہوگی
کسی بھی گوشے میں ایشیا کے
جہاں کہیں آدمی بغاوت کا نام لے گا
وہیں سے خوشحال خاں کی للکار گونج اٹھے گی اس کے نغمے برس پڑیں گے

'سہادری'[1] کے پہاڑ انگڑائی لے کے جاگے
زمیں کا نقارہ تیز گھوڑوں کی تیز ٹاپوں سے بج رہا ہے
پہاڑ کی چوٹیوں نے توپوں کا روپ دھارا

---

1. 'سہادری' جنوبی ہندستان کے ان پہاڑوں کا نام ہے جنھیں مغربی گھاٹ کہتے ہیں۔

چٹانیں قلعوں کی شکل لے کر اُبھر رہی ہیں
کسان سیلاب بن کے ابلے
پلٹ گئیں وقت کی ہوائیں
الٹ گئیں سلطنت کی چالیں
مغل شہنشاہیت کو مہراشٹر کے شیروں نے نوچ ڈالا!!
کسان، سیلاب، زلزلے، شور، گیت، نعرے
بغاوتیں، انقلاب، شورش
غدر کا ہیجان، ٹائپنگ کا ابال اور باکسر کا طوفاں
یہ سب دلیروں کے مورچے ہیں
جو تیس صدیوں سے لڑ رہے ہیں
یہ سر ہمیشہ کٹا کئے ہیں
یہ دل ہمیشہ لٹا کئے ہیں
یہ ہات گلتے رہے ہیں لوہے کی ہتھکڑی میں
یہ پیر سڑتے رہے ہیں زنداں کی بیڑیوں میں
زمیں امر ہے
ہوا امر ہے
امر ہے پانی
امر عوامی دلوں کی دھڑکن
جو آسماں کی کھلی فضاؤں کو ڈھونڈھتی ہے
عوام مرتے نہیں ہیں سو جاتے ہیں زمیں کی سنہری مٹی میں منھ چھپا کر
وہ اپنی ماں کی سنہری چھاتی سے سر لگا کر بہار کے خواب دیکھتے ہیں
زمین سے کونپلیں نکلتی ہیں اور آکاش سے ستارے
ہوا سے بادل، گرج سے بجلی
عوام کی راکھ سے بغاوت کی آگ، شعلوں سے زندگانی

سلام لو ایشیا کے نو خیز سرفروشوں کی نسلوں کا
پرانے وقتوں کے سورماؤ
گئے یگوں کے افق سے کیوں دیکھتے ہو ہم کو
ہم آخری جنگ لڑ رہے ہیں
تمھارے ہاتھوں میں ابتدا تھی
ہمارے ہاتھوں میں انتہا ہے
تمھارے ہاتھوں میں صرف تلوار تھی ہمارے
جوان ہاتھوں میں وقت و تاریخ کی عناں ہے
ہمیں تم اپنے جوان شانوں کا زور اپنی
عقابی آنکھوں کا نور دے دو
بلند ماتھے کی روشنی لے کے آؤ۔۔۔آؤ
کہ ہم کو معلوم ہے تم اب تک مرے نہیں ہو
کہ تم کبھی بھی نہیں مرو گے
کسان فوجوں کو اپنی الموط کی پہاڑی سے لے کے اترو
حجاز اور نجد کے خوش آواز سار بانوں کو ساتھ لاؤ
ہمارے لشکر میں آؤ تم اپنے زرد دریا کے ساحلوں سے
ہمارے لشکر میں آؤ کوہاٹ اور خیبر کی وادیوں سے
ہمارے لشکر میں آؤ میرٹھ کے اور دہلی کے مورچوں سے
سہادری کی چٹانیں اک بار پھر ترانوں سے گونج اٹھیں
اور ایشیا کے پٹھاریوں کسمسا کے جاگیں
کہ سامراجی دلوں کے پتھر
لرز اٹھیں ان کی راجدھانی کے سارے ایوان کانپ جائیں

## 4

یہ ایشیا کی زمیں، تمدن کی کوکھ، تہذیب کا وطن ہے
بڑھائیں اپنی دکان پچھم کے سارے سوداگروں سے کہہ دو
ہمارے بازار میں لہو کا ذلیل بیوپار بند کردیں
کہ ان کی توپوں کے اور مشینوں کے واسطے اب
یہاں سے ایندھن نہیں ملے گا
وہ دن گئے جب
یہاں تم آئے تھے اپنی ہستی کی کوڑھ لے کر
زبان پر بائیبل تھی، ہاتھوں میں رائفل تھی
لبوں پہ میٹھی ہنسی، نگاہوں میں زہر، دل میں ہوس پرستی
شکاری کتوں کی طرح تم ایشیا کی بستی میں پھر رہے تھے
تمھاری رفتار جس طرح توپ کے دھماکے
تمھاری ہر سانس جیسے بارود اڑ رہی ہو
تمھاری پرچھائیاں وباؤں کی پیرہن تھیں
ہماری آنکھوں نے پھر یہ دیکھا
کہ بادلوں سے ہمارے آنسو برس رہے تھے
زمین سے قحط، کھیت سے بھوک اُگ رہی تھی
زبان گونگی تھی، انگلیاں سن تھیں، سانس بے کیف و بے ترنم
ستار کے تار ہچکیوں میں الجھ گئے تھے

وہ دن گئے جب
تمھارے ہاتھوں میں رائفل تھی ہمارے ہاتھوں میں کچھ نہیں تھا
ہتھیلیوں پر فقط لکیروں کو گن رہے تھے
شمار کرتے تھے آنسوؤں کا

مگر غلامی نے سیکڑوں سال کی غلامی نے ہم کو لڑنا سکھا دیا ہے
ہمارے اشکوں کی بوندیں اب گولیوں میں تبدیل ہو گئی ہیں
تم اس پہ پھولے ہوئے ہو شاید
کہ چیانگ کی طرح چند بھاڑے کے بوڑھے ٹٹو
تمھاری رتھ میں جُتے ہوئے ہیں
کچھ اندھی آنکھوں کے بَیل اب بھی تمھارا کولھو چلا رہے ہیں
تمھاری جنگی مشین میں کچھ
گھسے ہوئے ٹوٹے پھوٹے پُرزے لگے ہوئے ہیں
مگر یہ غدّار کب تلک کام آسکیں گے
کہ ایشیا اپنی نیند کی کیفیت سے بیدار ہو چکا ہے
ہماری آنکھوں میں آگ —— تیور میں بجلیاں ہیں
ہمارے سینے میں درد، ہونٹوں پہ گیت، ہاتھوں میں رائفل ہے

## 5

یہ کیا کہا؟ تم نے ہم کو تہذیب اور تمدّن کا نور بخشا؟
بجا ہے، سچ ہے
جو تم نہ ہوتے تو ہم نہ ہوتے
نہیں کوئی شک نہیں کہ تم نے زمین پر پٹریاں بچھائیں
یہ دوسری بات ہے کہ ان پٹریوں کے نیچے
ہماری لاشیں بچھی ہوئی تھیں
ہمارے ساحل پہ تم دخانی جہاز لائے
اور ان میں توپیں کھڑی ہوئی تھیں
ہمارے ساحل کے زخم اب بھی

لہو کے ہونٹوں سے درد اور ٹیس کی زباں سے
تمھاری 'تہذیب' کے قصیدے سنا رہے ہیں
جہاز جو تین سو برس سے
سمندروں پہ رواں دواں ہیں
ہمارے آنسو کروڑوں آنکھوں سے ان جہازوں کو دیکھتے ہیں
جو صبح کے نور سے نکل کر اندھیری راتوں میں چھپ رہے ہیں
وہ جن میں ہندستان، برما،
ملایا، ایران، شام، لبنان، مصر، ترکی، یمن کی محنت لدی ہوئی ہے
الائچی، زعفران، انگور، کوئلہ، ٹین، تیل، چاول،
ربر، ستارے، کپاس اور چاندنی بھری ہے
ہمیں مشینوں سے اور ملوں سے گلہ نہیں ہے
کہ جن پہ انسانیت کی عظمت کی سرخ مہریں لگی ہوئی ہیں
گلہ ہے تم سے
جنھوں نے انسان کی بنائی ہوئی مشینوں کو ڈائنوں میں بدل دیا ہے
گلہ ہے اُن سے
جنھوں نے پہیوں میں ہڈیاں ایشیا کی پیسیں
اور ان سے چاندی کے ڈھیر، سونے کے اونچے اونچے پہاڑ اٹھائے
گلا ہے ان بوڑھے سودخواروں سے، نفع بازوں کی سازشوں سے
جو سوت کے تار اور ریشم کی ڈھیریوں کو
نگل کے اپنے بدن کی چربی بڑھا رہے ہیں
مگر یہاں ہم
کسان، مزدور، موچی، دھوبی
کمہار، لوہار، اپنے جسموں پہ کھال پہنے ہوئے کھڑے ہیں
ہماری آنکھیں جلے ہوئے خواب —— اور چہرے
اڑے ہوئے رنگ ہیں —— دلوں میں

سنہری آشاؤں کی چتائیں بھڑک رہی ہیں

تمھاری 'تہذیب' سڑ چکی ہے
تمھارا جھوٹا 'تمدن' اپنے فریب میں دفن ہو گیا ہے
تمھاری 'تہذیب' قتل و غارت کا ناچ کوڑوں کی راگنی ہے
تمھاری 'تہذیب' بھوکے بچوں کی موت ماؤں کی خودکشی ہے
تمھاری 'تہذیب' دست کاروں کے خون آلود ہاتھ ٹوٹے ہوئے انگوٹھے
تمھاری 'تہذیب' دھوپ میں سوکھتی ہوئی ہڈیوں کے پربت
تمھاری 'تہذیب' قصرِ پیکنگ کی جلی راکھ کا ہے غازہ
تمھاری 'تہذیب' زہرِ افیون کی تجارت
تمھاری 'تہذیب' ایشیا کی زمیں پہ ننگی پڑی ہوئی ہے

## 6

یہ ایشیا کی زمیں، تمدن کی کوکھ، تہذیب کا وطن ہے
جبیں پہ تاروں کا تاج، پیروں میں جھاگ کی جھانجھنوں کا نغمہ
زمین ——— صدیوں پرانا چہرہ
کسان ——— صدیوں پرانے ہاتھوں میں اپنے لکڑی کے ہل سنبھالے
غریب مزدور، جلتی آنکھیں
اچاٹ نیندوں کی تلخ راتیں
تھکے ہوئے ہاتھ، بھاپ کا زور، گرم فولاد کی گرانی
جہاز، ملاح، گیت، طوفاں
کمہار، لوہار، چاک، برتن
گوالنیں دودھ میں نہائی

الاؤ کے گرد بوڑھے افسانہ گو، کہانی
جوان ماؤں کی گود میں ننھے ننھے بچوں کے بھولے چہرے
لہلہاتے میدان، گائیں بھینسیں
فضاؤں میں بانسری کا لہرا
ہری بھری کھیتیوں میں شیشے کی چوڑیاں کھنکنا رہی ہیں
اداس صحرا پیمبروں کی طرح سے خاموش اور گمبھیر
کھجور کے پیڑ بال کھولے
دفوں کی آواز ڈھولکوں کی گمک
سمندر کے قہقہے ناریل کے پیڑوں کی سرد آہیں۔
ستار کے تار سے برستے ہوئے ستارے
انار کے پھول، آم کا بور، سیب و بادام کے شگوفے
کوٹھار، کھلیان، کھاد کے ڈھیر، کنواری پگڈنڈیوں کی گردش
بلند بانسوں کے جھنڈ ہنستی دھنک کے نیچے
گھنیرے جنگل
پٹھار، میدان، ریگزاروں کے گرم سینے
گپھائیں جنت کی طرح ٹھنڈی
سمندروں میں کنول کے پھولوں کی طرح رکھے ہوئے جزیرے
چمکتے مونگوں کی مسکراہٹ
وہ سیپیوں کی ہنسی، وہ سنتھال لڑکیوں کے چمکتے دانتوں کی طرح موتی
وہ مچھلیاں گوشت سے بھری کشتیاں جو پگھلی
سفید چاندی میں تیرتی ہیں
وہ لمبی لمبی حسین ندیاں
جو اپنی موجوں سے ساحلوں کے لرزتے ہونٹوں کو چومتی ہیں
دلہن بنی وادیوں کی نازک کمر میں جھرنوں کے نرم حلقے
پہاڑیوں کی ہتھیلیوں پر دھرے ہوئے نیلگوں کٹورے

ستارے منھ دیکھتے ہیں جھیلوں کے آئینے میں
ہمالیہ کے گلے میں گنگا کی اور جمنا کی شوخ بانہیں
پہاڑ کی آندھیوں کے ہاتھوں پہ برف کے نیلگوں دوپٹے
بلندیوں پر خفیف سا ارتعاش ہلکی سی راگنی کا
ہوا کے پیروں میں جیسے گھنگھرو بندھے ہوئے ہوں
کہیں فضاؤں میں برف کے پھول اڑ رہے ہیں
کہیں جوالامکھی کے شعلے
جو اپنی زلفوں کو پگھلے لاوے کی کنگھیوں سے سنوارتے ہیں
ہواؤں کی انگلیاں چناروں کے سرخ بالوں میں رینگتی ہیں

یہ ایشیا ہے، جوان، شاداب اور دھنوان ایشیا ہے
کہ جس کے نردھن غریب بچوں کو بھوک کے ناگ ڈس رہے ہیں
وہ ہونٹ جو ماں کے دودھ کے بعد پھر نہ واقف ہوئے کبھی دودھ کے مزے سے
زبانیں ایسی جنھوں نے چکھا نہیں ہے گیہوں کی روٹیوں کو
وہ پیٹھ جس نے سفید کپڑا چھوا نہیں ہے
وہ انگلیاں جو کتاب سے مس نہیں ہوئیں ہیں
وہ پیر جو بوٹ اور سلیپر کی شکل پہچانتے نہیں ہیں
وہ سر جو تکیوں کی نرم لذت سے بے خبر ہیں
وہ پیٹ جو بھوک ہی کو بھوجن سمجھ رہے ہیں
یہ نادرِ روزگار انساں
تمھیں فقط ایشیا کی جنت ہی میں ملیں گے
جو تین سو سال کے 'تمدن' کے بعد بھی 'جانور' رہے ہیں

کہاں ہو 'تہذیب اور تمدن' کی روشنی لے کے آنے والو
تمھاری 'تہذیب' کی نمائش ہے ایشیا میں

نظر اٹھاؤ قریب آؤ
یہ کوڑھیوں کے ہجوم دیکھو
یہ دیکھو ہیضے کی قے، یہ طاعون کی ہے گلٹی
یہ جسم کے آبلے ہیں اس آتشک کی گرمی
جو ایشیا کو ملی ہے انعام سامراجی سپاہیوں سے
یہ پیٹھ دیکھو، یہ پیٹھ کتنی حسیں ہے جس پر
تمھارے کوڑوں کی بدّیاں ہیں
یہ پھانسیوں پر لٹکتی لاشیں
یہ جیل خانوں میں بند انساں
یہ دل جو ہیں گولیوں سے چھلنی
یہ آنکھ کی پتلیاں جو خون اور پیپ کی طرح بہہ رہی ہیں
یہ چہرے کھنڈروں کی طرح ٹوٹے
یہ ہاتھ لکڑی کی طرح سوکھے
یہ پیٹ مٹکوں کی طرح پھولے
یہ مفلسی اور یہ جہالت کی رات، بے چاند بے ستارہ
یہ بھوک، یہ بے بسی، یہ نفرت
یہ ہنستے پھوڑے
لٹکتے گھینگے
دہکتے ناسور، چیختے زخم، رینگتے جسم، جیسے کیڑے
تمھاری سرمایہ دار 'تہذیب' کی کہانی سنا رہے ہیں
بلاؤ اپنے مصوّروں اور بت گروں کو
کہیں زمانے میں اس قدر دردناک چہرے نہیں ملیں گے
تمھاری شاہانہ یادگاروں سے ایشیا کا
ہر ایک کونا بھرا ہوا ہے
کہیں یہ محراب فتح باندھی

کہیں رعونت کی لاٹ اٹھائی
کہیں پہ کانسے کے گھوڑے ڈھالے
کہیں پہ پتھر کے بت بنائے
مگر یہ 'تہذیب اور تمدن' کی یادگاریں کہیں نہیں ہیں
بلاؤ اپنے مصوروں اور بت گروں کو
کہو کہ ان دردناک چہروں سے ایک اک میوزیم سجا دیں
تمھارے کارِ عظیم کو جاوداں بنا دیں

## 7

زمین سونا اگل رہی ہے
فضائیں چاندی لٹا رہی ہیں
ہواؤں میں دھن برس رہا ہے
سمندر اپنی تڑپتی موجوں کے جال میں مچھلیاں لیے ہیں
زمیں کے سینے پہ پیڑ، پھل، پھول، ناج، گہرائیوں میں کانیں
سیاہ ہیرے، سیہ خزانے
ہر ایک پتھر کی رگ میں دوڑا ہوا ہے لوہا
ہر اک پرت کوئلے سے پر ہے
وہ تیل کے سربہ مہر چشمے
کہ جن میں پگھلے ہوئے ستارے بھرے ہوئے ہیں
سنہرے شہتوت کے درختوں پہ نرم ریشم کے ننھے کیڑے
چمکتے پیراہنوں دمکتے ہوئے دوپٹوں کے خواب پر خواب بن رہے ہیں
حسین پرزور آبشاروں میں بجلیوں کی تڑپ نہاں ہے
ہر اک ندی اپنے جل کی شکتی سے بہہ رہی ہے

ماؤں کے پیاروں کی بارشیں، چڑیوں کے نغمے
دہکتے انجن سے جیتے جو آندھیوں کے آگے تنے ہوئے ہیں
کہ ہمارے وطن کی دولت
ندی کے پانی کی طرح بہتی
کسی بھیانک سیہ سمندر میں جا رہی ہے
اداس ہے ایشیا کا چہرہ
بدن ہے ننگا
سڑک پہ بچوں کی ننھی ننھی
ہتھیلیاں ٹھیکروں کی صورت پڑی ہوئی ہیں
ہزاروں بیکار ہاتھ شانوں پہ جھولتے ہیں

یہ کیسی سفاک انگلیاں ہیں
جنھوں نے لوہے کے تیز ناخون[1] پہلوؤں میں گڑا دیئے ہیں
یہ انگلیاں جو ہمارے جسموں سے کھال بھی کھینچے لے رہی ہیں
یہ لمبی لمبی سفید ٹلیاں
سفید جونکیں
ہزاروں میلوں کے فاصلے سے
ہمارے جسموں سے خون دھرتی سے تیل کو چوسے لے رہی ہیں
زمین پر پائپوں کی صورت بچھی ہوئی ہیں
سمندروں میں پڑی ہوئی ہیں
ہوا میں تانبے کے تار بن کر کھنچی ہوئی ہیں
ہماری گردن پہ نیلے نیلے نشان دیکھو
یہ بوڑھے بنکوں کی انگلیاں ہیں
جو سامراجی انگوٹھیوں سے سجی ہوئی ہیں

---

1. عام طور سے لوگ 'ناخن' کو ناخون بولتے ہیں۔

## 8

کہاں ہو اے ایشیا کے بیٹو
تمھاری ماں اور اس کی عصمت
فرانس، امریکہ اور برطانیہ کے چکلوں میں بک رہی ہے
تمھارے اپنے ہی گھر کے غدار آج دلّال بن گئے ہیں
وہ کون ہیں؟ ان کے نام کیا ہیں؟
وہ ملک وقوم ووطن کے غدار عہد حاضر کے میر جعفر
میں ان کمینوں کے گندے ناموں کی گندی فہرست کیوں گناؤں
کہ تم خوب جانتے ہو
میں ان کے ناپاک نام سے اپنے فن کی پاکیزگی کو ناپاک کیوں کروں گا
انھوں نے بھی ایشیا کی ٹھنڈی ہواؤں میں پرورش ہے پائی
ہمارے چشموں کا میٹھا پانی پیا ہے چولھوں کی آگ تاپی
مگر یہ کتے
خود اپنے گھر کے نمک سے، روٹی سے اور پانی سے منحرف ہیں
یہ سانپ ہیں سانپ ان کے منھ میں
ہماری گایوں کا دودھ بس بن کے رہ گیا ہے
یہ بھیڑیے بستیوں میں پھرتے ہیں سوٹ اور وردیاں پہن کر
ذلیل اور بے حیا کہ جے چند و میر جعفر کو شرم آئے
حقیر اتنے کہ گندے گھورے بھی دیکھ کر ناک بھوں چڑھائیں
یہ ایشیا کے پرانے ناپاک دشمنوں سے ملے ہوئے ہیں

تمھیں خبر بھی ہے تم غلاموں کی طرح سے بیچے جا چکے ہو

تمھاری قیمت ہے چند ڈالر
تمھیں خبر بھی نہیں مگر تم
ہزار پہیوں کی جنگی رتھ میں جتے ہوئے ہو
تمھارا لوہا پگھل کے موت اور جنگ کا روپ ڈھالتا ہے
روئی کے گالوں سے کارتوسوں کے منھ بھرے ہیں
تمھارے گھر بے چراغ، اندھی ہے لوڈیوں کی
مگر تمھارے شریف نیتا
شریف آقا
تمھاری دھرتی کا تیل لوہے کے ہاتھیوں کو پلا رہے ہیں
تمھارے منھ اور پیٹ گیہوں کی روٹیوں کو ترس رہے ہیں
مگر تمھارے سنہرے گیہوں کا چاندی جیسا سفید آٹا
سیاہ بارود بن گیا ہے
ہواؤں کے گیت بم کے گولوں میں دب گئے ہیں
سمندروں کی حسین نیلائیوں پہ جنگی جہاز اپنی
سیاہ پرچھائیوں کی چادر بچھا رہے ہیں
نظر اٹھاؤ
فضا میں شعلوں کا جال پھیلا ہوا ہے دیکھو
زبان کھولو
اور اپنے نیتاؤں، دیسی آقاؤں سے یہ پوچھو
اگر تم آزاد ہو تو پھر کیوں بندھے ہو لندن کے اصطبل میں؟
اگر تم آزاد ہو تو نیویارک اور پیرس کے گندے گھوروں پہ کیوں پڑے ہو؟
ہماری دھرتی پہ آخر امریکی اور انگریزی لشکروں کے پڑاؤ کیوں ہیں؟
یہ ایشیا کے عوام پر ظلم و جبر کیوں ہے؟
یہ جنگ کس کے خلاف ہے؟ کون لڑ رہا ہے؟
یہ سامراجی نگاہیں کس سمت اُٹھ رہی ہیں

اُدھر جدھر زندگی تھرکتی ہے نو بہاروں کے پیرہن میں
جہاں غلامی کا غم نہیں انکھڑیوں میں اشکوں کا نم نہیں ہے
جہاں یہ ظلم و ستم نہیں ہے
جہاں لڑائی کی کوئی تیاریاں نہیں ہیں
جہاں یہ بمباریاں نہیں ہیں
فقط ستارے ہیں چاندنی ہے
سرور ہے، رقص ہے، بہاریں ہیں، زندگی ہے
وہ سوویت یونین حسین و جمیل رنگوں کی مسکراہٹ
جو سارے مشرق کو اپنے رنگیں دھنک کی آغوش میں لیے ہے
طویل مضبوط، جیسے لینن کا ہاتھ جو ایشیا کے سر پر دھرا ہوا ہے

وہ سوویت جس نے اپنے دامن سے ساری دنیا کے اشک پونچھے
بلکتے ہونٹوں سسکتی آنکھوں کو مسکرانے کا گر سکھایا
وہ سوویت جس نے قتل و غارت گری کی رسمِ کہن اٹھا دی
نظامِ ظلم و ستم مٹا کر نجات کا راستہ دکھایا
بڑی محبت کے ساتھ جوڑا کروڑوں ٹوٹے ہوئے دلوں کو
کروڑوں ٹوٹے ہوئے دلوں سے نئے جہاں کا محل اٹھایا
وہ جس نے محکومیت کی صدیوں پرانی زنجیر توڑ ڈالی
وہ جس نے اک جنبشِ نظر میں بدل دی انسانیت کی کایا
جواں ہتھوڑوں کی ضرب کاری نے سونے چاندی کے تاج کچلے
جھکا دیا بادشاہ زادوں کا سر، غلاموں کا سر اٹھایا
وہ جس نے محنت کے ہاتھ کو اور روٹیوں کو وقار بخشا
وہ جس نے دستِ طلب کی مظلومیت کو حسنِ طلب سکھایا
وہ جس نے شانہ جھنجھوڑ کر ایشیا کو بیدار کر دیا ہے

پرانے مُردوں کے دل میں بھی زندگی کی تحریک کو جگایا
وہ سویت جس نے مختلف نسل ورنگ قوموں کی یونین سے
نئی تمنا کا ساز چھیڑا، نئی محبت کا راگ گایا
ذلیل جنگوں کے مورچے ڈھاکے ساری انسانیت کی خاطر
وقارِ انساں کے روح و دل کا حسین ترمورچہ بنایا
وہ جس نے قابو میں کر کے دریاؤں اور ہواؤں کی سرکشی کو
اجاڑ بے رنگیوں کو رنگِ بہار کا پیرہن پہنایا
اٹھا لیا مسکرا کے آکاش سے دھنک کا ربابِ رنگیں
فلک سے نیچے زمیں پہ جنت کے خواب رنگیں کو کھینچ لایا
جبیں پہ لینن کا سرخ سورج، لبوں پہ استالنی تبسم
وہ سویت جس کے سر کے اوپر ہے روحِ امن و اماں کا سایا

یہ وہ ستارہ ہے جس کی بیباک روشنی میں
ہم ایشیا کے عوام اپنی حسین منزل کو دیکھتے ہیں
جو آنکھ اس حسن کو حقارت سے دیکھنے کے لیے اٹھے گی
ہم اس کی نظروں کو چھین لیں گے
جو ہاتھ اس جگمگاتے تارے کو توڑنے کے لیے بڑھے گا
ہم اس کو شانوں سے کاٹ دیں گے
جو پیر اس سرزمیں کی جانب اکڑ اکڑ کر چلیں گے وہ پیر توڑ دیں گے
اگر کسی کی زبان اس کے خلاف اک لفظ بھی کہے گی
ہم ایسی کالی زبان گدی سے کھینچ لیں گے
یہ سویت یونین، محبت کی ناؤ، انسانیت کا لنگر
ہماری قوت، ہماری حکمت، ہمارا ساتھی، ہمارا رہبر

کہو کہ ہم نفع خوریوں کے لیے رگوں کا لہو نہ دیں گے

کہو کہ ہم زہر گھولنے کے لیے دلوں کے سبو نہ دیں گے
کہو لڑائی کے راکھشس کو ہم اپنے بچوں کے سر نہ دیں گے
کہو کہ شعلوں کی ناگنوں کو ہم اپنے آباد گھر نہ دیں گے
کہو کہ یہ ایشیا کی بستی ہے ٹینک کا راستہ نہیں ہے
اڑیں گے جس میں تمھارے بمبار اب یہ ایسی ہوا نہیں ہے
تمھیں گزرنا پڑے گا ہر گام پر تلنگانے کی زمیں سے
تمھارے سر پر پہاڑ برسیں کے چھاپا ماروں کی آستیں سے
تمھاری راہوں کو چین اور ویتنام کے شیر روک لیں گے
تمھاری فوجوں کو کوریا کے عوام دوزخ میں جھونک دیں گے
بھنور کے حلقے تمھارے پیروں میں اپنی زنجیر ڈال دیں گے
ہواؤں کے ہاتھ تم کو نیلی فضا سے اوپر اچھال دیں گے
ہم آج بیدار ہو چکے ہیں تمھیں ابھی تک خبر نہیں ہے؟
یہ بم کے گولے اُگے ہوئے ہیں ہمارے کاندھوں پہ سر نہیں ہے
ڈرو ہماری دہکتی آنکھوں سے آگ کی جن میں ندّیاں ہیں
ڈرو ہمارے تڑپتے ہاتھوں سے جن کی جنبش میں بجلیاں ہیں
ڈرو کہ ہم اک جہانِ نو کی زمیں پہ تعمیر کر رہے ہیں
ڈرو کہ ہم خونِ دل سے خوابوں میں رنگ تعبیر بھر رہے ہیں

## 9

اٹھو اٹھو ایشیا کے بیٹو
پہاڑ کی چوٹیوں سے اترو
زمیں کی گہرائیوں سے نکلو
ملوں کے پہیوں کو چھوڑ کر اس سڑک پہ آؤ

جہاں مَیں اک سرخ رنگ جھنڈے کے ٹھنڈے سائے میں گا رہا ہوں
ملوں کے بھونپو کو چیخنے دو
جہاز و انجن کی سیٹیاں بج رہی ہیں، بجنے بھی دو، کہ یہ وقتِ سرکشی ہے
جھپٹ پڑو وادیوں سے طوفاں کا زور بن کر
اُبل پڑو ندیوں سے سیلاب کی طرح، کشتیوں سے اتر و
سنو، سنو، میرے بھائی، ہاں تم
جو اپنے جالوں میں سیکڑوں سال سے سمندر کی مچھلیاں بھر کے لا رہے ہو
جو سیکڑوں سال سے اسی چاک پر اسی سرخ سرخ مٹی سے سرخ برتن بنا رہے ہو
جو سیکڑوں سال سے انھیں برگدوں کے نیچے
تھکے تھکے بازوؤں سے آرا چلا رہے ہو
جو سیکڑوں سال سے اسی دکاں میں بیٹھے
سنہرے لوہے سے ہل کی پھالیں بنا رہے ہو
میں تم کو آواز دے رہا ہوں
سفید دھوتی سیاہ کوٹ اور سیاہ ٹوپی پہننے والے
میرے برادر، خفا نہ ہونا
میں پوچھتا ہوں تمھاری ٹوپی پہ میل کیوں ہے؟
تمھارا کوٹ اور تمھاری دھوتی پھٹی ہوئی ہے
مجھی سے شرما رہے ہو بھائی؟
جواب دو، میں تمھارا ہمدرد و آشنا ہوں
تمھاری حالت چھپی نہیں ہے
تمھاری بیٹی کے پاس اسکول کی کتابیں نہیں ہیں،
بیوی کے ہاتھ میں چوڑیاں نہیں ہیں
پرانے جوتے کی کیل تلوے میں چبھ رہی ہے

مرے جواں سال دوست حیراں کیوں ہو؟ میں اجنبی نہیں ہوں

تمھارا ساتھی ہوں اب سے سو سال پہلے تم سے
میں چین و برما میں مل چکا ہوں
تمھارے ہاتھوں میں ایک بندوق جسم پر ایک خاکی وردی
کہ جس پہ گرد و غبار کی تہہ جمی ہوئی تھی
تمھاری وردی بدل چکی ہے
مگر مرے دوست اپنا دشمن ابھی وہی ہے
وہی پرانا ذلیل، عز ائنٹ، سامراجی
تم ایشیا کے سپوت ہو، نوجواں سپاہی
کسان ماؤں کے نونہالو
میں صرف یہ کہہ رہا ہوں اپنی زمین کا احترام کرنا
وطن کی دولت، گھروں کے دروازوں کے محافظ
تم اپنی بہنوں کے خواب، بچوں کی مسکراہٹ کے پاسباں ہو

ارے یہ تم ہو؟
بتاؤ تم اب تلک کہاں تھے؟
میں تم کو ایک ایک ساحل ایک ایک پورٹ پر ڈھونڈھتا پھرا ہوں
میں تم سے شنگھائی میں ملا تھا
خبر نہیں کتنے سال گزرے
عدن کے ساحل پہ تم کھڑے تھے
تمھارا بندر سے منھ کا کپتان تم کو اکثر
خلاصی کہہ کر پکارتا تھا
پھر ایک دن تم نہ جانے کس بات پر یکا یک گرج اٹھے تھے
تم ایشیا کے طویل ساحل کی آبرو ہو
سمندروں پر نگاہ رکھنا
کہ دشمنوں کے جہاز اور ڈاکوؤں کے بیڑے

ہمارے ساحل کے آس پاس اب بھی تیرتے ہیں

مری بہن! ہاں میں تم کو پہچانتا ہوں آؤ
قریب آؤ
تمھارے ماتھے کا خون اب تک تھما نہیں ہے؟
تمھارے سینے پہ اب بھی سنگین کا نشاں ہے
مگر وہ سیسے کی گرم گولی
تمھارے پہلو کو چیر کر جو نکل گئی تھی
اسے میں ایک ایک آدمی کو دکھا رہا ہوں
یہ دیکھو میں اس کو ہاتھ میں لے کے پوچھتا ہوں
یہ گولی کس ملک میں بنی ہے؟
کہاں سے آئی ہے؟ کون لایا؟
یہی ہے امداد جو ہمیں اپنے دوست مغرب کے سامراجی حرام خوروں سے مل رہی ہے؟

اٹھو مری ماں تمھاری بیٹی مری نہیں ہے
وہ زخمی ہاتھوں میں سب سے آگے
جلوس میں ایک سرخ جھنڈا لیے کھڑی ہے
اٹھو مری ماں
تم اپنے سر کے سفید بالوں کی چاندنی سے
اندھیری راتوں میں نور بھر دو
وطن کے سینے کو جگمگا دو
تمھارے ہاتھوں کی جھرّیاں مسکرا رہی ہیں
مری شریف و غیور ماں اپنا مریمی ہاتھ اپنے بیٹوں کے سر پہ رکھ دو
ہم آخری جنگ لڑنے میداں میں جا رہے ہیں
تمھاری آنکھوں میں اشک ہاتھوں کی جھرّیاں مسکرا رہی ہیں

## 10

جہاں میں طوفان آرہا ہے

چہار اور شانسی کے غاروں سے اَن گنت آفتاب نکلے
بغاوتیں وادیوں سے نکلیں پہاڑ سے انقلاب نکلے
سپاہی بن بن کے زرد دریا کے پہلوؤں سے حباب نکلے
اور ان حبابوں کے تند طوفاں میں چین کشتی چلا رہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے

پرانی صدیوں کو نوکِ سنگین پر اٹھائے ہوئے ہیں دہقاں
دلوں سے بیتاب ہو کے باہر نکل پڑے ہیں دلوں کے ارماں
وہ فوج چلتی ہے جیسے آندھی، وہ جھنڈے اڑتے ہیں جیسے طوفاں
زمین کو زلزلوں کا مضبوط ہاتھ جھولا جھلا رہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے

سنہرے محلوں پہ گرم لوہا برس رہا ہے شرار بن کر
ہزار نقشِ قدم ابھرتے ہیں لاکھ نقش و نگار بن کر
زمین اڑتی ہے آسماں کی بلندیوں پر غبار بن کر
غبار جو اڑ کے آج نیو یارک اور لندن پہ چھا رہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے

بہت بہت شکریہ ٹرومین و مارشل کی نوازشوں کا
نکل گیا چین میں دیوالہ ہی ڈین، اچسین کی سازشوں کا
یہی ہے انجام چیانگ جیسے حرام خوروں کی کاوشوں کا
کہ نامرادی کا ہاتھ ظلم و ہوس کی گردن دبا رہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے

کہاں ہو امریکی بدمعاشو، یہ چین کا انقلاب دیکھو

تمھارا منھ ایک ہی طمانچے میں پھر گیا ہے جواب دیکھو
وہ کس طرح مسکرا رہے ہیں شہید روحوں کے خواب دیکھو
چمکتی کرنوں کی جوت پڑتی ہے ایشیا جگمگا رہا ہے
جہاں میں طوفان آ رہا ہے
پکار کر چین کہہ رہا ہے کہ ایشیا کی نجات ہوں میں
بظاہر اک ملک ہوں حقیقت میں لیکن اک کائنات ہوں میں
جو ایستالن کے دل سے نکلی وہ ماؤ کے لب کی بات ہوں میں
وہ بات جس کا حسیں فسانہ طویل ہوتا ہی جا رہا ہے
جہاں میں طوفان آ رہا ہے
یہ وہ سیاست ہے جس نے خنجر کی نوک سے بیڑیوں کو کاٹا
یہ وہ فراست اٹک گیا سامراجیوں کے گلے میں کانٹا
یہ وہ سخاوت ہے جس نے کھیتوں کو روٹیوں کی طرح سے بانٹا
یہ ہے وہ داتا جو دونوں ہاتھوں سے اپنی دولت لٹا رہا ہے
جہاں میں طوفان آ رہا ہے
اب آج پہلے پہل ہنسے ہیں غموں کے بیٹے دکھوں کے پالے
وہ انگلیاں کٹ گئیں حلق [1] سے نکال لیتی تھیں جو نوالے
پھلی کچھ اس طرح فصل اب کی کہ بھر گئے چاولوں کے پیالے
کسان کھیتوں میں ناج بوتا ہے اور موتی اُگا رہا ہے
جہاں میں طوفان آ رہا ہے
جو بند تھیں سامراجی روڑوں سے کھل گئیں آخرش وہ راہیں
لبوں سے بوسے اڑے عقیدت کے، آنکھ سے پیار کی نگاہیں
حسیں سمرقند کے گلے کا ہیں ہار، اب تاشکن کی بانہیں
بخارا بیتاب ہو کے پیکنگ کو گلے سے لگا رہا ہے

1 'حلق' کو میں نے 'حَلَق' کے وزن کے بجائے 'فلک' کے وزن پر استعمال کیا ہے کیونکہ عام بول چال میں لوگ لام کو متحرک ہی بولتے ہیں۔ اس لیے 'حَلَق'

جہاں میں طوفان آرہا ہے
لپکتا ابرونگارِ چیں کا دلوں پہ جادو چلا رہا ہے
دہکتے رنگ شفق کا پرچم لہو کی سرخی بڑھا رہا ہے
بلند جووے کا ہاتھ فتح و ظفر کا رستہ دکھا رہا ہے
ہمالیہ پر کھڑا ہے ماؤ اور ایشیا کو بلا رہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے
جہاں میں طوفان آرہا ہے

## 11

یہ شاعری شاعری نہیں ہے
رجز کی آواز، بادلوں کی گرج ہے، طوفان کی صدا ہے
کہ جس کو سن کر
پہاڑ آتے ہیں سبز ماتھوں میں برف کی کلغیاں لگائے
دھوئیں کے بالوں میں سرخ شعلوں کے ہار گوندھے
سمندر آتے ہیں جھاگ کی جھانجھنیں بجاتے
ہوائیں آتی ہیں اپنے جھونکوں کی نیلگوں گوپھنیں گھماتی
گھٹائیں آتی ہیں بجلیوں پر سوار ہو کر
پٹھار آتے ہیں اپنے کاندھوں پہ ندیوں کی کمند ڈالے
چٹانیں آتی ہیں اپنا گرزِ گراں سنبھالے
وہ جنگل آتے ہیں آندھیوں کے نشاں اڑاتے
وہ ریگ زاروں کے غول اپنے دفوں پہ گاتے
ببول آتے ہیں اپنے کانٹوں کے ہاتھ اٹھائے
درخت آتے ہیں پتیوں کی ہری ہری تالیاں بجاتے

منار آتے ہیں مندروں کے بلند ڈنکوں پہ چوٹ دیتے
زمین آتی ہے اپنی ڈھولک پہ تال دیتی
اجالے آتے ہیں گرم سورج کی ڈھال اٹھائے
اندھیرے آتے ہیں سرد تاروں کے تیر جوڑے
وہ کھیت آتے ہیں اپنے پودوں کی فوج لے کر
وہ جھاڑ جھنکاڑ اپنے سینے میں چھاپا ماروں کے دل چھپائے
شہید آتے ہیں خوں کے ہونٹوں سے گیت گاتے
سیاسی قیدی شکستِ زنداں کے خواب لے کر
کسان کنیائیں، جلتی آنکھوں میں جلتی دوزخ کے گرم شعلے
جوانیاں عارضوں کی سرخی میں رنگ و بوئے گلاب گھولے
دھڑکتے سینے شفق کے آنچل میں حسن کی بجلیاں چھپائے
ہتھیلیاں آتی ہیں حنا کے کنول جلائے
پیار آتے ہیں ہنستے ہونٹوں کے پھول لے کر
حسین مائیں بدن پہ فصلِ بہار کی کونپلیں سجائے
ہمکتے بچوں کی مٹھیاں تتلیاں دبائے
ستارے پلکوں سے نور کی کشتیوں کو کھیتے
کتابیں آتی ہیں گنگناتی
مکان آتے ہیں آہ بھرتے
کلرک آتے ہیں اپنی بغلوں میں کاغذی فائلیں دبائے
ہتھوڑے آتے ہیں جنگ بازوں کا دل ہلاتے
جہاز آتے ہیں راج ہنسوں کا روپ دھارے
وہ سگنل آتے ہیں اپنے مغرور سر اٹھائے
وہ انجن آتے ہیں بھاپ کے قہقہے لگاتے
بوائلر آتے ہیں جہنم پہ مسکراتے
وہ پہیے آتے ہیں سامراجی حرام خوروں کا سر کچلتے

کھنکتی رنگین چوڑیاں جیسے کرشن کے چکر کو گھماتی
چمکتے ٹیکے بھوؤں کی ترچھی کمان اٹھائے
وہ آنکھیں آتی ہیں جن میں اپنے غموں کا کاجل لگا ہوا ہے
وہ ہونٹ آتے ہیں جن میں کلیں ٹھکی ہوئی ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جن کو دھویا گیا ہے شبنم کے آنسوؤں سے
وہ ہاتھ آتے ہیں جو ہلوں کو چلا رہے ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جو مشینوں کو چھو رہے ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جن میں جھنڈے اُگے ہوئے ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جن پہ نظمیں لکھی ہوئی ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جو کہانی سنا رہے ہیں
وہ ہاتھ آتے ہیں جو ستارے بنا رہے ہیں
وہ ہاتھ جو بجلیوں کی گردن پکڑ رہے ہیں
جو سنگ و آہن سے اپنا پنجہ لڑا رہے ہیں
وہ ہاتھ جو ساریوں کو رنگوں کی ناند میں ڈوب دے رہے ہیں
وہ ہاتھ جو اپنی انگلیوں سے زمیں کی تقریر لکھ رہے ہیں

اب ایشیا کی زمیں پہ ہاتھوں کا ایک جنگل اُگا ہوا ہے
یہ سنگ مرمر کی، سنگ اسود کی مٹھیاں ہیں
کنول کی کلیاں، کپاس کے پھول، بم کے اور ناریل کے گولے
کہاں ہے اے نوعروس صبح بہار آجا
ہماری بیتاب مٹھیوں میں
شفق کا سیندور
چاند تاروں کے پھول
کرنوں کی سرخ افشاں بھری ہوئی ہے

## 12

ہمارے ہاتھوں میں ہاتھ دو سوویت کمیونزم کی بہارو
ہمارے ہاتھوں میں ہاتھ دو اے عوامی جمہوریت کے ہنستے ہوئے ستارو
ہمارے ہاتھوں میں ہاتھ دو یورپ اور امریکہ کے جواں بخت کامگارو
ہم ایک ہیں ایک ہو گئے ہیں
سیاہ، پیلے، سفید، بھورے
ہم ایک فصل بہار کے پھول ایک سورج کی روشنی ہیں
ہم ایک دنیا کے مختلف تار اک سمندر کے دل کی موجیں
الگ الگ پھر بھی ایک ہیں ایک ایک دھرتی کے رہنے والے
ہم ایک دھرتی کے بسنے والے ہیں ایک انسانیت کے قائل
نہ کوئی پورب ہے اور نہ پچھم
زمین سورج کا آئینہ لے کے ناچتی ہے
حیات انساں کی جیت کے گیت گا رہی ہے۔

## صفیں جما رہے ہیں ہم قدم بڑھا رہے ہیں ہم

یہ وقت، وقتِ سرکشی ہے سر اٹھا رہے ہیں ہم
یہ صبح صبحِ انقلاب گیت گا رہے ہیں ہم
نشانِ فتح آسمان پر اڑا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم
قدم بڑھاؤ راستوں کے پیچ و خم میں کچھ نہیں
گراؤ بجلیاں اب آنسوؤں کے نم میں کچھ نہیں
بس اک قدم کا فاصلہ ہے اک قدم میں کچھ نہیں

یہ منزلِ حیاتِ نو ہے مسکرا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم

ہمیں ہے فکر دامنوں کی اور نہ آستین کی
ہمارے ساتھ چل رہی ہیں گردشیں زمین کی
بدل گئیں ہمارے واسطے ہوائیں چین کی
ہوائے چین ایشیا میں اب چلا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم

رواں دواں ہیں نوجواں بغاوتوں کی چھاؤں میں
ہمارے چھاپے مار شہر شہر گاؤں گاؤں میں
لگے ہوئے ہیں بجلیوں کے پر ہمارے پاؤں میں
ہر ایک گام پر قیامتیں اٹھا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم

گذر رہے ہیں قافلے دیارِ صبح و شام سے
پہاڑ اپنا سر جھکا رہے ہیں احترام سے
دہل رہی ہے موت نو حیاتِ تیز گام سے
نقوشِ پا سے کتنے مور چے بنا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم

کہیں ہوا کے تند راہوار پر سوار ہیں
کہیں گھٹا کی گھن گرج کہیں پہ آبشار ہیں
کہیں خزاں کا روپ ہیں کہیں رخِ بہار ہیں
ہر ایک رنگ روپ میں فضا پہ چھا رہے ہیں ہم
قدم بڑھا رہے ہیں ہم

جیل میں رہ کے سردار نے اپنا اور سماجی حالات کا کڑی نگاہ سے سماجی تنقیدی تجزیہ کیا اور ایشیا کی خوبصورت سچائی ان پر موثر ہوئی اور انھوں نے اپنی طویل نظم 'ایشیا جاگ اٹھا' لکھی جو بیک وقت رزمیہ بھی ہے اور غنائیہ بھی جس میں ایپک کی مثالیت اور غنائی سندرتا ہے۔ اس نظم میں ایشیا کا سارا اجل روپ سمٹ کر سما گیا ہے اس نظم میں چار ہزار سالہ تہذیب کی تصویر ہے، یہاں کی غریبی چیتھڑے پہنے دکھائی دے رہی ہے، اس کے عوام کی بغاوت کا بے پناہ جذبہ قومی اور ملی احساسات کو سموتا ہوا ایک طوفانی سمندر میں تبدیل ہو گیا ہے، میرا خیال ہے کہ اس نظم سے ہماری اردو کی ترقی پسند شاعری اپنے سنِ بلوغ کو پہنچتی ہے، جوان ہوتی ہے اور خود سردار کی شاعری افادیت اور وجدان کی ان سربلندیوں کو چھو لیتی ہے جہاں سے عظمت کی سرحدیں شروع ہوتی ہیں۔

کرشن چندر

# پتھر کی دیوار

1953

# حرفِ اوّل

'پتھر کی دیوار' میری جیل کی نظموں کا مجموعہ ہے۔ جس میں اب میں نے بعد کی کہی ہوئی کچھ اور نظمیں بھی شامل کر لی ہیں 'ایشیا جاگ اٹھا' اور 'امن کا ستارہ' کی تینوں نظمیں اسی مجموعہ کا حصہ تھیں لیکن چونکہ اس مجموعہ کے چھپنے میں دیر ہوئی اور وہ الگ الگ کتابی شکل میں شائع ہو گئیں اس لیے میں نے الگ ہی رکھنا مناسب سمجھا۔

میں جولائی 1950 میں تقریباً ڈیڑھ سال بعد جیل سے رہا ہوا تھا اور میرا خیال تھا کہ 'پتھر کی دیوار' دو چار مہینے میں کتابی شکل اختیار کر لے گی۔ لیکن گذشتہ تین سال میں یہ کتاب مختلف ناشروں کے پاس چکر لگاتی رہی۔ اس کی کتابت کئی بار ہوئی اور ہر بار کسی نہ کسی وجہ سے طباعت رک گئی۔ آخر اب تین سال کی دیر سے یہ مجموعہ چھپ رہا ہے جس کے لیے مکتبہ شاہراہ اور اس کے مالک محمد یوسف صاحب کا شکر گذار ہوں جن کی حوصلہ مندی کے بغیر یہ ممکن نہ تھا۔ لیکن اس کی تازگی اور اہمیت اس وقت تک باقی رہے گی جب تک جبر و تشدد کا موجودہ نظام زندہ ہے اور عوام کے دلوں میں اس کو تبدیل کر دینے کی ہمت اور ایک نئے، بہتر اور خوبصورت نظام کو قائم کرنے کی امنگ باقی ہے۔ اس کے بعد میری نظموں کا کیا حشر ہوگا مجھے اس کی بالکل فکر نہیں ہے۔

اس کے معنی یہ ہیں کہ میری شاعری وقتی ہے۔ مجھے یہ بات تسلیم کر لینے میں ذرا بھی جھجک نہیں ہے۔ ہر شاعر کی شاعری وقتی ہوتی ہے۔ ممکن ہے کوئی اور اسے نہ مانے لیکن میں اپنی جگہ یہی سمجھتا ہوں اگر ہم اگلے وقتوں کا راگ الاپیں گے تو بے سرے ہو جائیں گے آنے والے زمانے کا راگ جو بھی ہوگا وہ آنے والی نسلیں گائیں گی۔ ہم تو آج ہی کا راگ چھیڑ سکتے ہیں۔

ہر شاعر اپنے فن کے دامن میں روحِ عصر کو سمیٹنے کی کوشش کرتا ہے کوئی کم اور کوئی زیادہ لیکن کسی نہ کسی حد تک ہر شاعر روحِ عصر کو اپنی گرفت میں لے لیتا ہے جو اپنی اس کوشش میں جتنا کامیاب ہوتا ہے وہ اتنا ہی اچھا شاعر ہوتا ہے۔ آج کی حقیقت کی کوکھ سے کل کی حقیقت پیدا ہو رہی ہے۔ کل کے عہد کی رگوں میں آج کے عہد کے خون کے کچھ نہ کچھ قطرے ضرور ہوں گے۔ اس اعتبار اور تناسب سے آج کے شاعر کے نغموں میں کل کچھ دیرپا قدریں پائی جائیں گی۔ دیرپا قدروں کی اس سے زیادہ کچھ حقیقت نہیں ہے جنھیں کبھی کبھی ادب اور فن کی زبان میں 'ابدی قدریں' بھی کہہ دیا جاتا ہے۔ ورنہ اس

تبدیل ہوتی ہوئی کائنات میں جہاں ہر چیز وجود میں آ کر عدم میں کھو جاتی ہے، ابدی چیز کیا ہو سکتی ہے اسی لیے میں شاعری میں آج کی حقیقت یا روحِ عصر کو سب سے زیادہ اہم سمجھتا ہوں۔

آج کی حقیقت کیا ہے؟ روحِ عصر کیسی ہے؟

آج پرانا نظام اور سماج مر رہا ہے اور نیا نظام اور سماج پیدا ہو رہا ہے۔ انسان اپنی پانچ چھ ہزار برس کی طویل تہذیبی تاریخ میں پہلی بار اپنے آپ کو وہم اور طبقات کی زنجیروں سے آزاد کر رہا ہے۔ پہلی بار انسان کے سر سے انسان کے پیدا کیے ہوئے ظلم اور استبداد کا سایہ اٹھ رہا ہے اور پہلی بار اس 'خالص' انسان کا ظہور ہو رہا ہے جو آقا نہیں ہے، غلام نہیں ہے، جاگیردار نہیں ہے، سرمایہ دار نہیں ہے، ظالم نہیں ہے، مظلوم نہیں ہے بلکہ صرف انسان ہے۔ آج پہلی بار اس محنت کش کا ظہور ہو رہا ہے جو جسمانی اور ذہنی محنت کے خانوں میں تقسیم نہیں ہے اور جو اپنی محنت کی قدر و قیمت جانتا ہے۔ آج پہلی بار وہ انسان زمین پر قدم رکھ رہا ہے جو فطرت سے خوف زدہ نہیں ہے اور جو قوانین فطرت کا علم حاصل کر کے فطرت کی قوتوں کو اپنا مطیع اور فرمانبردار بنا رہا ہے۔ آج پہلی بار وہ انسان پیدا ہو رہا ہے جو رنگ اور نسل کے امتیازات اور جغرافیائی حدود میں اسیر نہیں ہے۔ اس انسان کے خواب صدیوں نے ضرور دیکھے تھے، لیکن یہ انسان آج سے پہلے وجود میں نہیں آیا تھا۔ اس لیے حقیقتاً یہ میلادِ آدم کی گھڑی ہے۔ یہ جشنِ آدم کا وقت ہے جو جدوجہد اس مبارک مقصد کے لیے ہو رہی ہے وہ بڑی خوفناک لیکن بڑی عظیم الشان ہے۔ ابھی کچھ ایسی قوتیں موجود ہیں جو انسان کی خلقت میں حائل ہو رہی ہیں۔ وہ اپنی توپوں، بندوقوں اور طیاروں سے اس دنیا ہی کو تباہ کر دینا چاہتی ہیں جس کے گہوارے میں انسان پرورش پا رہا ہے۔ ان شیطانی قوتوں کے مقابلے پر جو قوتیں اٹھ رہی ہیں ان کے ہاتھوں میں سنگیت اور شاعری، علم، حکمت اور ہنر کے ناقابلِ شکست حربے ہیں اس جدوجہد کی ترجمانی کرنے، میلادِ آدم کی بشارت دینے اور جشنِ آدم کی قصیدہ خوانی کرنے کا فخر آج کے شاعر کو حاصل ہوا ہے اور مجھے اس پر ناز ہے کہ میں اس صدی کا وہ شاعر ہوں جو ہزار ہا برس پرانے خوابوں کے تعبیر کی صدی ہے۔ میری نظروں کے سامنے یہ دنیا بن رہی ہے، سنور رہی ہے۔ میری نظروں کے سامنے انسان کی تخلیق ہو رہی ہے۔ کروڑوں ہاتھ جن کے بازوؤں میں تعمیر کی قوت ہے ایک ساتھ لہرا رہے ہیں۔ کروڑوں آوازیں جن میں تخلیق کا نغمہ ہے ایک ساتھ گا رہی ہیں۔ کروڑوں تخیل جن میں زندگی کا حوصلہ ہے وقت اور تاریخ پر اپنی کمندیں پھینک رہے ہیں اور ان میں میرا بھی ایک چھوٹا سا ہاتھ ہے۔ میری بھی ایک ہلکی سی آواز، میرا بھی ایک ذرا سا تخیل شامل ہے۔ یہ دلفریب نظارہ اس صدی سے پہلے کے شاعروں کو کہاں نصیب ہوا تھا۔

اس عہد کے سارے فکری مدرسے، تمام احساسات اور جذبات اس ایک حقیقت سے وابستہ ہیں۔ آج کی روحِ عصر اس حقیقت اور اس سے وابستہ فکری مدرسوں اور احساسات اور جذبات سے بنی ہے اور میری ساری کوشش یہی ہے کہ میں اس روحِ عصر کو سمیٹ سکوں۔ یہ کام بہت بڑا ہے اور مجھے اچھی طرح معلوم ہے کہ میں اس میں پوری طرح کامیاب نہیں ہو سکا ہوں۔ لیکن میری کوشش جاری ہے اور یہ مجموعہ اس کوشش کا نتیجہ ہے۔

یہی وجہ ہے کہ میں اپنی شاعری کو 'نالۂ نیم شبی' اور 'آہِ سحر گاہی' نہیں بنا سکا ہوں میں اسے بیک وقت ستار کا نغمہ اور تلوار کی جھنکار بنانا چاہتا ہوں اور میرے سامنے اقبال کا پیش کیا ہوا یہ آدرش ہے ؎

جس سے جگر لالہ میں ٹھنڈک ہو وہ شبنم!

دل جس سے پہاڑوں کے دہل جائیں وہ طوفاں

بعض لوگوں کو یہ دنیا تاریک اور گندی نظر آتی ہے۔ واقعی یہاں بڑی تاریکی اور گندگی ہے۔ بڑا ظلم ہے بڑا افلاس ہے، بڑی سنگ دلی ہے اور اس لیے وہ اس کو سب سے بڑی حقیقت سمجھ کر پیش کرتے ہیں۔ ہمارے ہندستان ہی کو لیجیے۔ اس میں تین چار کروڑ بے روزگار ہیں، دس پندرہ کروڑ اپاہج اور بیمار ہیں۔ بیس پچیس کروڑ بھوکے اور ننگے ہیں۔ کئی کروڑ عیاش اور انسانیت سوز حرکتیں کرنے والے کمینے ہیں۔ میں نے یہ ساری گندگی دیکھی ہے۔ میں نے ایسے باپ بھی دیکھے ہیں جو اپنی بیٹی کو بیچ دینے کی فکر میں ہیں۔ ایسے بیٹے بھی دیکھے ہیں جو بوڑھی ماں کو چھوڑ کر بھاگ جاتے ہیں۔ ایسے بچے بھی دیکھے ہیں جنھوں نے بولنا سیکھنے سے پہلے ماں اور بہن کی دلالی کا کام شروع کر دیا ہے۔ ایسے غنڈے بھی دیکھے ہیں جنھوں نے کئی قتل کیے ہیں۔ میں نے بہت کچھ دیکھا ہے لیکن اس کے بعد بھی میں اسے زندگی کی سب سے بڑی اور سب سے زیادہ حاوی حقیقت نہیں سمجھتا۔ کیونکہ میں نے اس گندگی اور غلاظت، سفاکی اور سنگ دلی کے خلاف جدوجہد کرنے والے مجاہدوں کو بھی دیکھا ہے۔ میں نے بہادری کے وہ نظارے بھی دیکھے ہیں جہاں نہتے آدمی گولیوں کی بوچھاروں میں بھی آگے ہی بڑھتے ہیں۔ وہ قربانیاں بھی دیکھی ہیں کہ ذاتی حسرتوں اور آسائشوں کو وسیع انسانیت کے مفاد کے لیے ترک کر دیا گیا ہے۔ یہ وہ قوتیں ہیں جو سماج کی صدیوں پرانی غلاظت اور درندگی کو دور کر کے زندگی اور انسان کو پاکیزہ بنا رہی ہیں۔ پہلی مرتی ہوئی حقیقت ہے اور دوسری زندہ اور ابھرتی ہوئی حقیقت۔ اس لیے پہلی حقیقت اپنی انتہائی خباثت کے باوجود بھی مجھے پست ہمت، مایوس اور قنوطی نہیں بنا سکتی۔

میں اپنے نالہ و بکا، آہ و فریاد سے اس غموں سے بھری ہوئی دنیا کو زیادہ غمگین نہیں بنانا چاہتا۔

ماج کی انحطاطی طاقتیں تو یہ چاہتی ہیں کہ اس زہر آلود فضا کو اور زیادہ آلودہ کیا جائے۔ لیکن ترقی پسند طاقتوں کا تقاضا یہ ہے کہ فضا کو زہر سے صاف کر کے پاکیزہ کر دیا جائے۔ اور بقول پبلو نرودا ہمیں اس کا حق حاصل نہیں ہے کہ ہم اس ہوا میں زہر گھول دیں جس میں ہم ہی نہیں بلکہ آنے والی نسلیں بھی سانس لیں گی۔ اس لیے میں تاریکی، افلاس، درندگی اور غلاظت کو ماضی کی حقیقت سمجھتا ہوں جو برابر اپنی قبر کے اندر گھستی چلی جا رہی ہے۔ اس کے خلاف جو جدوجہد ہے وہ حال کی حقیقت ہے اور اس جدوجہد سے جو نتائج پیدا ہو رہے ہیں، جس انسان کی تخلیق ہو رہی ہے وہ حقیقت ہے جو حال کو مستقبل بنا دیتی ہے۔ آج یہ شاندار جدوجہد دنیا کے ہر ملک میں ہو رہی ہے اور اس نے ساری انسانیت کو ایک لڑی میں پرو دیا ہے۔ ہندستان، ایران، افریقہ، انگلستان، امریکہ وغیرہ میں جدوجہد کے دوران میں نئے انسان کی تخلیق ہو رہی ہے۔ چین اور سویت یونین وغیرہ میں یہ تخلیق تکمیل کی منزلوں کے قریب پہنچ رہی ہے۔ جب ہم روح عصر کو اس طرح سمجھتے ہیں تو وہ ہمارے دلوں میں نشاط اور حوصلہ مندی پیدا کرتی ہے۔ مایوسی اور قنوطیت نہیں۔ پھر منہ سے یہ جملہ نہیں نکل سکتا کہ جب یہ دنیا بدل جائے گی تب میں رونا چھوڑ دوں گا۔ تب منہ سے صرف یہ نکلے گا کہ ہم اپنی فریاد میں للکار کی تاثیر پیدا کریں گے۔ اپنے آنسوؤں کو شراروں میں بدل دیں گے۔ اپنے زخموں سے زبانیں پیدا کریں گے۔ شیطنت کے سامنے رونا، گڑگڑانا، پسپا ہونا انسانیت کی توہین ہے اور ہماری انسانیت ہمارے سینوں میں زندہ ہے۔ اس یقین سے وہ فن پیدا ہو گا جس پر پیٹ بھری حسین لڑکیاں آہیں نہیں بھریں گی۔ بلکہ جسے کارزار زندگی میں آگے بڑھنے والے انسان اپنا ہتھیار سمجھ کر اٹھا لیں گے۔ یہی میری شاعری کا مقصد ہے جس میں کامیاب ہونے کی میں ابھی کوشش کر رہا ہوں اور اس کوشش میں اپنے پڑھنے اور سننے والوں کا تعاون چاہتا ہوں جو مجھے ہمیشہ ضرورت سے زیادہ ملتا رہا ہے۔ مجھے کبھی اپنے پڑھنے اور سننے والوں سے شکایت پیدا نہیں ہوئی۔ ہاں کبھی کبھی ان کو مجھ سے یہ شکایت ضرور پیدا ہوئی ہے اور بجا طور پر ہوئی ہے کہ میں نے زندگی اور حقیقت کی ترجمانی میں کوتاہی کی ہے۔ اس لیے مجھے اپنی جدوجہد میں اور زیادہ خلوص اور زیادہ محنت سے کام لینا چاہیے۔ اپنی زندگی کے تجربے کو اور زیادہ وسیع نقطۂ نگاہ کو اور زیادہ واضح کرنا چاہیے اور ان نظریات سے اور زیادہ بچنا چاہیے جو رجعت پرستی کی کمین گاہوں سے دن رات ہم پر یلغار کرتے رہتے ہیں اور اکثر غیر شعوری طور سے ہمارے فن میں سرایت کر جاتے ہیں۔

میں اپنے مقصد کو حاصل کرنے کے لیے مختلف قسم اور مختلف سطح کی شاعری کرتا رہا ہوں۔ میری تمام تر کوشش یہ ہے کہ زیادہ سے زیادہ آدمیوں کے لیے اپنی شاعری کو آسان بنا سکوں۔ اس کوشش

میں میں ان حدوں کو توڑ دینا چاہتا ہوں جو بول چال کی زبان اور 'شاعرانہ زبان کے بیچ میں حائل ہیں۔ جہاں میں ان حدود کو نہیں توڑ پاتا اور بول چال کی زبان میں اپنا مطلب ادا کرنے سے قاصر رہتا ہوں وہاں 'شاعرانہ زبان بھی استعمال کر لیتا ہوں۔ یہ دراصل بول چال کی زبان کا عجز نہیں بلکہ میری تربیت کا قصور ہے۔ حقیقت یہ ہے کہ بول چال کی زبان ہی سب سے زیادہ شاعرانہ زبان ہے لیکن جب کبھی بول چال کی زبان سے ہٹ کر 'شاعرانہ' زبان بنائی جاتی ہے تو وہ مصنوعی ہوتی ہے۔

پرانی تشبیہ اور استعارے، پرانی علامتیں ایک بہت بڑا خزانہ ضرور ہیں لیکن اس خزانے پر قناعت کر لینا نادانی ہے۔ کبھی تو ان کے استعمال سے بڑا حسن پیدا ہو جاتا ہے لیکن کبھی وہ خیالات اور احساسات کو جکڑ بھی لیتے ہیں اور اصلیت پر پردہ ڈال دیتے ہیں کیونکہ زندگی کی نئی حقیقتیں نئے طریق اظہار اور انداز بیان کا مطالبہ کرتی ہیں۔ اس لیے میں بغیر کسی جھجک کے نئی تشبیہ اور استعارے بھی استعمال کرتا ہوں۔ اور نئی امیجری بھی۔ میں نے اس اصول کو بہت مفید پایا ہے کہ تشبیہ اور استعارے اور امیجری موضوع کے ماحول سے حاصل کرنے چاہئیں اس لیے آپ کو میرے یہاں ایسے مصرعے ملیں گے جیسے

شام کی آنکھ میں بارود کے کاجل کی لکیر\
یا\
پہرہ داروں کی نگاہوں سے ٹپکتا ہے لہو\
رائفل کرتی ہے فولاد کے ہونٹوں سے کلام\
گولیاں کرتی ہیں سیسے کی زباں سے باتیں\
یا\
روٹیاں چکلوں کی قحبائیں ہیں\
جن کو سرمایہ کے دلالوں نے\
نفع خوری کے جھروکوں میں سجا رکھا ہے\
یا\
چاولوں کی صورت پر مفلسی برستی ہے

میں صرف زنداں اور قفس کہنے کے لیے تیار نہیں ہوں بلکہ بعض اوقات میں جیل اور قید خانہ کے لفظ کو ترجیح دیتا ہوں صرف پہرہ دار اور پاسبان ہی نہیں بلکہ وارڈر اور نمبردار کے الفاظ کو بھی جائز سمجھتا ہوں کیونکہ یہ عام استعمال کے الفاظ ہیں اور جیل میں یہی الفاظ سنائی دیتے ہیں۔

اس اصول میں ایک خوبی تو یہ ہے کہ انداز بیان میں تنوع کے بڑے امکان پیدا ہو جاتے ہیں

اور دوسری یہ کہ جدید زندگی، اس کی شیطنت اور آدمیت دونوں اپنے سارے لوازمات کے ساتھ سامنے آتی ہیں جو حقیقت نگاری کے لیے ضروری ہے۔ یہی وجہ ہے کہ میری شاعری میں گل، بلبل، شمع، پروانہ، دریا، ساحل، کشتی، رہبر، رہزن، منزل، جادو، مینا، ساغر، تیغ وتفنگ ہی نہیں ملتے بلکہ روٹی، چاول، دھان، گیہوں، نمک، ریل، مشین، مزدور، رائفل، ٹینک، بمبار، چولہا، پتیلی اور اسی قسم کے دوسرے عام الفاظ کی بھی بہتات ہے۔ میں جانتا ہوں کہ بعض حضرات کو یہ الفاظ غیر شاعرانہ معلوم ہوتے ہیں۔ لیکن سچی بات یہ ہے کہ الفاظ بجائے خود شاعرانہ یا غیر شاعرانہ نہیں ہوتے۔ یہ تو شاعر کی اپنی صلاحیت پر منحصر ہے کہ وہ لفظوں کو کیسے استعمال کرتا ہے اس لیے میں ہر لفظ کو استعمال کرنے پر آمادہ رہتا ہوں۔ اپنی اس کوشش میں مجھے بعض اوقات ناکامی بھی ہوتی ہے اور مصرعے بھونڈے اور بھدے ہو گئے ہیں لیکن جہاں کہیں میں کامیاب ہو گیا ہوں مجھے اپنی ناکامی کا صلہ مل گیا ہے۔ میں جو کچھ کہتا ہوں اگر اسے محض روایتی تشبیہوں اور استعاروں میں کہوں تو یہ محسوس ہوگا جیسے کوئی شخص جامہ وار کی پتلون اور چکن کا کوٹ پہنے چلا آ رہا ہے جس سے کافور کی گولیوں کی بو آ رہی ہے۔ اسے میں جامہ وار اور چکن کا غلط استعمال سمجھتا ہوں۔ دوسری طرف میں ململ کا انگرکھا اور دوپلی ٹوپی پہن کر بھی میدان کارزار میں اترنے کی ہمت نہیں کر سکتا۔

اس مجموعہ میں، میرے دوسرے مجموعوں کی طرح، پابند شاعری بھی ملے گی اور آزاد شاعری بھی۔ کیونکہ شاعری ہمیشہ ردیف اور قافیہ کی محتاج نہیں رہتی۔ ترکی کے شاعر اعظم ناظم حکمت کے الفاظ میں جس طرح ردیف اور قافیہ پر اصرار کرنا ایک طرح کی ہیئت پرستی ہے، اسی طرح محض آزاد شاعری پر اصرار کرنا بھی ایک طرح کی ہیئت پرستی ہے۔ اصل کوشش تو یہ ہونی چاہیے کہ موضوع کو بہتر سے بہتر ہیئت کا لباس عطا کیا جائے اور یہ کہنا غلط ہوگا کہ کوئی ایک مخصوص ہیئت ہی سب سے زیادہ حسین ہے۔ اس لیے میں پابند اور آزاد دونوں قسم کی شاعری کا قائل ہوں۔

لیکن دونوں کے طریقوں میں ذرا سا فرق ہے۔ پابند نظم میں زیادہ تر مصرعوں اور شعروں کو تعمیر پر زور دیا جاتا ہے لیکن میں اس کے برعکس آزاد نظم میں بندوں کی تعمیر کو انفرادی مصرعوں کی تعمیر سے زیادہ اہم سمجھتا ہوں، چونکہ آزاد نظم میں ردیف اور قافیوں کی جھنکار نہیں ہوتی اس لیے اس میں داخلی ترنم کا جادو بہت ضروری ہے۔ یہ ترنم خارجی بھی ہوتا ہے اور داخلی بھی، اس لیے انتخاب الفاظ کے علاوہ مصرعوں کے باہمی ربط سے بھی پیدا ہوتا ہے جو اپنی جگہ معنوی تسلسل کا محتاج ہوتا ہے۔ اس لیے ہر بند کو ایک مکمل تصویر ہونا چاہیے تاکہ مکمل نظم ایک بہت بڑی تصویر کی طرح ہو جسے تمام چھوٹی چھوٹی تصویریں مل کر بناتی ہوں۔ (اس کے بغیر آزاد نظم کے مصرعے الگ الگ ایک دوسرے کی طرف سے منہ پھیرتے ہوئے

کھڑے نظر آئیں گے) مثال کے لیے یہ بند ملاحظہ کیجئے ۔

یہ مجاہد، یہ بہادر، یہ جیالے، یہ کسان
برق و باراں کے حریف
جن کے چہروں پہ ہے دھرتی کا سکوں اور وقار
اور ہتھیلی میں لکیروں کے سوا کچھ بھی نہیں
کیاریاں بوتے تھے اشکوں کی، لہو کاٹتے تھے
آج ہر دشت میں، ہر کھیت میں، ہر میداں میں
سرخ سینوں سے چھڑکتے ہیں لہو کی بوندیں
بجلیاں پھلتی ہیں، گل کھلتے ہیں، بم اُگتے ہیں (تلنگانہ)

یہ تو باغی کسانوں کی تصویر تھی۔ اب رات کا سراپا دیکھیے ۔

نیلگوں جواں سینہ
نیلگوں جواں باہیں
کہکشاں کی پیشانی
نیم چاند کا جوڑا
مخملی اندھیرے کا
پیرہن لرزتا ہے
وقت کی یہ زلفیں
خامشی کے شانوں پر
خم بہ خم مہکتی ہیں
اور زمیں کے ہونٹوں پر
نرم شبنمی بوسے
موتیوں کے دانتوں سے
کھل کھلا کے ہنستے ہیں

(نیند)

آزاد نظم کے بندوں کی یہ تعمیر پابند نظم کے مصرعوں کی تعمیر سے بہت مختلف ہے جس کی مثال

اس بند میں ملے گی۔

وہ لائیں اپنے سیہ ارادے، ہم اپنے دل کی امنگ لائیں
ہم اپنے لوح و قلم نکالیں، وہ اپنے تیغ و تفنگ لائیں
ہم اپنے بربط کے تار چھیڑیں، وہ شورشِ رعد جنگ لائیں
ہم اپنے زخموں کے گل کھلائیں، وہ خون ناحق کا رنگ لائیں
لہو میں بہہ جائیں گے وہ سب جو لہو کا بیوپار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

(یلغار)

پابند نظم میں ہر ہر مصرعے پر الگ الگ داد لی جاسکتی ہے آزاد نظم میں یہ ممکن نہیں۔ وہاں خیال یا تصویر کی تکمیل پورے بند کی تکمیل کے ساتھ ہوتی ہے۔

چونکہ میں شاعری کو بنیادی طور سے گانے یا بلند آواز سے پڑھ کر سنانے کی چیز اور اس سے شعور کو بیدار کرنے اور جذبات کو ابھارنے کا کام لینا چاہتا ہوں اس لیے میں نے اپنی آزاد نظموں میں بھی یہ کوشش کی ہے کہ وہ محض کاغذ پر پڑھنے کی چیز بن کر نہ رہ جائے۔ میں اکثر مشاعروں میں اپنی آزاد نظمیں پڑھتا ہوں اور مجھے اس تجربے میں کامیابی ہوئی ہے۔ پہلے مخدوم بھی اپنی نظم 'اندھیرا' اور 'استالن کی آواز' کے ذریعے سے یہ کامیابی حاصل کر کے یہ خیال غلط ثابت کر چکا ہے کہ ہمارے ملک اور زبان میں آزاد شاعری کو قبول عام نہیں مل سکتی۔

یہ خیال بھی غلط ہے کہ آزاد نظم ردیف اور قافیہ ہی سے نہیں بلکہ بحر اور ترنم سے بھی عاری ہوتی ہے۔ یوں تو نثر میں بھی شاعری کی جاسکتی ہے اور بعض لوگ کرتے ہیں لیکن اردو کے زیادہ تر شعراء آزاد نظم میں بحروں کے مقررہ ارکان کی تعداد تبدیل کر کے انھیں استعمال کرتے ہیں۔ اس طرح بحروں کی وہ مانوس شکل تو باقی نہیں رہتی جو اساتذہ کے یہاں نظر آتی ہے لیکن بحر باقی رہتی ہے اور ترنم بھی۔ بعض نظموں میں بحروں کی مانوس شکل بھی باقی رہتی ہے۔ صرف ردیف اور قافیے نہیں ہوتے جیسے 'پتھر کی دیوار' یا 'نیند'۔ کبھی کبھی ان نظموں کے کسی بند میں خود بخود قافیے بھی آجاتے ہیں۔ جو خیال کی روانی میں حائل نہیں ہوتے اور اس لیے ناگوار نہیں گزرتے مثلاً

انقلاب سامان ہے
ہند کی فضا ساری

نزع کے ہے عالم میں
یہ نظامِ زرداری
وقت کے محل میں ہے
جشنِ نو کی تیاری
جشنِ عام جمہوری
اقتدارِ مزدوری
غرقِ آتش و آہن
بیکسی و مجبوری
مفلسی و ناداری

(پتھر کی دیوار)

یا

اپنی صد سالہ تمناؤں کا حاصل ہے یہی
موج پایابُ کا ساحل ہے یہی
تم نے فردوس کے بدلے میں جہنم لے کر
کہہ دیا ہم سے گلستاں میں بہار آئی ہے
چند سکوں کے عوض چند ملوں کی خاطر
تم نے ناموس شہیدان وطن بیچ دیا
باغباں بن کے اٹھے اور چمن بیچ دیا (فریب)

اس کے بعد یہ نتیجہ نکالنا غلط نہ ہوگا کہ اس قسم کی شاعری کو پرانی کسوٹیوں پر نہیں کسا جا سکتا۔ پریم چند نے انجمن ترقی پسند مصنفین کی پہلی کانفرنس کے خطبۂ صدارت میں کہا تھا کہ 'ہمیں حسن کا معیار تبدیل کرنا ہے' اور واقعہ یہ ہے کہ حسن کا معیار بہت کچھ تبدیل ہو چکا ہے اور بہت کچھ تبدیل ہو رہا ہے اور اس لیے ہماری ترقی پسند شاعری میں جمالیات کا ایک نیا تصور کارفرما ہے۔ ہمارا رومانیت کا تصور بھی بدل رہا ہے۔ میری طرح شاعری کرنے والے زندگی کی تلخیوں سے بھاگ کر محبوب کی بانہوں یا فطرت میں پناہ نہیں لیتے اور نہ اپنے زمانے سے پشیماں ہو کر بیتے ہوئے زمانے میں روپوش ہوتے ہیں۔ بلکہ زندگی کو بدل دینے کا حوصلہ پیدا کرتے ہیں۔ جذبی کے الفاظ میں۔

'عام طور سے ہوتا یہ ہے کہ خالص مادی نقطۂ نظر نہ ہونے کی وجہ سے داخلیت کہیں نہ کہیں راہ پا جاتی ہے۔ یہ لغزش بسا اوقات غیر مارکسی ادیب کا رخ اخلاق اور روحانیت کے قدیم سہاروں کی طرف پھیر دیتی ہے اور جہاں یہ سہارے بھی نہیں ہوتے وہاں شاہد و شراب کی رنگینیاں سہارا بن جاتی ہیں۔ مارکسی طریقۂ فکر ہمیں اس قسم کے سہارے نہیں دیتا جو انسانی تاریخ میں کبھی بھی بیکس انسانوں کے کام نہ آ سکے۔ اس کے بجائے وہ ہمارے سامنے خالص مادی بنیادوں پر حقیقت کو ہی سامنے نہیں لاتا بلکہ ایک ایسے تابندہ مستقبل کا خواب بھی دکھلاتا ہے جو دنیا کے ایک بہت بڑے حصے میں حقیقت بن چکا ہے۔' (فروزاں کا دیباچہ)

میرا خیال ہے کہ ہم آج کی حقیقت میں مستقبل کے انھیں ٹھوس خوابوں کی آمیزش سے رومان حسن اور وفور پیدا کر سکتے ہیں اس لیے میں نے صرف پھولوں اور ستاروں، محبوب کے رخساروں اور آنکھوں اور چھلکتے ہوئے جاموں اور لرزتے ہوئے پیراہنوں ہی میں حسن نہیں دیکھا ہے۔ بلکہ تیل کے چشموں اور کوئلے کی کانوں اور سوت کے کارخانوں میں بھی حسن بکھرا ہوا پایا ہے۔ اس تصور ہی سے اس طرح کی تصویریں بنتی ہیں۔ جیسے 'سیاہ ہیرا' (کوئلہ) 'پگھلے ہوئے ستارے' (چشموں کا تیل) 'کپاس کی چاندی' (روئی) یا 'سورج کی رنگین کرنوں کی لچکتی ہوئی انگلیاں' (رات کے تار) وغیرہ وغیرہ۔ یہ نئی تصویریں ہیں جنھیں میں نے اپنی نظموں میں استعمال کیا ہے اور اس طرح کے مصرعے کہیں ہیں۔ ع

ہے چمنیوں کا دھواں بھی پر پیچ کاکلوں کی طرح دل آرا

لیکن چونکہ موجودہ سماج میں انسان مشین پر نہیں بلکہ مشین انسان پر حاوی ہے اور ظلم اور استحصال کی علامت بن کر سامنے آتی ہے اس لیے ایسی تصویریں بھی ملیں گی۔

چمنیاں بھتنیوں کی طرح بال کھولے ہوئے

مگر یہی بھتنیاں ہمارے قبضے میں آنے کے بعد شہزادیاں بن جائیں گی اور پھر ہم 'ناچتی چرخیوں' اور 'گنگناتی ہوئی تکلیوں' اور 'کارخانوں میں مشینوں کے دھڑکتے ہوئے دل' کے گیت گائیں گے۔

میرے لیے زمین سے زیادہ حسین، انسان سے زیادہ پر وقار اور مستقبل سے زیادہ تابناک کوئی چیز نہیں ہے۔ ادب اور آرٹ کی سب سے بڑی جمالیاتی قدریں اُنھیں سے پیدا ہوتی ہیں۔

بمبئی، 17 مئی 1953ء

سردار جعفری

# طبع ثانی

'پتھر کی دیوار' کا دوسرا ایڈیشن اکتالیس سال بعد شائع ہو رہا ہے اس تاخیر کی کوئی وجہ نہیں تھی لیکن تاخیر ہوتی رہی۔

میری ذہنی اور جذباتی تشکیل کا موسم کچھ اور تھا۔ ہر طرف پھول کھل رہے تھے۔ ہوا میں شراب کی تاثیر تھی۔ طلوع آفتاب سے افق گلنار تھا۔ آج موسم بدل چکا ہے۔ اردو زبان اور شعر و ادب، سب سیاسی اور سماجی حالات کا شکار ہیں۔ ایسی صورت میں کسی کتاب کا زندہ رہنا حیرت ناک بات ہے۔ گزشتہ چالیس سال کے عرصہ میں بار بار مجھے پتھر کی دیوار کی نظموں کی زندگی کا ثبوت ملتا رہا۔

ایک دلچسپ واقعہ پاکستانی اشاعت کا ہے۔ وہاں میری شاعری ممنوع نہیں تھی لیکن میرے داخلے پر پابندی تھی اس لیے عام طور سے پبلشر میری کتابیں شائع کرنے سے گھبراتے تھے۔ پھر بھی پتھر کی دیوار کے نسخے زیراکس کے ذریعہ سے نقل کیے گئے اور خاموشی سے تقسیم ہوتے رہے۔ 1984ء کی بات ہے کہ کراچی کی ایک محفل میں ایک صاحب نے اس کا ایک نسخہ مجھے عنایت کیا جو انھیں ان کی طالب علمی کے زمانے میں کالج سے انعام کے طور پر ملا تھا۔ ایسے خوشگوار واقعات ہندستان اور ہندستان کے باہر دوسرے مقامات پر بھی پیش آتے رہے جو اس بات کے اشارے کر رہے تھے کہ اب طبع ثانی میں تاخیر نہیں ہونی چاہیے۔ پھر بھی تاخیر ہوتی رہی۔ اب شاہد علی خاں صاحب کی عنایت• سے یہ کتاب نئے زیور طبع سے آراستہ ہوئی ہے۔

یہ کتاب اس فصل بہار کا ثمر ہے جو اقبال اور جوش کے بعد اردو شاعری کا مزاج بدل رہی تھی اور نئی پیکر تراشی کی جلوہ گری سے نئی شعری جمالیات کی تشکیل ہو رہی تھی۔ یہ جمالیات نئے شاعروں کے ہاتھوں میں محفوظ ہے اور نئی جلا حاصل کر رہی ہے۔

نئی دہلی، 17/اگست 1994 — سردار جعفری

# پتھر کی دیوار

کیا کہوں بھیانک ہے
یا حسیں ہے یہ منظر
خواب ہے کہ بیداری
کچھ پتا نہیں چلتا
پھول بھی ہیں سایے بھی
خاک بھی ہے پانی بھی
آدمی بھی محنت بھی
گیت بھی ہیں آنسو بھی
پھر بھی ایک خاموشی
روح و دل کی تنہائی
اک طویل سنّاٹا
جیسے سانپ لہرائے
ماہ و سال آتے ہیں
اور دن نکلتے ہیں
جیسے دل کی بستی سے
اجنبی گزر جائے

چیختی ہوئی گھڑیاں
زخم خوردہ طائر ہیں
نرم رو سبک لمحے
منجمد ستارے ہیں
رینگتی ہیں تاریکیں
روز و شب کی راہوں پر
ڈھونڈتے ہیں چشم و دل
نقش پا نہیں ملتے
زندگی کے گلدستے
زیب طاق نسیاں ہیں

پتیوں کی پلکوں پر
اوس جگمگاتی ہے
املیوں کے پیڑوں پر
دھوپ پر سکھاتی ہے
آفتاب ہنستا ہے
مسکراتے ہیں تارے
چاند کے کٹورے سے
چاندنی چھلکتی ہے
جیل کی فضاؤں میں
پھر بھی اک اندھیرا ہے
جیسے ریت میں گر کر
دودھ جذب ہو جائے
روشنی کے گالوں پر
تیرگی کے ناخن کی

یہ وہ خراشیں ہیں

پتھروں کی دیواریں

بارکوں کی تعمیریں
اژدہوں کے پیکر ہیں
جو نئے ادیبوں کو
رات دن نگلتے ہیں
ان کے پیٹ کی دوزخ
کوئی بھر نہیں سکتا

پتھروں کی دیواریں

بھوک کا بھیانک روپ
چلیوں کے بھدّے راگ
روٹیوں کے دانتوں میں
ریت اور کنکر ہیں
دال کے پیالوں میں
زرد زرد پانی ہے
چاولوں کی صورت پر
مفلسی برستی ہے
سبزیوں کے زخموں سے
پیپ سی ٹپکتی ہے

پتھروں کی دیواریں

درد و غم کے پیروں میں
آنسوؤں کی زنجیریں

بے بسی کی محفل میں
حسرتوں کی تقریریں
رسیوں کی گانٹھوں میں
بازوؤں کی گولائی
نیم جان قدموں میں
بیڑیوں کی شہنائی
ہتھکڑی کے حلقوں میں
ہاتھ کسمساتے ہیں
پھانسیوں کے پھندوں میں
گردنیں تڑپتی ہیں

پتھروں کی دیواریں

جو کبھی نہیں روتیں
جو کبھی نہیں ہنستیں
ان کے سخت چہرے پر
رنگ ہے نہ غازہ ہے
کھردرے لبوں پر صرف
بے حسی کی مہریں ہیں

پتھروں کی دیواریں

پتھروں کے فرش اور چھت
پتھروں کی محرابیں
پتھروں کی پیشانی
پتھروں کی آنکھیں ہیں
پتھروں کے دروازے

پتھروں کی انگڑائی
پتھروں کے پنجوں میں
آہنی سلاخیں ہیں

اور ان سلاخوں میں
حسرتیں تمنائیں
آرزوئیں، امیدیں
خواب اور تعبیریں
اشک پھول اور شبنم
چاند کی جواں نظریں
دھوپ کی سنہری زلف
بادلوں کی پرچھائیں
صبح و شام کی پریاں
موسموں کی لیلائیں
سولیوں پہ چڑھتی ہیں

اور اس اندھیرے میں
سولیوں کے سایے میں
انقلاب پلتا ہے
تیرگی کے کانٹوں پر
آفتاب چلتا ہے
پتھروں کے سینے سے
سرخ ہاتھ اُگتے ہیں
ہاتھ ہیں کہ تلواریں
رات کے اندھیرے میں
جیسے شمع جلتی ہے

انکھیاں فروزاں ہیں
بارکوں کے کونوں سے
سازشیں نکلتی ہیں
خاموشی کی نبضوں میں
گھنٹیاں سی بجتی ہیں

جانے کیسے قیدی ہیں
س جہاں سے آئے ہیں
ناخنوں میں کیلیں ہیں
ہڈیاں شکستہ ہیں
نوجوان جسموں پر
پیرہن ہیں زخموں کے
جگمگاتے ماتھوں پر
خون کی لکیریں ہیں
اشک آگ کے قطرے
سانس تند آندھی ہے
بات ہے کہ طوفاں ہے
ابروؤں کی جنبش میں
عزم مسکراتے ہیں
اور نگہ کی لرزش میں
حوصلے مچلتے ہیں
تیوریوں کی شکنوں میں
نقش پا بغاوت کے
جتنا ظلم سہتے ہیں
اور مسکراتے ہیں

جتنا دکھ اٹھاتے ہیں
اور گیت گاتے ہیں
جبر اور بڑھتا ہے
زہر اور چڑھتا ہے
ظالموں کی شدّت پر
ظلم چیخ اٹھتا ہے
ان کے لب نہیں ملتے
ان کے سر نہیں جھکتے
دل سے آہ کے بدلے
اک صدا نکلتی ہے
'انقلاب زندہ باد'

خاک پاک کے بیٹے
کھیتیوں کے رکھوالے
ہاتھ کار خانوں کے
انقلاب کے شہپر
کوہسار کے شاہیں
پتھروں کی کوروں پر
آندھیوں کی راہوں پر
بجلیوں کی بارش میں
گولیوں کے طوفاں میں
سر اٹھائے بیٹھے ہیں

انقلاب ساماں ہے
ہند کی فضا ساری
نزع کے ہے عالم میں

یہ نظامِ زرداری
وقت کے محل میں ہے
جشنِ نو کی تیاری
جشن عام جمہوری
اقتدار مزدوری
غرق آتش و آہن
بے بسی و مجبوری
مفلسی و ناداری
تیرگی کے بادل سے
جگنوؤں کی بارش ہے
رقص میں شرارے ہیں
ہر طرف اندھیرا ہے
اور اس اندھیرے میں
ہر طرف شرارے ہیں
کوئی کہہ نہیں سکتا
کون سا شرارہ کب
بے قرار ہو جائے
شعلہ بار ہو جائے
انقلاب آ جائے

# موت

'وارڈر

موت سے جا کے کہہ دو کہ اس وقت فرصت نہیں
پھر کبھی آئے
جیلر کو درخواست دے
کم سے کم پندرہ روز پہلے
تا کہ سی آئی ڈی والے تحقیق کر لیں یہ کون ہے
کس لیے آئی ہے'

'موت' کچھ اپنی بیوی بہن دوست یا ماں نہیں
اس پہ سی آئی ڈی والوں نے
کوئی پابندی اب تک لگائی نہیں
وہ تو جب چاہے آئے، ملے اور چلی جائے
اس کو ہر طرح کے اختیارات ہیں
اور یہ موت تو خود بڑے حاکموں ہی کے احکام سے آئی ہے
اور کسی میں اس کو روک دینے کی جرأت نہیں
آپ پھاٹک پہ آ جایئے

ورنہ وہ خود ہی پارک میں آ جائیگی'

اور اک دم سے پھاٹک کھلا
سائرن بج اٹھا
اونچے ٹاور پہ خطرے کے جھنڈے نے انگڑائی لی
موت داخل ہوئی
میں نے دیکھا
اور ہم سب نے دیکھا
موت کے بیسیوں سر تھے اور سیکڑوں ہاتھ تھے
لاٹھیوں کی طرح
رائفل کی طرح
انگلیاں لمبی لمبی تھیں، ناخون سنگینوں کے
جسم خاکی تھا
چہرہ گلابی تھا
بارود کی سانس تھی
پاؤں چمڑے کے جوتوں میں
لوہے کی کیلوں سے
پتھر کی راہوں پہ بجتے ہوئے
لفٹ رائٹ کی آواز دیتے ہوئے
جیسے اک دورِ ماقبل تاریخ کا اژدہا
بھولے بسرے ہوئے جنگلوں سے نکل آیا ہو
لوگ یہ کہتے ہیں موت کی شکل و صورت نہیں
وہ مگر آج ہم سب کی نظروں کے آگے کھڑی تھی
ہیٹ پہنے ہوئے
اپنی موٹی کمر اور چمڑے کی پیٹی میں پستول باندھے ہوئے

ظلم کے راج کی جے کہو
جس میں ہر شخص کے واسطے موت ہے
قیدیوں کے لیے
درزیوں کے لیے
موچیوں کے لیے
دفتروں کے کلرکوں، رفیوجی مصیبت زدوں کے لیے
عورتوں اور بچوں کی معصومیت کے لیے
موت ہے موت ہے موت ہے
زندگی بار ہے
بھوک تکلیف دہ
مفلسی اور بیروزگاری کا طاعون پھیلا ہوا
روٹیوں کی جگہ موت لو
دھوتیوں ساریوں کی جگہ موت لو
گھر نہیں موت کی گود میں سو رہو
کام ملتا نہیں اور ملیں بند ہوتی چلی جا رہی ہیں
فکر کی بات کوئی نہیں
اپنے جن راج کے منتظم منتری
رات دن اپنی جنتا کی سیوا میں مصروف ہیں
موت کے کارخانے بنانے میں مشغول ہیں
موت کے کارخانے میں چھٹنی نہیں
صرف بھرتی ہی بھرتی ہے بھرتے چلے جاؤ
اپنی بیوی کو بھی بھیج دو
اپنے بچوں کو بھی ساتھ لو
اور بونس میں اک قبر یا اک چتا

جو بھی چاہو گے مل جائے گی

ملک میں اب پولیس راج ہرگز نہیں
وہ تو انگریز کے وقت تھا
آج کل موت کا راج ہے
موت جو سب کی ہمدرد ہے
سب کی غم خوار ہے
آج ہم قیدیوں سے ملاقات کے واسطے آئی تھی
ہم وطن سے بہت دور ہیں
اپنے احباب کی دوستی
اور عزیزوں کی الفت سے محروم ہیں
کوئی ملنے کو آتا نہیں
مائیں بیمار ہیں
باپ بوڑھے ہیں اور بیویاں دور ہیں
بچے کم عمر ہیں
موت کے بادشاہوں کی غمخواریاں
ناز برداریاں
موت ملنے کو تشریف لے آئی ہے

ہم مگر سر پھرے، منچلے اور مغرور ہیں
موت سے ہم کو ملنے کی فرصت نہیں

# مقتول ممتا

(ان عورتوں کے نام جو 27راپریل 1949 کو کلکتہ میں شہید ہوئیں)

میں تم کو اپنی بہن کہوں یا رفیق سمجھوں
مگر وطن کی زمیں ماں کہہ کے یاد کرتی رہے گی تم کو
کہ تم نے خاک وطن کو اپنا لہو دیا ہے
تمھارے چہروں کا نور بنگال کی جبیں پر دمک رہا ہے

تم اپنے پیاروں کی بھوک سے بے قرار ہو کر
گھروں سے باہر نکل پڑی تھیں
تم اپنے شہر اپنے دیس اپنے وطن کی سڑکوں پہ چل رہیں تھی
تم اپنے آکاش کی فضاؤں میں گا رہی تھیں
تم اپنے اہل وطن کو انصاف اور صداقت کا نام لے کر
وطن کی خاطر بلا رہی تھیں
تمھارے ہاتھوں میں رائفل تھی
نہ آنچلوں میں بموں کے گولے
لبوں پہ نعرے گلوں میں آنسو دلوں میں عزم شکستِ زنداں
جوان شانوں پہ سرخ پرچم مچل رہے تھے
پولیس کی لاریوں سے لیکن

تمھارے سینوں پہ آگ کے تیر چل رہے تھے
تمھارے ہاتھوں پہ گرم سیسہ برس رہا تھا

وہ کوکھ زخمی ہے جس میں بچوں کی مسکراہٹ چھپی ہوئی تھی
وہ سینے چھلنی ہیں گولیوں سے
جو نسلِ آدم کے آئینے تھے
وہ جسم اب راکھ ہو چکے ہیں
کہ جن کے اندر
نہ جانے کتنے سڈول جسموں کا رقصِ پنہاں جھلک رہا تھا
تمھارے بے سدھ جوان ہاتھوں کو پالنے ڈھونڈتے رہیں

مگر میں یہ جانتا ہوں میری شہید بہنو
تمھارا خوں رائیگاں نہ ہوگا
یہ خون کے قطرے
یہ سرخ تارے
جو قلب بنگال میں
فروزاں ہیں پرچموں پر جوان ہوں گے
انھیں کی گرمی سے انتقام اپنی آگ پیدا کرے گا اک دن
انھیں کی سرخی سے پھول اپنی بہار لیں گے
انھیں کی بیتابیوں انھیں کی تڑپ سے وہ سورما اٹھیں گے
جو ظلم کے راج کو جہنم کی پستیوں میں ڈھکیل دیں گے
وہ سب تمھارے سپوت ہوں گے
اور ان کی نسلوں کے بانکپن میں
تمھاری مقتول مامتا جاوداں رہے گی

# بمبئی

سبز و شاداب ساحل
ریت کے اور پانی کے گیت
مسکراتے سمندر کا سیال چہرہ
چاند سورج کے ٹکڑے
لاکھوں آئینے موجوں میں بکھرے ہوئے
کشتیاں بادبانوں کے آنچل میں اپنے سروں کو چھپائے ہوئے
جال نیلے سمندر میں ڈوبے ہوئے
خاک پر سوکھتی مچھلیاں
گھاٹنیں۔ پتھروں کی وہ ترشی ہوئی مورتیں
ایلنفیتا کے غاروں سے جو رقص کرتی نکل آئی ہیں

راتیں آنکھوں میں جادو کا کاجل لگائے ہوئے
شامیں نیلی ہوا کی نمی میں نہائی ہوئی
صبحیں شبنم کے باریک ملبوس پہنے ہوئے
خواب آلود کہسار کے سلسلے
جنگلوں کے گھنے سایے

مٹی کی خوشبو
مہکتی ہوئی کونپلیں

پتھروں کی چٹانیں
اپنی باہوں میں بحرِ عرب کو سمیٹے ہوئے

وہ چٹانوں پہ رکھے ہوئے اونچے اونچے محل
چکنی دیواروں پر
قتل، غارت گری، بزدلی، نفع خوری کی پرچھائیاں
ریشمی ساریاں
مخملیں جسم، زہریلے ناخونوں کی بلّیاں
خون کی پیاس کھادی کے پیراہنوں میں

جگمگاتے ہوئے قمقمے، پارک باغات اور میوزیم
سنگِ مرمر کے بت، دھات کے آدمی
سرد و سنگین عظمت کے پیکر
آنکھیں بے نور، لب بے صدا، ہاتھ بے جان
ہند کی بے بسی اور محکومی کی یادگاریں
سیکڑوں سال کے گرم آتش کدے
زرد صندل کی آگ
عود و عنبر کے شعلے

'چالیں' افلاس کی گرد، تاریکیاں
گندگی اور عفونت
گھورے سڑتے ہوئے
رہگذاروں پہ سوتے ہوئے آدمی

ٹاٹ پر، اور کاغذ کے ٹکڑوں پہ پھیلے ہوئے جسم، سوکھے ہوئے ہاتھ
زخم کی آستینوں سے نکلی ہوئی ہڈیاں
کوڑھیوں کے ہجوم
'کھولیاں' جیسے اندھے کنویں
گرم سینوں، محبت کی گودوں سے محروم بچے
بکریوں کی طرح رسیوں سے بندھے
ان کی مائیں ابھی کارخانوں سے واپس نہیں آئی ہیں

چمنیاں بھتنیوں کی طرح بال کھولے ہوئے
کارخانے گرجتے ہوئے
خون کی اور پسینے کی بو میں شرابور
خون سرمایہ داری کے نالوں میں بہتا ہوا
بھٹیوں میں ابلتا ہوا
سرد سکوں کی صورت میں جمتا ہوا
سونے چاندی میں تبدیل ہوتا ہوا
بنک کی کھڑکیوں میں چراغاں
سڑکیں دن رات چلتی ہوئی
سانس لیتی ہوئی
آدمی خواہشوں کے اندھیرے نشیبوں میں سیلاب کی طرح بہتے ہوئے
چور بازار، سٹہ، جواری
ریس کے گھوڑے، سرکار کے منتری
سنیما، لڑکیاں، ایکٹر، مسخرے
ایک اک چیز بکتی ہوئی
گاجریں، مولیاں، ککڑیاں
جسم اور ذہن اور شاعری

علم، حکمت، سیاست
انکھڑیوں اور ہونٹوں کے نیلام گھر
عارضوں کی دکانیں
بازوؤں اور سینوں کے بازار
پنڈلیوں اور رانوں کے گودام
دیش بھگتی کے دلال کھادی کے بیوپاری
عقل، انصاف، پاکیزگی، اور صداقت کے تاجر

یہ ہے ہندوستاں کی عروس البلاد
سرزمینِ دکن کی دلہن بمبئی
ایک جنت جہنم کی آغوش میں
یا اسے یوں کہوں
ایک دوزخ ہے فردوس کی گود میں

یہ مرا شہر ہے
گو میرا جسم اس خاکداں سے نہیں
میری مٹی یہاں سے بہت دور گنگا کے پانی سے گوندھی گئی ہے
میرے دل میں ہمالہ کے پھولوں کی خوشبو بسی ہے
پھر بھی اے بمبئی تو مرا شہر ہے
تیرے باغات میں میری یادوں کے کتنے ہی رم خوردہ آہو
میں نے تیرے پہاڑوں کی ٹھنڈی ہوا کھائی ہے
تیری شفاف جھیلوں کا پانی پیا ہے
تیرے ساحل کی ہنستی ہوئی سیپیاں مجھ کو پہچانتی ہیں
ناریل کے درختوں کی لمبی قطاریں
تیرے نیلے سمندر کے طوفان اور قہقہے

تیرے دلکش مضافات کے سبزہ زاروں کی خاموشیاں
رنگتیں، نکہتیں، سب مجھے جانتی ہیں
اس جگہ میرے خوابوں کو آنکھیں ملیں
اور میری محبت کے بوسوں نے اپنے حسیں ہونٹ حاصل کیے

بمبئی
تیرے سینے میں سرمایہ کا زہر بھی
انقلاب اور بغاوت کا تریاق بھی
تیرے پہلو میں فولاد کا قلب ہے
تیری نبضوں میں مزدور و ملاح کا خون ہے
تیری آغوش میں کارخانوں کی دنیا بسی ہے
سیوری، لال باغ اور پریل
اور یہاں تیرے بیٹے تری بیٹیاں
ان کی دکھتی ہوئی انگلیاں
سوت کے ایک اک تار سے
ملک کے قاتلوں کا کفن بن رہی ہیں

# دکن کی شہزادی

بمبئی اے دکن کی شہزادی
نیلگوں سندری اجنتا کی
اپنی اونچی چٹان سے نیچے
اپنے بالوں کو دھونے آئی ہے
پنڈلیاں مچھلیاں ہیں چاندی کی
پاؤں ڈوبے ہوئے سمندر میں
انگلیاں کھیلتی ہیں پانی سے
جلتے ہیروں کی لاکھوں آنکھوں سے
پگھلے نیلم کے نیلے ہونٹوں سے
میرے خوابوں میں مسکراتی ہے
دل کے طوفان خیز ساحل پر
موجیں گاتی ہیں رقص کرتی ہیں
جھاگ کے آنچلوں کو لہراتی
چاندنی کی انگوٹھیاں پہنے
بھیگے تاروں کے پھول برساتی

تیری قوس قزح کی گردن میں
موج بحر عرب کی باہیں ہیں
تیرے ماتھے کو پیار کرتی ہیں
ترچھی پرچھائیاں جہازوں کی
خوں کی گردش میں ہے مشین کا راگ
ناچتی انگلیوں میں سوت کے تار
جسم پر سیپیوں کی نرم چمک
اور نظروں میں موتیوں کا غرور
میں ہمالہ کے دیس کا باسی
تو سمندر کی گود کی پالی
کیا کہوں کیسے یاد آتی ہے
ذہن کے ملگجی اجالے میں
تیری تصویر جھلملاتی ہے
چاندنی رات میں گلاب کا پھول

(سنٹرل جیل ناسک)

# اودھ کی خاک حسین

گزرتی برسات آتے جاڑوں کے نرم لمحے
ہواؤں میں تتلیوں کی مانند اڑ رہے ہیں
میں اپنے سینے میں دل کی آواز سن رہا ہوں
رگوں کے اندر لہو کی بوندیں مچل رہی ہیں
مرے تصور کے زخم خوردہ
افق سے یادوں کے کارواں یوں گزر رہے ہیں
کہ جیسے تاریک شب کے تاریک آسماں سے
چمکتے تاروں کے مسکراتے ہجوم گزریں

میں قید خانے میں عشق پیچاں کی سبز بیلوں کو ڈھونڈتا ہوں
جو پھیل جاتی ہیں اپنے پھولوں کے ننھے ننھے چراغ لے کر
کہاں ہیں وہ دلنواز بانہیں
وہ شاخ صندل
کہ جس پر انگڑائیوں نے اپنے حسیں نشیمن بنا لیے ہیں
میں اپنی ماں کے سفید آنچل کی چھاؤں کو یاد کر رہا ہوں
میری بہن نے مجھے لکھا ہے

ندی کے پانی میں بید کی جھاڑیاں ابھی تک نہا رہی ہیں
پپیہے رخصت نہیں ہوئے ہیں
ابھی وہ اپنی سریلی آواز سے دلوں کو لبھا رہے ہیں

میں رات کے وقت اپنے خوابوں میں چونک پڑتا ہوں جیسے مجھ کو
اودھ کی مٹی بلا رہی ہے
حسین جھیلیں کنول کے پھولوں کی چادروں میں ڈھکی ہوئی ہیں
فضاؤں میں میگھ دوت[1] پرواز کر رہے ہیں
نہ جانے کتنی محبتوں کے پیام لے کر
گھٹاؤں کی اپسرائیں اپنی
گھنیری زلفوں میں آخری بار مسکرا کر
خلیج بنگال اور بحرِ عرب کے موتی پرو رہی ہیں
ہرے پروں اور نیلے پھولوں کے مور خوش ہو کے ناچتے ہیں
قدیم گنگا کا پاک پانی زمیں کے دامن کو دھو رہا ہے
وہ کھیتیاں دھان سے بھری ہیں
جہاں ہوائیں ازل کے دن سے ستار اپنے بجا رہی ہیں
ہمالیہ کی بلندیاں برف سے ڈھکی ہیں
ان آسماں بوس چوٹیوں کو
سحر کے سورج نے سات رنگوں کی کلغیوں سے سجا دیا ہے
شفق کی سرخی میں میری بہنوں کی مسکراہٹ گھلی ہوئی ہے

مرے تصور میں ساقیوں کا خرام رنگیں نہ جام و مینا کی گردشیں ہیں
نہ میکدے ہیں نہ شورشیں ہیں
میں چھوٹے چھوٹے گھروں کی چھوٹی سی زندگی میں گھرا ہوا ہوں

---

1۔ 'میگھ دوت' بہ معنی بادل۔ اس نام کی مشہور نظم کالی داس نے لکھی تھی جس میں بادل محبت کا پیامی ہے۔

اندھیرے قصبوں کو یاد کر کے تڑپ رہا ہوں
وہ جن کی گلیوں میں میرے بچپن کی یادیں اب تک بھٹک رہی ہیں
جہاں کے بچے پرانے کپڑوں کی میلی گڑیوں سے کھیلتے ہیں
وہ گاؤں جو سیکڑوں برس سے بسے ہوئے ہیں
کسانوں کے جھونپڑوں پہ ترکاریوں کی بیلیں چڑھی ہوئی ہیں
پرانے پیپل کی جڑ میں پتھر کے دیوتا بے خبر پڑے ہیں
قدیم برگد کے پیڑ اپنی جٹائیں کھولے ہوئے کھڑے ہیں

یہ سیدھے سادے غریب انسان نیکیوں کے مجسمے ہیں
یہ محنتوں کے خدا یہ تخلیق کے پیمبر
جو اپنے ہاتھوں کے کھردرے پن سے زندگی کو سنوارتے ہیں
لہار کے گھن کے نیچے لوہے کی شکل تبدیل ہو رہی ہے
کمہار کا چاک چل رہا ہے
صراحیاں رقص کر رہی ہیں
سفید آٹا سیاہ چکی سے راگ بن کر نکل رہا ہے
سنہرے چولہوں میں آگ کے پھول کھل رہے ہیں
پتیلیاں گنگنا رہی ہیں
دھوئیں سے کالے توے بھی چنگاریوں کے ہونٹوں سے ہنس رہے ہیں
دوپٹے آنگن میں ڈوریوں پر ٹنگے ہوئے ہیں
اور ان کے آنچل سے دھانی بوندیں ٹپک رہی ہیں
سنہری پگڈنڈیوں کے دل پر
سیاہ لہنگوں کی سرخ گوٹیں مچل رہی ہیں

یہ سادگی کس قدر حسیں ہے
میں جیل میں بیٹھے بیٹھے اکثر یہ سوچتا ہوں

جو ہو سکے تو اودھ کی پیاری زمین کو گود میں اٹھا لوں
اور اس کی شاداب لہلہاتی ہوئی جبیں کو
ہزاروں بوسوں سے جگمگا دوں

میں اپنے بچپن کے ساتھیوں کی گرجتی آواز سن رہا ہوں
وہ کارخانوں کے سامنے انقلاب بن کر کھڑے ہوئے ہیں
وہ کھیتیوں میں بہار بن کر رواں دواں ہیں
اندھیری کانوں کی تیرگی میں
وہ نور بن کر اتر رہے ہیں
زمیں کے سینے پہ کاشتکاروں کی لاٹھیوں کے
ہزاروں جنگل اگے ہوئے ہیں
کدالیں کھیتوں کی پاسباں ہیں
درانتیاں جگمگا رہی ہیں
زمین کے غاصبوں کے چہرے کا رنگ کافور ہو رہا ہے
ملوں کے مالک لرز رہے ہیں

غریب سیتا کے گھر پہ کب تک رہے گی راون کی حکمرانی
دروپدی کا لباس اس کے بدن سے کب تک چھنا کرے گا
شکنتلا کب تک اندھی تقدیر کے بھنور میں پھنسی رہے گی
یہ لکھنؤ کی شگفتگی مقبروں میں کب تک دبی رہے گی
سروں کے اوپر مصیبتوں کے پہاڑ کب تک گرا کریں گے
بلکتی آنتوں کو بھوک کب تک ڈسا کرے گی
زمیں کے سینے پہ قاتلوں کے گروہ کب تک چلا کریں گے
خباثتیں کب تلک اہنسا کا روپ دھارے پھرا کریں گی

کسان جو اپنی پاک دھرتی پہ جانور کی طرح جھکے ہیں
وہ جن کی پیٹھوں پہ بھاری اینٹیں لدی ہوئی ہیں
جو کچے چمڑے کے سخت جوتوں سے پٹ رہے ہیں
یہ جسم جو کارخانے داروں کی بھٹیوں میں ابل رہے ہیں
یہ ہاتھ لوہے کے دانت جن کو چبا رہے ہیں
یہ خون جو نفع خور بنیوں کی تھیلیوں میں کھنک رہا ہے
یہ عورتیں جن کے ہاتھ پیچھے بندھے ہوئے ہیں
جو اونچے پیڑوں پہ اپنے بالوں کی پھانسیوں میں لٹک رہی ہیں
یہ کانپتی مفلسی جو آئی ہے چھاتیوں کا لگان لے کر
یہ ننھے بچے جو مالکوں کے مویشیوں کو چرا رہے ہیں
جو کھیت مزدور بھو کے رہ کر زمیں سے گیہوں اگا رہے ہیں
یہ اپنے سینے کی آگ کب تک دبا سکیں گے
یہ اپنی نفرت کا زہر کب تک چھپا سکیں گے
یہ زخم کب تک ہرے رہیں گے

اودھ کی خاک حسیں کے ذرّے بگولے بن کر مچل رہے ہیں
اب آنسوؤں کی پرانی جھیلوں سے سرخ شعلے ابل رہے ہیں
غموں کی بھاری سلیں دلوں سے سرک رہی ہیں
شجاعتیں گو پھنوں کو لے کر نکل رہی ہیں
جھکے ہوئے سر ابھرتے سورج کی شان و شوکت سے اٹھ رہے ہیں
یہ سورماؤں کی سرزمیں ہے
یہ آسمان خموش طوفان برق و باراں کا آسماں ہے
یہ مسکراتی ہوئی فضا سرخ آندھیوں سے بھری ہوئی ہے
یہاں کا ایک ایک چپہ لاکھوں بغاوتوں سے بسا ہوا ہے
بغاوتیں جو ہر اک شہنشاہیت کی چولیں ہلا چکی ہیں

بغاوتیں سامراج کو جو بلندیوں سے گرا چکی ہیں
بغاوتیں جو فرنگیوں کے دلوں پہ ہیبت بٹھا چکی ہیں
یہی پرانی بغاوتیں پھر نئے سرے سے جواں ہوئی ہیں

مرے وطن کی زمیں کو ناپاک کرنے والو
میں ان پرانی نئی عوامی بغاوتوں ہی کا ترجماں ہوں
میں اپنے اہلِ وطن کے احساس اور جذبات کی زباں ہوں
میں خاک سے کہہ رہا ہوں اپنے اناج کو کوکھ میں چھپا لے
لٹیرے کھیتوں میں پھر رہے ہیں
میں لاکھوں مزدور نوجوانوں کے ساتھ میداں میں آ رہا ہوں
غدر کے مقتول سورماؤں کو مرقدوں سے اٹھا رہا ہوں
میں چوری چورا کے سوئے شیروں کو گیت گا کر جگا رہا ہوں
چمن کے پھولو چمن میں اک آگ سی لگا دو
لچکتی شاخوں فضا میں زنجیر بن کے پھیلو
زمیں کی دھاتو ہوا میں جوالا مکھی اچھالو
ملو کے بہتو بغاوتوں کے ترانے گاؤ
کہاں ہو اے نیکیوں کی فوجو
بدی کے اونچے محل گرا دو
صداقتو آؤ جھوٹ کے سانپ کو کچل دو
حیات کی تیز و تند موجو فنا کے خاشاک کو بہا دو
سحر کی کرنو اندھیری راتوں کے سر پہ برسو
عوام کے دشمنوں کا نام و نشاں مٹا دو
اودھ کی خاک حسیں کے ذرّو
جو سیکڑوں میل دور سے اڑ کے میرے خوابوں میں آ گئے ہو
مرے وطن کی زمیں سے میرا سلام کہنا

اسے بتانا
کہ میرے ہونٹوں پہ سنگ و آہن کی سرد مہریں لگی ہوئی ہیں
وہ کالا قانون ایک دیوار بن کے رستے میں آ گیا ہے
جسے اہنسا کا نام لے کر پجاریوں نے کھڑا کیا ہے
مگر یہ دیوار روک سکتی نہیں ہے مجھ کو
ابلتے جوالامکھی کو کوئی دبا سکا ہے؟
میں آج مجبور ہوں تو کیا ہے
وطن سے کچھ دور ہوں تو کیا ہے
مگر میں اس کے مجاہدوں کی صفوں سے باہر نہیں گیا ہوں

# میرے خواب

اے مرے حسیں خوابو
تم کہاں سے آئے ہو
کس افق سے ابھرے ہو
کس شفق سے نکھرے ہو
کن گلوں کی صحبت میں
تم نے تربیت پائی
کس جہاں سے لائے ہو
یہ جمال و رعنائی

جیل تو بھیانک ہے
اس ذلیل دنیا میں
حسن کا گزر کیسا
رنگ ہے نہ نکہت ہے
نور ہے نہ جلوہ ہے
جبر کی حکومت ہے
تم کہاں سے آئے ہو
اے مرے حسیں خوابو

میں نے تم کو دیکھا ہے
یاد اب نہیں آتا
شاید ایک لڑکی کی
تھرتھراتی پلکوں میں
جگمگاتی آنکھوں میں
یا کسی تبسم میں
جو نہا کے نکلا ہو
آنسوؤں کی شبنم سے

اک ہمکتے بچے کی
مٹھیوں کے پھولوں پر
تتلیوں کی یورش سی
اور ماں کی نظروں میں
سیکڑوں امیدوں کے
شوخ رنگ گلدستے
میں نے تم کو دیکھا ہے
ننھی ننھی گڑیوں میں
ناچتے کھلونوں میں
یا ربر کی گیندوں میں
میں نے تم کو دیکھا ہے
گھٹنیوں چلے ہو تم
توتلی زبانوں سے
تم نے دودھ مانگا ہے

ایک شاہزادہ تھا
ایک شاہزادی تھی
اس حسیں کہانی پر
جانے کتنے بچوں نے
اپنے سر اٹھائے ہیں
جانے کتنی آنکھوں میں
پھول مسکرائے ہیں
اور میں سمجھتا ہوں
تم اسی کہانی کی
سر زمیں سے آئے ہو

کچھ کسان کنیائیں
سبز و سرخ شیشوں کی
چوڑیاں کلائی میں
اور گلٹ کی چاندی کی
ہنسلیوں سے گردن میں
نیم چاند کے حلقے
چولیوں پہ لہنگوں پر
زرد زرد مٹی کے
زرد بیل بوٹے سے
میلے میلے آنچل پر
بالیوں کے بوسے ہیں
ان کے ہاتھ میں ہنسیے

گیت گانے لگتے ہیں
جھوم جھوم کر پودے
اپنا سر جھکاتے ہیں
نوجوان لٹھیارے
کھیت کی منڈیروں پر
پریم گیت گاتے ہیں
اے مرے حسیں خوابو
تم انھیں بہاروں کی
کونپلوں سے پھوٹے ہو
ایک کار خانے میں
چند نوجوانوں نے
انجمن بنائی ہے
اور اس میں لینن کی
اک کتاب پڑھتے ہیں
سن رہی ہیں دیواریں
ہنس رہی ہے تاریکی
نوجوان بیٹھے ہیں
اور کتاب پڑھتے ہیں
ایک ایک جملے پر
چونک چونک پڑتے ہیں
ایک ایک فقرے پر
اپنا سر ہلاتے ہیں
گاہ آہ بھرتے ہیں

گاہ مسکراتے ہیں
میں نے ان کے سینوں میں
اے مرے حسیں خوابو
تم کو ناچتے دیکھا
میں نے تم کو دیکھا ہے
جب سیاہ محرابیں
آسماں پہ بنتی ہیں
جب سکوت کی پریاں
کہکشاں پہ چلتی ہیں
گیسوؤں کی نکہت سے
جب ہوا مہکتی ہے
جب فضا چہکتی ہے
میرے گرم ہونٹوں پر
پیار تھر تھراتے ہیں
اور میری محبوبہ
اپنے رنگِ عارض سے
بجلیاں بناتی ہے
اور میری نظروں میں
اک جہان مٹتا ہے
اک جہان بنتا ہے
اک زمین ہٹتی ہے
اک زمین آتی ہے

میں اسیر ہوں لیکن
تم کو کوئی بھی قانون
قید کر نہیں سکتا
سر بلند اور آزاد
یوں ہی مسکرائے جاؤ
میرے دل کی دنیا میں
یوں ہی جگمگائے جاؤ
قید و بند کے جلّاد
تم کو پا نہیں سکتے
لمبے لمبے ظالم ہاتھ
تم کو چھو نہیں سکتے
اے مرے حسیں خوابو

# شادی کا دن

سفید بادل
لرزتے آنچل
بلند و بالا حسین نیلا ہٹوں کے سر سے ڈھلک گئے تھے
فضا کے چہرے پہ مست ہو کر
ہزاروں کرنیں بکھر گئی تھیں
ہرے بھرے پیڑ
روشنی
روشنی کے جھولے
ہوا کی پینگیں
شریر بچوں کی طرح سے پتیوں کی معصوم کھلکھلاہٹ
زمین کو نرم گھاس کی ننھی انگلیاں گدگدا رہی تھیں
یہ دن بہت ہی حسین دن تھا
جسے تمھارے حسین اقرارِ عشق نے اور خوبصورت بنا دیا تھا
یہ دن اُسی طرح سج کے پھر آج آ گیا ہے
سفید ہاتھوں سے کوٹھری کی سیہ سلاخوں کو چھو رہا ہے
وہی تبسم، وہی تمھارا سا شوخ اندازِ دلربائی
مگر نگاہوں میں وہ پرانی چمک نہیں ہے
کہ اس کی آنکھوں میں ہلکے ہلکے
سیاہ حلقے پڑے ہوئے ہیں

سنٹرل جیل، ناسک
30 جنوری 1950

# جیل کی رات

پہاڑ سی رات
اداس تارے، تھکے مسافر
گھنا اندھیرا، سیاہ جنگل
جہاں سلاخیں اُگی ہوئی ہیں
اذیتوں کے پرانے عفریت قیدیوں کو نگل رہے ہیں
خموشی سہمی ہوئی کھڑی ہے
سیاہی اپنے سیاہ دانتوں سے روشنی کو چبا رہی ہے
اچاٹ نیندوں کے ناگ آنکھوں کو ڈس رہے ہیں
میں چھدر رہا ہوں ہزار کانٹوں سے اپنی بے چین کروٹوں میں
یہ رات بھی کل کی رات کی طرح اپنی سفاکیوں کو لے کر
افق کے اس پار جا چھپے گی
مگر مجھے ڈس نہیں سکے گی
مری نگاہوں میں میری محبوب تیری صورت رچی ہوئی ہے
یہ چاند میری حسین یادوں کے آسماں پر کھلا ہوا ہے
ترے تصور سے میرے سینے میں چاندنی ہے

جنوری 1950

# تمھاری آنکھیں

تمھاری آنکھیں
حسین، شفاف، مسکراتی، جوان آنکھیں
لرزتی پلکوں کی چلمنوں میں
شہابی چہرے پہ ابروؤں کی کماں کے نیچے
تمھاری آنکھیں
وہ جن کے نظروں کے ٹھنڈے سایے میں میری اُلفت
مری جوانی کی رات پروان چڑھ رہی تھی
تمھاری آنکھیں
اندھیری راتوں میں جو ستاروں کی روشنی سے
فضائے زنداں میں جھانکتی ہیں

میں لکھ رہا ہوں
تمھاری آنکھیں سفید کاغذ پہ اپنی پلکوں سے چل رہی ہیں
میں پڑھ رہا ہوں
تمھاری آنکھیں ہر اک سطر کی بھوؤں کے نیچے لرز رہی ہیں
میں سو رہا ہوں

تمھاری آنکھیں تمھاری پلکیں کہانیاں سی سُنا رہی ہیں
میں دوستوں اور ساتھیوں میں گھرا ہوا ہوں
مسرّتوں کے گلاب ہر سمت کھل رہے ہیں
تمھاری آنکھوں کے پھول گویا مہک رہے ہیں

مجھے گرفتار کر کے جب جیل لا رہے تھے پولیس والے
تم اپنے بستر سے اپنے دل کے
ادھورے خوابوں کو لے کے بیدار ہو گئی تھیں
تمھاری پلکوں سے نیند اب بھی ٹپک رہی تھی
مگر نگاہوں میں نفرتوں کے عظیم شعلے بھڑک اٹھے تھے
تمھاری آنکھیں حقارتوں کے جہنموں کو جگا رہی تھیں
نظامِ ظلم و ستم پہ بجلی گرا رہی تھیں

مری محبت نے اپنی جنت کا حسن دیکھا
تمھاری آنکھوں پہ میری نظروں کے پیار برسے
مری امیدوں، مری تمناؤں نے صدا دی
یہ نفرتوں کی عظیم مشعل جلائے رکھنا
کہ یہ محبت کے دل کا شعلہ ہے جس کی رنگین روشنی میں
ہمارے خوابوں کے راستے جگمگا رہے ہیں
تمھاری آنکھیں
جو میرے سینے میں تیرتی ہیں
کنول کی کلیاں جو میرے دل میں کھلی ہوئی ہیں

انھیں سے دو اور آنکھیں بیدار ہو گئی ہیں
وہ ننھے ننھے چمکتے ہیروں کی ننھی کنیاں
جو میری آنکھوں کا نور لے کر تمھارے آنچل سے جھانکتی ہیں
پھر اور آنکھیں، پھر اور آنکھیں، پھر اور آنکھیں
یہ سلسلہ تا ابد رہے گا
زمانے کی گود میں ستاروں کے حسن کی ندیاں بہیں گی
وہ سب تمھاری
وہ سب ہماری ہی آنکھیں ہوں گی
ہماری آنکھیں کہ جن سے شعلے برس رہے ہیں
مگر وہ کل کا حسین دن دیکھو کتنا نزدیک آ گیا ہے
ہماری آنکھوں سے جب بہاریں چھلک پڑیں گی

جنوری 1950

# تجدیدِ وفا

پھول تھے سرخ بہاریں تھیں جواں
وہ مہکتی ہوئی باتیں وہ مہکتے ہوئے ہونٹ
وہ تبسم کہ شفق شرمائے
قہقہے، راگنی جس طرح فضا میں لہرائے
جسم پاکیزہ و شاداب و جواں
چاندنی جیسے مجسم ہو جائے

ایسے ہی حسن سے یونان کے فنکاروں نے
اپنی وینس کے تصور کو تراشا ہو گا
ایسے ہی حسن کے چہرے سے تصور لے کر
عہدِ پارینہ کے نقاشوں نے
اپنے خوابوں کے اجنتا کو سنوارا ہو گا

وہ سمندر کا کنارہ وہ چمکتی ہوئی ریت
موجیں، پگھلے ہوئے نیلم کی طلسمی پریاں
رقص کرتی ہوئی آتی تھیں ترے قدموں میں

اور پھر ریت میں کھو جاتی تھیں
ڈوبتی شام کے سورج کی سنہری کرنیں
تیرے کاکل، ترے رخسار پہ سو جاتی تھیں
اور ہوائیں ترے آنچل کو، ترے شانوں کو
شوق سے چوم کے دیوانی سی ہو جاتی تھیں
اور میں اپنے رقیبوں پہ ہنسا کرتا تھا

اپنی وارفتگیٔ شوق کا عالم ہے وہی
دلِ بیتاب وہی دیدۂ پرنم ہے وہی

سنٹرل جیل ناسک
جنوری 1950

# نیند

(اپنے بچے کی پہلی سالگرہ پر)

رات خوبصورت ہے
نیند کیوں نہیں آتی

دن کی خشمگیں نظریں
کھو گئیں سیاہی میں
آہنی کڑوں کا شور
بیڑیوں کی جھنکاریں
قیدیوں کی سانسوں کی
تند و تیز آوازیں
جیلروں کی بدکاری
گالیوں کی بوچھاریں
بے بسی کی خاموشی
خامشی کی فریادیں
تہہ نشیں اندھیرے میں
شب کی شوخ دوشیزہ

خار دار تاروں کو
آہنی حصاروں کو
پار کر کے آئی ہے
بھر کے اپنے آنچل میں
جنگلوں کی خوشبوئیں
ٹھنڈکیں پہاڑوں کی
میرے پاس لائی ہے

نیلگوں جواں سینہ
نیلگوں جواں بانہیں
کہکشاں کی پیشانی
نیم چاند کا جوڑا
مخملیں اندھیرے کا
پیرہن لرزتا ہے
وقت کی سیہ زلفیں
خامشی کے شانوں پر
خم بہ خم مہکتی ہیں
اور زمیں کے ہونٹوں پر

نرم شبنمی بوسے
موتیوں کے دانتوں سے

کھلکھلا کے ہنستے ہیں
رات خوبصورت ہے
نیند کیوں نہیں آتی

رات پینگ لیتی ہے
چاندنی کے جھولے میں
آسمان پر تارے
ننھے ننھے ہاتھوں سے
بُن رہے ہیں جادو سا
جھینگروں کی آوازیں
کہہ رہی ہیں افسانہ
دور جیل کے باہر
بج رہی ہے شہنائی
ریل اپنے پہیوں سے
لوریاں سناتی ہے
رات خوبصورت ہے
نیند کیوں نہیں آتی

روز رات کو یونہی
نیند میری آنکھوں سے

بیوفائی کرتی ہے
مجھ کو چھوڑ کر تنہا
جیل سے نکلتی ہے
بمبئی کی بستی میں
میرے گھر کا دروازہ
جاکے کھٹکھٹاتی ہے
ایک ننھے بچّے کی
انکھڑیوں کے بچپن میں
میٹھے میٹھے خوابوں کا
شہد گھول دیتی ہے
اک حسیں پری بن کر
لوریاں سناتی ہے
پالنا ہلاتی ہے

سنٹرل جیل ناسک
اپریل1950

# ایک سال

قید کیا چیز ہے، زنداں کی حقیقت کیا ہے؟
قبر کی گود میں سوئے ہوئے سال
تیری سمٹی ہوئی ٹھٹھری ہوئی پرچھائیں پر
جیل کے بھونکتے کتوں کی صدا روتی ہے
میں حقارت سے نظر ڈال کے ہنس دیتا ہوں

زہر آلودہ وہ بیتے ہوئے لمحات کے ڈنک
خوں میں ڈوبی ہوئی وہ صبح کی تلوار کی دھار
شام کی آنکھ میں بارود کے کاجل کی لکیر
اور ہفتوں کے سپاہی وہ مہینوں کے سوار
جو مرے جوشِ بغاوت کو کچلنے کے لیے
فوج در فوج کیا کرتے تھے یلغار اپنی
میں انھیں بھی ترے پہلو میں سلا آیا ہوں
پہرہ داروں کی نگاہوں سے ٹپکتا ہے لہو
رائفل کرتی ہے فولاد کے ہونٹوں سے کلام
گولیاں کرتی ہیں سیسے کی زباں سے باتیں

اور قانون وہ سرمایے کی زنجیر گراں
حلقے حلقے میں لیے اپنی ادا کا فریب
اپنے دامن کو بڑھاتا ہی چلا جاتا ہے
کینچلی سانپ کی ہر سال بدل جاتی ہے
عدل و انصاف مداری کے پٹارے جن میں
ناگ بیٹھے ہیں تو انہیں نے پھن پھیلائے
اور آئین کا بین
اپنی لہروں میں چھپا لیتا ہے
تلخیٔ زہر میں ڈوبی ہوئی پھنکاروں کو

پھر بھی قربانی و ایثار کا دل زندہ ہے
جہد و پیکار کی نبضوں کی دھمک جاری ہے
وقت و تاریخ کی راہوں سے گزرتے ہیں جلوس

(2)

چین میں کتنی جواں سال امنگوں کا لہو
ہو گیا صرف نئی صبح کے غازے کے لیے
اور یونان کی آزاد حسیناؤں نے
کتنے دل فصلِ بہاراں کے لیے بوئے ہیں
چشم اسپین سے راتوں کے برستے آنسو
مضطرب گوہر و شبنم میں بدلنے کے لیے
ویت نام اور ملایا کے شہیدوں کا لہو
شفق سرخ کے جلتے ہوئے آئینے میں
ایک تصویر حسیں بن کے جھلک آیا ہے

خاک بر ما نے اگائے ہیں وہ شعلے جن میں
مسکرانے کے لیے ہیں بیتاب
چاند سورج کے کنول، فصلِ بہاراں کے گلاب
اور تلنگانے کی نظروں سے برستی ہوئی آگ
دوڑتی ہے خس و خاشاک غلامی کے لیے
روحِ بنگال کے زخموں کو ملی ہیں آنکھیں
درد و فریاد نے نعروں کی زباں پائی ہے
گوشے گوشے سے ابلتے ہوئے سیلاب کا جوش
ذرّے ذرّے سے نکلتے ہوئے انوار کا رقص
موت کا کرب غلامی کا بھیانک چہرہ
جاگتے اور ابھرتے ہوئے انساں کا جلال
قید کیا چیز ہے زنداں کی حقیقت کیا ہے؟

(3)

روز و شب کیا ہیں
فقط سنگِ نشاں راہوں کے
ماہ اور سال بجز گردِ سفر کچھ بھی نہیں
جیل ہر گام پہ آتی ہے گزر جاتی ہے
وادیاں ملتی ہیں غفلت کی، مصیبت کے پہاڑ
بھوک اور پیاس کے صحراؤں میں دل جلتے ہیں
خون کے کھولتے دریا میں ابلتی ہے حیات
گرم سنگینوں کے پرخار بیابانوں میں
نقشِ پا سرخ لکیروں میں بدل جاتے ہیں
کارواں منزلِ مقصود کی جانب ہے رواں

نظریں پلکوں سے اٹھاتی ہیں مناظر کے نقاب
خواب جاگ اٹھتے ہیں پھولوں کے گلستاں لے کر

(4)

مجھ کو تنہائی کا احساس نہیں ہے کہ یہاں
کتنی نوخیز امنگیں ہیں مرے ساتھ اسیر
کتنے کہسار کی آغوش کے پالے ہوئے لال
کتنے کھیتوں کے سپوت
کتنے ریلوں کے مشینوں کے چلانے والے
کتنے بوسوں کی مہک، کتنی ہی زلفوں کی شکن
کتنی بہنوں کی امیدوں کے کنول
کتنی ماؤں کی مرادوں کے چراغ
کتنے دریاؤں کے طوفان، ہوا کے جھونکے
کتنی ہڑتالوں کے اٹھے ہوئے ہاتھ
کتنے احساس بغاوت کے ابھرتے پرچم
جتنے اونچے ہیں مصیبت کے پہاڑ
ہمتیں اتنی ہی بیباک و سرافراز و بلند
حوصلے ہیں کہ ہمالہ کے عقابوں کی اڑان
جن کے شہپر کی ہوا برف کی آندھی بن کر
آسمانوں کی بلندی سے گزر جاتی ہے

اور وہ بوڑھے وہ جہاں دیدہ رفیق
جھریاں جن کی ہیں تاریخ حوادث کے ورق
ہنستی آنکھوں کی چمک، نرم تبسم کی شکن

طنز ہے طرز حکومت کی ستم کاری پہ
ان کے بالوں کی سفیدی یہ خبر دیتی ہے
کہ شب تار غلامی کی سحر دور نہیں

اور وہ شعلہ نفس شاعر و افسانہ نگار
اپنے نغموں کی حرارت سے گلا دیتے ہیں
روح کے بوجھ کو، افکار کی زنجیروں کو
ان کا ہر شعر رجز پڑھتا ہے
ہر سطر کہتی ہے جرأت کی کہانی ہم سے
ان کے ہر گیت سے دل ہلتا ہے دیواروں کا
جیسے بڑھتی ہوئی فوجوں کی دھمک
شعلے آواز کے اس شان سے ہوتے ہیں بلند
آگ لگ جاتی ہے زنداں کے سیہ خانے میں
اور منزل کی جبیں وقت کی محرابوں میں
جگمگا اٹھتی ہے رنگین شعاعوں کی طرح
میرے احساس و تصور کو ہزاروں سورج
لاکھوں چاند اور کروڑوں تارے
رنگ اور نور کی بارش میں بھگو دیتے ہیں

ہم سفر یہ ہوں تو پھر عزم سفر کیا کہنا
رنگ شب یہ ہو تو پھر رنگ سحر کیا کہنا

سنٹرل جیل ناسک
اپریل 1950

# زنداں بہ زنداں

(ترکی کے شاعرِ اعظم ناظم حکمت کے نام)

ناظم، اے شاعرِ آتش گفتار
تو نہیں جیل میں فردوسی و حافظ ہیں اسیر
پابہ زنجیر ہیں ترکی کے عوامی نغمے
بیڑیاں پہنے ہوئے بیٹھی ہے زنداں میں بہار

میرے بھائی مرے مشرق کی بہاروں کے سفیر
غم کی گھنگھور گھٹاؤں میں چمکتے ہوئے چاند
صبح ترکی کے ابھرتے ہوئے سورج کی کرن
میں نے دس سال ہوئے تیری سنی تھی آواز
جو نکل آئی تھی منہ توڑ کے زندانوں سے
آج پھر تیری صدا
حلقۂ طوق و سلاسل سے نکل آئی ہے
نرم، جس طرح سے شبنم میں نہائے ہوئے پھول
گرم، ماؤں کی محبت کی طرح
تیز، پھوڑوں میں اترتے ہوئے نشتر کی طرح

تیری آواز گرجتے ہوئے طوفاں کا جلال
تیری آواز کڑکتی ہوئی بجلی کی چمک
سربلند اور سرافراز عقاب
گیہوں اور دھان کے کھیتوں کی طرح سے بھرپور
ہلکی، اڑتی ہوئی چڑیوں کے پروں کے مانند
بھاری، توپوں کی طرح
حشر انگیز لڑائی کے جہازوں کی طرح
پھر بھی پر امن و حسین و شاداب

آج پھر تیری صدا آئی ہے دس سال کے بعد
انقرہ اور سمرنا کے سیہ خانوں سے
اور میں سوچ رہا ہوں اب بھی
سالہا سال کی تاریکی و تنہائی کے بعد
تیری للکار کی سطوت ہے وہی
تیری آواز میں سونے کی کھنک باقی ہے
ایک بلبل ہے کہ ہے محوِ ترنم اب تک
اس کے سینے میں ہے نغموں کا تلاطم اب تک

# خونیں ہاتھ

یہ وہی ہاتھ ہیں سفاک و دراز
ہاں وہی ہاتھ ستم پیشہ و چالاک و ذلیل
میرے پہچانے ہوئے اور ترے پہچانے ہوئے
وہ جو مغرب کے سیہ پوش اُفق سے نکلے
آگ مشرق کی بہاروں میں لگانے کے لیے
آج بھی میرے حسیں دیس میں بل کھاتے ہیں
آستینوں میں چھپا لیتے ہیں بم ایٹم کے
خوشے گیہوں کے ہتھیلی پہ سجالاتے ہیں

ہاں وہی ہاتھ کڑکتے ہوئے کوڑوں کی طرح
زخم ہر پیٹھ پہ ہر جسم پہ برساتے ہوئے
یا کسی ٹوٹ کے گرتی ہوئی بجلی کی طرح
باغ پر کھیتوں پہ کھلیانوں پہ لہراتے ہوئے
ظلم کی طرح نڈر، رات کی مانند طویل
کوڑھ کی طرح سفید
خشمگیں جیسے جہنم میں دہکتی ہوئی آگ

گرم تلوار کے مانند کلیجوں پہ رواں
ماؤں کے دودھ بھرے سینوں پہ بیٹھے ہوئے ناگ

کیسے بھولوں کہ وہی ہاتھ وہی سانپ ہیں یہ
ڈس چکے ہیں جو محبت کو تمناؤں کو
جن کی پھنکاروں نے بِس گھول دیا پانی میں
جن کی پرچھائیں نے جھلسا دیا صحراؤں کو

ہاں وہی ہاتھ وہی خون میں ڈوبے ہوئے ہاتھ
قتل و غارت کے ارادوں نے جنا ہے جن کو
اسلحہ ساز مشینوں کے تراشے ہوئے ہاتھ
موت کا روپ منافع نے دیا ہے جن کو

آ دان ہاتھوں سے میں ہاتھ ملاؤں کیوں کر
اپنی نفرت کو حقارت کو چھپاؤں کیوں کر

توڑ دو کاٹ دو یا آگ لگا دو ان کو
بن پڑے جیسے بھی گردن سے ہٹا دو ان کو

# بھوکی ماں، بھوکا بچّہ

میرے ننھے، مرے معصوم، مرے نورِ نظر
آ کہ ماں اپنے کلیجے سے لگا لے تجھ کو
اپنی آغوشِ محبت میں سلا لے تجھ کو
تیرے ہونٹوں کا یہ جادو تھا کہ سینے سے مرے
ندیاں دودھ کی بہہ نکلی تھیں
چھاتیاں آج مری سوکھ گئی ہیں لیکن
آنکھیں سوکھی نہیں اب تک مرے لال
درد کا چشمۂ بیتاب رواں ہے ان سے
میرے اشکوں ہی سے تو پیاس بجھا لے اپنی
سنتی ہوں کھیتوں میں اب اناج نہیں اُگ سکتا
کانگرس راج میں سونا ہی پھلا کرتا ہے
گائے کے تھن سے نکلتی ہے چمکتی چاندی
اور تجوری کی درازوں میں سمٹ جاتی ہے

چاند سے دودھ نہیں بہتا ہے
تارے چاول ہیں نہ گیہوں نہ جوار

ورنہ میں تیرے لیے چاند ستارے لاتی
مرے ننھے مرے معصوم مرے نور نظر
آ کہ ماں اپنے کلیجے سے لگا لے تجھ کو
اپنی آغوش محبت میں سلا لے تجھ کو

سو بھی جا میری محبت کی کلی
میری جوانی کے گلاب
میرے افلاس کے ہیرے سو جا
نیند میں آئیں گی ہنستی ہوئی پریاں ترے پاس
بوتلیں دودھ کی شربت کے کٹورے لے کر

جانے آواز کی لوری تھی کہ پریوں کا طلسم
نیند سی آنے لگی بچے کو
کھنچ گئی نیلگوں ہونٹوں پہ خموشی کی لکیر
مٹھیاں کھول دیں اور موند لیں آنکھیں اپنی
یوں ڈھلکنے لگا منکا جیسے
شام کے غار میں سورج گر جائے

جھک گئی ماں کی جبیں بیٹے کی پیشانی پر
اب نہ آنسو تھے، نہ سسکی تھی نہ لوری نہ کلام
ایک سناٹا تھا
ایک سناٹا تھا تاریک وطویل

# آخری رات

کرسیاں، میز، فانوس، رنگین جاموں کی دلکش کھنک
بوتلیں
اپنی لمبی سبک گردنوں میں چھپائے ہوئے
قہقہے، ہچکیاں
اور شرابوں کی رنگت صراحی کے شیشوں پہ بیٹھی ہوئی
سہمی سمٹی ہوئی
کوریا کا لہو
یانکی افسروں کی نگاہوں پہ چھایا ہوا
نوجوانوں کے سینے پلیٹوں میں رکھے ہوئے
ماؤں کی چھاتیاں
تیز کانٹوں کے ناخونوں میں
ننھے بچوں کے گلرنگ رخسار امریکی چھریوں کے نیچے
اور سی یول کا دل، جگر
نوکِ سنگین پر
بم کے شعلوں میں بھونا ہوا
آنسوؤں کی شراب اور چیخوں کا سنگیت

آخری رات ہے، آخری دور ہے، آخری جام ہے
دیکھو کھڑکی کے باہر ذرا جھانک کر
کوریا کی جواں رات کا جسم بارود کی طرح جلنے لگا
اور فضاؤں میں سی یول کے چھاپہ ماروں کی آواز
کی بجلیاں ناچ اٹھیں

# فیض کے نام

کل تھا جب میں جیل میں تنہا
پتھر کے تابوت کے اندر
خاموشی کے سرد کفن میں
لپٹے ہوئے تھے نغمے میرے
کالی سلاخوں کے جنگل میں
دوستوں کی اور محبوبوں کی
کھوئی ہوئی تھیں سب آوازیں
تیرے نغمے ساتھ تھے میرے

اور تیری آواز کی شبنم
گھانس کے لب تر کر جاتی تھی
گل کے کٹورے بھر جاتی تھی
شام کی رنگت بن کر اکثر
روئے جہاں پر چھا جاتی تھی
چاندنی کا ملبوس پہن کر
آم اور املی کے پیڑوں پر

تھک کر جیسے سو جاتی تھی
اور میں تیرے نازک میٹھے
پیارے گیتوں کا گلدستہ
اپنے دھڑکتے دل سے لگائے
خوابوں کی نیلی وادی میں
آہستہ آہستہ چلتا
جیل سے باہر آجاتا تھا
ظلم کے دل پر چھا جاتا تھا

آج مگر تو قید ہے ساتھی
کیسی ہے یہ قید کی دنیا؟
قلب ونظر کی محرومی ہے
تاریکی اور تنہائی میں
پتھر کی خاموش ہنسی ہے
آج ہے جب تو جیل میں تنہا
میں اپنی آواز کا شعلہ
اور اپنی للکار کی بجلی
گیتوں کے ریشم میں رکھ کر
تیری خاطر بھیج رہا ہوں
یہ میری آواز ہے لیکن
صرف مری آواز نہیں ہے
جوش، فراق، آنند اور بیدی
عصمت، ساحر، کرشن، اور کیفی
میری زباں سے بول رہے ہیں
ہند کے سارے لکھنے والے

ناچنے والے، گانے والے
اپنی محبت کے گلدستے
تیری جانب بھیج رہے ہیں
جلتی ہوئی یہ شاخ اٹھا لے
دیکھ اس میں کیا پھول کھلے ہیں
شعلہ، بجلی، نغمہ بن کر
بچھڑے ساتھی آن ملے ہیں
دور ہے گو لاہور کی بستی
اونچی زنداں کی دیواریں
اس جھوٹے آئین کی سرحد
تپتا جنگل، جلتا پربت
دل اور روح کے بیچ میں حائل
پھر بھی کوئی دیوار نہیں جو
زخموں کو تقسیم کرے گی

میرے ہاتھ میں ہاتھ ہے تیرا
تیرے ہاتھ میں ہاتھ ہے میرا
سانس کا زیر و بم ہے یکساں
ہم آہنگ ہے چاپ قدم کی
ایک ہی جادہ ایک ہی منزل
ایک ہی لیلیٰ ایک ہی محمل
ایک ہی مقصد ایک ہی حاصل
میٹھا رہے راوی کا پانی
ٹھنڈی رہیں گنگا کی لہریں
گائے کے تھن سے دودھ کی دھاریں

ساون بھادوں بن کر برسیں
سبز رہیں کھیتوں کے آنچل
بجتی رہے بادل کی چھاگل
دل میں ہوک نہ اُٹھنے پائے
پیٹ میں بھوک نہ اُگنے پائے
گیہوں کا ہر خوشہ سر پر
زرّیں تاج پہن کر آئے
ماؤں کے سینے دودھ سے چھلکیں
ہنستی رہیں بچوں کی پلکیں
زلفوں کے گہرے سائے میں
رنگ برنگے آویزوں کے
ننھے ننھے جگنو چمکیں
چولھے دہکیں، روٹیاں مہکیں
شاخیں لہکیں، چڑیاں چہکیں
باہیں کھنکیں، چوڑیاں گائیں
شانوں پہ آنچل لہرائیں
امن واماں کا جشن منائیں

اپنا مقصد ایک ہے ساتھی
اس مقصد کے آگے سارے
ظالم، دشمن، ڈاکو، قاتل
سہمے ہیں گھبرائے ہوئے ہیں
بستی بستی، جنگل جنگل
ظلم کے بادل چھائے ہوئے ہیں
زنجیروں کے کالے حلقے

## ناگ ہیں پھن پھیلائے ہوئے ہیں

ظلم سے لیکن ڈرنا کیسا
موت سے پہلے مرنا کیسا
'بول کہ لب آزاد ہیں تیرے
بول زباں اب تک تیری ہے'
بول کہ کس قاتل کا دامن
خون بہاراں سے رنگیں ہے
کس کی گردن میں ڈالر کے
سونے کی زنجیر پڑی ہے
کس نے امریکا کے ہاتھوں
خاکِ وطن کو بیچ دیا ہے
بیٹی اور بہن کے آنچل
ماں کے کفن کو بیچ دیا ہے
کون ہے جو جنگی شعلوں میں
پاکستان کو جھونک رہا ہے
کون ہے جو اقبال کے دل میں
ظلم کی کیلیں ٹھونک رہا ہے
شاعر کی آواز کو کس کا
خونیں پنجہ گھونٹ رہا ہے
ریشم کے رومال میں کس کے
رنگ لہو کا چھوٹ رہا ہے
جیلوں کی دیوار میں یہ کون
انسانوں کے دل چنتا ہے
کون ہے جو قانون سے اپنے

مکڑی کا جالا بنتا ہے
کون اجالے سے خائف ہے
کون انسانوں سے ڈرتا ہے
سورج کی کرنوں سے ہراساں
جنتا کی نظروں سے پریشاں
کس نے عدالت کا دروازہ
سنگینوں سے روک دیا ہے
یہ کس نے انصاف کے منہ میں
ظلم کا کپڑا ٹھونس دیا ہے

'بول کہ لب آزاد ہیں تیرے
بول زباں اب تک تیری ہے
تیرا ستواں جسم ہے تیرا
بول کہ جاں اب تک تیری ہے'

اپریل 1951

}{}{}{

# سجاد ظہیر کے نام

مجھے یقیں ہے کہ زنداں میں بھی لبوں پہ تیرے
وہ موجِ نور وہ ہلکا سا اک تبسّم ہے
تری حیات سہی نفرتوں کے گھیرے میں
تری نظر میں محبت بھرا تکلّم ہے

مجھے یقیں ہے کہ زنداں میں بھی خیال ترا
بنا رہا ہے نئے آدمی کی تصویریں
نیا سماج، نئی زندگی، نئی تہذیب
پہنائی جاتی ہیں جس کو ہزار زنجیریں

کھڑی ہوئی ہے ترے سر پہ موت یوں آکر
کہ تو حیات کے پیغمبروں کا رہبر ہے
خزاں کو تیرے گلستانِ زندگی کی تلاش
کہ تیرے سینے میں دل، دل میں اک گلِ تر ہے

اندھیرا تجھ سے خفا ہے کہ اس کے سینے پر
تجھے چراغ جلانے کی آرزو کیوں ہے
بگڑ گئے ہیں لہو کے تمام بیوپاری
کہ تجھ کو امن و محبت کی جستجو کیوں ہے

ہیں قصر چیں بہ جبیں دانت پیستے ہیں محل
کہ تیرے خواب ہیں بدحال جھونپڑوں کے لیے
ہیں جنگ بازترے گرم خون کے پیاسے
کہ تو سکون کا پیغام ہے دلوں کے لیے

یزید و شمر کو قتلِ حسینؓ کی ہے فکر
وہ ارضِ پاک کو بھی کربلا بنا دیں گے
ترا یہ عہد کہ انسانیت کی محفل سے
ستمگروں کا رواجِ ستم اٹھا دیں گے

انھیں یہ فکر کہ ماؤں کی جھڑیاں بک جائیں
تجھے یہ فکر کہ بہنوں کے سر پہ چادر ہو
انھیں یہ فکر کہ زخموں سے چور چور ہوں دل
تجھے یہ فکر کہ دنیا گلوں کا منظر ہو

انھیں یہ فکر کہ تیغ و تفنگ کا ہو عروج
تجھے یہ فکر کہ ہو خنجروں کی رسوائی
انھیں یہ فکر کہ بارود کا اندھیرا چھائے
تجھے یہ فکر کہ پھیلے شفق کی رعنائی

انھیں یہ فکر کہ راتیں طویل ہو جائیں
تجھے یہ فکر کہ رنگِ سحر نکھر آئے
انھیں یہ فکر کہ ٹھہر جائے گردشِ ایام
تجھے یہ فکر کہ سیلابِ غم گزر جائے

جکڑ سکی نہ ارادوں کو تیرے جب زنجیر
تو قاتلانِ کہن آ گئے رسن لے کر
ترے لیے ہی نہیں ارض پاک کے بھی لیے
وہ آج چلتے ہیں امریکہ سے کفن لے کر

مگر زمانے کے تیور کچھ اور ہیں، یہ رسن
کہیں انھیں کے گلوں کی رسن نہ بن جائے
وہ عصرِ نو کے لیے لے کے آئے تو ہیں کفن
یہ قاتلوں کا خود اپنا کفن نہ بن جائے

تری بلندیٔ فکر و نظر کا کیا کہنا
وہ دیکھ پست ہوئی جا رہی ہیں دیواریں
ہم اپنے دل کی محبت سے ڈھانپ لیں گے تجھے
ستم کے ہاتھ سے ہم چھین لیں گے تلواریں

میں پڑھ رہا ہوں لکھا ہے جبینِ وقت پہ کیا
زمانہ تجھ سے ہی انساں کے انتظار میں ہے
ہے تیرے دل میں بہاراں کی آرزو لیکن
تو آرزو کی طرح خود دل بہار میں ہے

مئی 1951

# یلغار

(پرتھوی راج کپور کے نام)

ہم آج یلغار کر رہے ہیں
تمام جنگوں کے مورچوں پہ حیات کا وار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
ہماری عید آ گئی ہے، عالم میں جشن امن و اماں منائیں
پیاس کو قتل کر دیں، صدیوں کی بھوک کو قبر میں سلائیں
برہنگی کے پرانے لاشے کو آؤ مل کر کفن پہنائیں
سنوار دیں مانگ زندگی کی، زمیں کو اپنی، دلہن بنائیں
چلو کہ دنیا کے منچلوں کی برات تیار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
اب آؤ دنیا سے زرگری کا نظامِ ظلم و ستم مٹا دیں
جوار تقا میں ہماری حائل ہیں توپ خانے انہیں ہٹا دیں
نگاہ کی بجلیوں سے بارود کے خزانوں کا دل جلا دیں
بجھا دیں خوں کے چراغ محفل سے جامِ زہراب غم اٹھا دیں
ہمیں ہے جیون سے پیار، مرنے سے صاف انکار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

فضائیں مسموم ہوگئیں گر تو جنبش بال و پر نہ ہوگی
زمانہ تلخی زہر پی لے تو زیست شیر و شکر نہ ہوگی
لہو کی بوندوں کی مسکراہٹ میں آب وتاب گہر نہ ہوگی
سیاہ بارود کے اندھیرے سے زندگی کی سحر نہ ہوگی
سپاہیوں اور تباہیوں کی صفوں سے پیکار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
قریب ہے منزل تمنا تو پاؤں اپنے بہک رہے ہیں
رگوں کے اندر خوشی سے بیتاب خوں کے قطرے چمک رہے ہیں
سنہرے چہرے دمک رہے ہیں سفید ماتھے دمک رہے ہیں
ہزار ہا سال کے دبے زخم آج پھر سے مہک رہے ہیں
ہم اپنے سینوں کو اپنے دل کے لہو سے گلنار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
کہاں ہیں لاؤ ہماری نازک مزاج سارنگیاں کہاں ہیں
سرود اور دلربا کی آواز کی حسیں تتلیاں کہاں ہیں
ستار کے تار میں لرزتی ہوئی جواں بجلیاں کہاں ہیں
ہمارے طبلوں کے بول کی دلنواز سرمستیاں کہاں ہیں
ہم اپنی تہذیب کی حفاظت کا دل سے اقرار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
مکان، محلات، قصر، ایواں، قطار اندر قطار آئیں
کہو سفید اور سرخ پتھر کی مورتوں سے کہ مسکرائیں
کہو چراغوں سے اور چہروں کے آفتابوں سے جگمگائیں
لڑائی کی آندھیوں کی زد پر حیات کی شمع نو جلائیں
ہم آج ہر رنگ، ہر صدا، ہر ادا کو، ہشیار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

یہی تو ہے وقت اپنے سینے کی ساری بیتابیاں جگا دو
جو خوابِ راحت میں ہیں اجنتا کی نیلی شہزادیاں جگا دو
پرانے ہندوستان کی دلفریب رنگینیاں جگا دو
جگا دو تہذیب اور تمدن کی ساری آبادیاں جگا دو
یہی تو ہے وقت رقص ونغمہ پہ ہم جو اصرار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
زمیں سے سنگیت کی اٹھو گنگناتے گاتے رباب لے کر
تخیل و شاعری کے عرش بریں سے اترو کتاب لے کر
نگار خانے سے حسن کے آؤ رقص کرتا شباب لے کر
نکل پڑو عارضوں کی سرخی، نگاہ کی آب وتاب لے کر
نزاکتوں اور لطافتوں کا غرور بیدار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
بہار کی فصل ہے نہالِ مراد بے برگ و بار کیوں ہو؟
قرار ممکن ہے جب زمانے میں پھر کوئی بیقرار کیوں ہو؟
اگر ہو آباد اپنا پہلو تو شکوۂ جوریار کیوں ہو؟
بھرے ہوئے میکدے میں کوئی ستم کشِ انتظار کیوں ہو؟
چڑھائے سان اپنی پیاس کو ہم بھی آج تلوار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
زمیں کے دل میں ہماری تشنہ لبی کے شعلے دبے ہوئے ہیں
چمن چمن اپنی خوں شدہ آرزو کے غنچے کھلے ہوئے ہیں
اداس راہوں پہ بے کفن حسرتوں کے لاشے پڑے ہوئے ہیں
قدم قدم پر ہماری ناکامیوں کے لشکر کھڑے ہوئے ہیں
ہم اپنے لشکر کو لے کے دشمن پر آخری وار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

وہ لائیں اپنے سیہ ارادے ہم اپنے دل کی امنگ لائیں
ہم اپنے لوح و قلم نکالیں، وہ اپنے تیغ و تفنگ لائیں
ہم اپنے بربط کے تار چھیڑیں وہ شورشِ رعد جنگ لائیں
ہم اپنے زخموں کے گل کھلائیں، وہ خونِ ناحق کا رنگ لائیں
لہو میں بہہ جائیں گے وہ سب جو لہو کا بیوپار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
ہمارے گیتوں کی لے نے دنیا میں کارِ شمشیر بھی کیا ہے
ہمارے لفظوں کے شہد و شبنم نے آتشیں جام بھی پیا ہے
ہماری نظروں نے زندگانی کا چاک قلب و جگر سیا ہے
ہماری ٹھوکر نے آسمان و زمیں کا محور بدل دیا ہے
ہم آج تبدیلی نظام کہن پر اصرار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
ہماری زد میں ہر ایک شے ہے زمیں سے تاروں کی انجمن تک
ہماری پروازِ فکر ہے بجلیوں سے کرنوں کے بانکپن تک
ہمارے نقشِ قدم کی گلکاریاں ہیں ویرانوں سے چمن تک
ہماری تخلیق کا کرشمہ ہے سوت کے تار سے کفن تک
کہ یہ بھی اک فن ہے جنگ بازوں کی قبر تیار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
نہ ہٹلری ہی رہے گی باقی یہاں نہ اب قیصری رہے گی
فریب کی ساحری نہ اہلِ ہوس کی جادوگری رہے گی
نہ جنگ کی زرگری رہے گی نہ ظلم کی قاہری رہے گی
بس ایک محنت کی داوری اور فن کی پیغمبری رہے گی
ازل سے ہم تارِ دل سے پیدا ابد کی جھنکار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

ہمیں نے پکڑا ہے بجلیوں کو ہمیں نے ایٹم کے دل کو چیرا
ہمارے خونِ جگر کے رنگِ شفق سے تہذیب کا سویرا
ہمیں نے دھاتوں کی نبض پرکھی ہمیں نے ذرّوں کا دل ٹٹولا
ہمیں نے جنبش کا حسن دیکھا، ہمیں نے پہیّوں کو رقص بخشا
قوائے فطرت کو دامِ حکمت میں ہم گرفتار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
زمیں کی گردش سے آسمانوں کی گردشوں نے بھی ہار مانی
شکار کر لی ہے دور بینوں نے ماہ و مریخ کی جوانی
تڑپتے ہاتھوں کی کارسازی میں جیسے دریاؤں کی روانی
بشر کے ذہنِ رسا میں تخلیقِ حسن کا سوزِ جاودانی
ہماری عظمت کا آج ارض و سما بھی اقرار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
کسی نے جادو سا کر دیا ہے بدل گیا اس طرح نظارا
سمے نے لی اِک نئی جو کروٹ تو زندگی ہو گئی گوارا
پگھل کے فولاد اور توپوں نے کارخانوں کا روپ دھارا
ہے چمنیوں کا دھواں بھی پر پیچ کاکلوں کی طرح دل آرا
یہ معجزے ہیں ہمارے ہاتھوں کے ہم جنھیں پیار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
جو برف زاروں میں ندیاں سو رہی تھیں اپنا جمال لے کر
وہ ریگزاروں کی سمت آتی ہیں آرزوئے وصال لے کر
وہ کھیتیاں ہنس رہی ہیں گودی میں حاصل ماہ و سال لے کر
میں آ گیا ہوں خراجِ تحسین و شاعرانہ خیال لے کر
کھلا کے لاکھوں چمن زمیں پر فضا کو گلزار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

رگوں سے انگور کی ٹپکتا ہے سرخ افسردۂ جوانی
سیاہ آنکھیں گلابی ڈوروں سے بن گئیں جام ارغوانی
دہن کے لعل و گہر خزانوں پہ اک تبسّم کی پاسبانی
دلوں کی آزاد مملکت پر فقط نگاہوں کی حکمرانی
کہ شیطنت کی حکومتوں سے دلوں کو بیزار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
وہ قدِ موزوں وہ جسم رعنا کشیدہ قامت ستار جیسے
لرزتے پیراہنوں میں رنگ بدن چمن میں بہار جیسے
بسی ہوئی بستیاں حسینوں سے دل میں تصویر یار جیسے
ہجوم سڑکوں پہ گا رہے ہیں پہاڑ پر آبشار جیسے
قدیم ویرانوں میں نئی بستیوں کو بیدار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
نسیمِ شیراز زلفِ بنگال کی گھٹاؤں سے کھیلتی ہے
ہوا بخارا کی ہے جو کشمیر کی ہواؤں سے کھیلتی ہے
نگاہ دہلی نگار چیں کی حسیں اداؤں سے کھیلتی ہے
صدائے پشکن [1] نوائے حافظ مری نواؤں سے کھیلتی ہے
اسیراب تک تھیں جن میں قومیں وہ سرحدیں پار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں
ہمارے عطرِ حنا کی خوشبو سے ارضِ پیرس بسی ہوئی ہے
ہمارے دامن میں چین کے چاولوں کی چاندی بھری ہوئی ہے
تڑپتی راوی کی موج سے آج موج گنگا ملی ہوئی ہے
نوائے اقبال مصر وایراں کی شاخ گل پر جھکی ہوئی ہے
فضائیں خونبار تھیں جہاں کی ہم ان کو گلبار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

---

1 پشکن روس کا قومی شاعر ہے جس کا زمانہ انیسویں صدی ہے۔

فضاؤں میں میگھ دوت [1] اڑتے ہیں اہلِ دل کا پیام لے کر
ہماری ٹھنڈی ہوائیں جاتی ہیں ہندیوں کا سلام لے کر
کتابیں محوِ سفر ہیں ٹیگور و بھارتی کا کلام لے کر
ہم آج اٹھے ہیں دل کے پیمانے اور محبت کے جام لے کر
پلا کے تہذیب و امن کی مے جہاں کو سرشار کر رہے ہیں
ہم آج یلغار کر رہے ہیں

}{}{}{

1 میگھ دوت سے مراد بادل ہیں اور یہ کالی داس کی مشہور نظم کا نام ہے۔

# متفرقات

اب آ گیا ہے جہاں میں تو مسکراتا جا
چمن کے پھول، دلوں کے کنول کھلاتا جا

عدم حیات سے پہلے عدم حیات کے بعد
یہ ایک پل ہے اسے جاوداں بناتا جا

بھٹک رہی ہے اندھیرے میں زندگی کی برات
کوئی چراغ سرِ رہ گزر جلاتا جا

گزر چمن سے مثالِ نسیمِ صبحِ بہار
گلوں کو چھیڑ کے کانٹوں کو گدگداتا جا

رہِ دراز ہے اور دور شوق کی منزل
گراں ہے مرحلۂ عمر گیت گاتا جا

بلا سے بزم میں گر ذوقِ نغمگی کم ہے
نوائے تلخ کو کچھ تلخ تر بناتا جا

جو ہو سکے تو بدل زندگی کو خود ورنہ
نژادِ نو کو طریقِ جنوں سکھاتا جا

دکھا کے جلوۂ فردا بنا دے دیوانہ
نئے زمانے کے رُخ سے نقاب اٹھاتا جا

بہت دنوں سے دل و جاں کی محفلیں ہیں اداس
کوئی ترانہ کوئی داستاں سناتا جا

☆☆☆

کم نگاہوں کو میں اندازِ نظر دیتا ہوں
بے سحرات کو بھی رنگِ سحر دیتا ہوں

بدگماں مجھ سے خزاں ہے تو خفا ویرانے
آمدِ فصلِ بہاراں کی خبر دیتا ہوں

☆☆☆

اک جوئے دردِ دل سے جگر تک رواں ہے آج
پگھلا ہوا رگوں میں اک آتش فشاں ہے آج

سینے میں ایک شعلۂ جوالہ کی لپک
آنکھوں میں شامِ مرگ جواں کا دھواں ہے آج

لب سی دیے ہیں تا نہ شکایت کرے کوئی
لیکن ہر ایک زخم کے منہ میں زباں ہے آج

تاریکیوں نے گھیر لیا ہے حیات کو
لیکن کسی کا روئے حسیں درمیاں ہے آج

جینے کا وقت ہے یہی مرنے کا وقت ہے
دل اپنی زندگی سے بہت شادماں ہے آج

منزل کو چوم لیتی ہے اٹھ کر نگاہِ شوق
کیا تیز گام جنبشِ عمرِ رواں ہے آج

ہنگامِ سرکشی ہے بغاوت کا وقت ہے
ہر لمحۂ حیاتِ بشر جاوداں ہے آج

ہر پائے سرفروش مری سجدہ گاہ ہے
ہر نقشِ خونِ سرخ مرا آستاں ہے آج

ہو جاتا ہوں شہید ہر اہلِ وفا کے ساتھ
ہر داستانِ شوق مری داستاں ہے آج

آئے ہیں کس نشاط سے ہم قتل گاہ میں
زخموں سے دل ہے چور نظر گلفشاں ہے آج

زندانیوں نے توڑ دیا ظلم کا غرور
وہ دبدبہ وہ رعبِ حکومت کہاں ہے آج

سنٹرل جیل ناسک 1949
سیاسی قیدیوں پر فائرنگ کے بعد

☆☆☆

☆

عشق کا نغمہ جنوں کے ساز پر گاتے ہیں ہم
اپنے غم کی آنچ سے پتھر کو پگھلاتے ہیں ہم

جاگ اٹھتے ہیں تو سولی پر بھی نیند آتی نہیں
وقت پڑ جائے تو انگاروں پہ سو جاتے ہیں ہم

زندگی کو ہم سے بڑھ کر کون کر سکتا ہے پیار
اور اگر مرنے پہ آجائیں تو مر جاتے ہیں ہم

دفن ہو کر خاک میں بھی دفن رہ سکتے نہیں
لالہ و گل بن کے ویرانوں پہ چھا جاتے ہیں ہم

ہم کہ کرتے ہیں چمن میں اہتمامِ رنگ و بو
روئے گیتی سے نقابِ حسن سرکاتے ہیں ہم

عکس پڑتے ہی سنور جاتے ہیں چہرے کے نقوش
شاہدِ ہستی کو یوں آئینہ دکھلاتے ہیں ہم

میکشوں کو مژدہ، صدیوں کے پیاسوں کو نوید
اپنی محفل اپنا ساقی لے کے اب آتے ہیں ہم

☆☆☆

☆

تمھارے اعجازِ حسن کی میرے دل پہ لاکھوں عنایتیں ہیں
تمھاری ہی دین میرے ذوقِ نظر کی ساری لطافتیں ہیں

جواں ہے سورج، جبیں پہ جس کے تمھارے ماتھے کی روشنی ہے
سحر حسیں ہے کہ اس کے رخ پر تمھارے رخ کی صباحتیں ہیں

میں جن بہاروں کی پرورش کر رہا ہوں زندانِ غم میں ہمدم
کسی کے گیسو و چشم و رخسار و لب کی رنگیں حکایتیں ہیں

نہ جانے چھلکائے جام کتنے، نہ جانے کتنے سبو اچھالے
مگر مری تشنگی کہ اب بھی تری نظر سے شکایتیں ہیں

میں اپنی آنکھوں میں سیلِ اشک رواں نہیں بجلیاں لیے ہوں
جو سر بلند اور غیور ہیں اہلِ غم یہ ان کی روایتیں ہیں

میں رات کی گود میں ستارے نہیں شرارے بکھیرتا ہوں
سحر کے دل میں جو اپنے اشکوں سے بو رہا ہوں بغاوتیں ہیں

یہ شاعری عصرِ نو کی پیغمبری، زمانے کی داوری ہے
لبوں پہ میرے صحیفۂ انقلاب کی سرخ آیتیں ہیں

☆☆☆

☆

آندھیاں چلتی رہیں افلاک تھراتے رہے
اپنا پرچم ہم بھی طوفانوں میں لہراتے رہے

کاٹ کر راتوں کے پربت عصرِ نو کے تیشہ زن
جوئے شیر و چشمۂ نورِ سحر لاتے رہے

کاروانِ ہمتِ جمہور بڑھتا ہی گیا
شہریار و حکمراں آتے رہے جاتے رہے

رہبروں کی بھول تھی یا رہبری کا مدّعا
قافلوں کو منزلوں کے پاس بھٹکاتے رہے

جس قدر بڑھتا گیا ظالم ہواؤں کا خروش
اس کے کاکل اور بھی عارض پہ لہراتے رہے

پھانسیاں اُگتی رہیں زنداں ابھرتے ہی رہے
چند دیوانے جنوں کے زمزمے گاتے رہے

☆☆☆

☆

محبت اک تڑپ ہے آرزو اک کیفیت دل کی
تری آنکھوں میں آ کر جاوداں معلوم ہوتی ہے

قدم رکتے نہیں ہیں جادۂ راہِ تمنا میں
کہ ناکامی بھی اک سنگِ نشاں معلوم ہوتی ہے

کہیں بجلی گرے وہ اپنا گلشن ہو کہ اوروں کا
مجھے اپنی ہی شاخِ آشیاں معلوم ہوتی ہے

جہاں کل میرے خونِ دل کی بوندوں کی تراوش تھی
وہی خاک آج رشکِ گلستاں معلوم ہوتی ہے

حکایت دل کی کیا دار و رسن کی اک کہانی ہے
قد و گیسو کی لیکن داستاں معلوم ہو تی ہے

☆☆☆

☆

وطن سے دور یارانِ وطن کی یاد آتی ہے
قفس میں ہم نوایانِ چمن کی یاد آتی ہے

یہ کیسا ظلم ہے پھر سایۂ دیوارِ زنداں میں
وطن کے سایۂ سرو و سمن کی یاد آتی ہے

ملاقاتوں سے پہلے اور ملاقاتوں کے بعد اکثر
کسی کے رنگ و بوئے پیرہن کی یاد آتی ہے

تصور جس سے رنگیں ہے تخیل جس سے رقصاں ہے
غزالِ ہند و آہوئے ختن کی یاد آتی ہے

کبھی لیلی و شیریں، گاہ ہیر و سوہنی بن کر
نرالے یار کی، بانکے سجن کی یاد آتی ہے

کہاں کا خوفِ زنداں، دہشتِ دار و رسن کیسی
قدِ معشوق و زلفِ پُر شکن کی یاد آتی ہے

☆☆☆

☆

مستیِ رندانہ ہم، سیرابیِ میخانہ ہم
گردشِ تقدیر سے ہیں گردشِ پیمانہ ہم

خونِ دل سے چشمِ تر تک، چشمِ تر سے تا بہ خاک
کر گئے آخر گل و گلزار ہر ویرانہ ہم

کیا بلا جبرِ اسیری ہے کہ آزادی میں بھی
دوش پر اپنے لیے پھرتے ہیں زنداں خانہ ہم

راہ میں فوجوں کے پہرے سر پہ تلواروں کی چھاؤں
آئے ہیں زنداں میں بھی با شوکتِ شاہانہ ہم

مٹتے مٹتے دے گئے ہم زندگی کو رنگ و نور
رفتہ رفتہ بن گئے اس عہد کا افسانہ ہم

یا جگا دیتے ہیں ذرّوں کے دلوں میں میکدے
یا بنا لیتے ہیں مہر و ماہ کو پیمانہ ہم

قید ہو کر اور بھی زنداں میں اڑتا ہے خیال
رقص زنجیروں میں بھی کرتے ہیں آزادانہ ہم

☆☆☆

☆

وفورِ شوق کی رنگیں حکایتیں مت پوچھ
لبوں کا پیار، نگہ کی شکایتیں مت پوچھ
کسی نگاہ کی نس نس میں تیرتے نشتر
وہ ابتدائے محبت کی راحتیں مت پوچھ
وہ نیم شب، وہ جواں حسن، وہ وفورِ نیاز
نگاہ و دل نے جو کی ہیں عبادتیں مت پوچھ
ہجومِ غم میں بھی جینا سکھا دیا ہم کو
غمِ جہاں کی ہیں کیا کیا عنایتیں مت پوچھ
یہ صرف ایک قیامت ہے چین کی کروٹ
دبی ہیں دل میں ہزاروں قیامتیں مت پوچھ
بس ایک حرفِ بغاوت زباں سے نکلا تھا
شہید ہو گئیں کتنی روایتیں مت پوچھ
اب آج قصۂ دارا و جم کا کیا ہو گا
ہمارے پاس ہیں اپنی حکایتیں مت پوچھ
نشانِ ہٹلری و قیصری نہیں ملتا
جو عبرتوں نے لکھی ہیں عبارتیں مت پوچھ
نشاطِ زیست فقط اہلِ غم کی ہے میراث
ملیں گی اور ابھی کتنی دولتیں مت پوچھ

☆☆☆

☆

دل کی آگ جوانی کے رخساروں کو دہکائے ہے
بہے پسینہ مکھڑے پر یا سورج پگھلا جائے ہے

من اک ننھا سا بالک ہے ہمک ہمک رہ جائے ہے
دور سے مکھ کا چاند دکھا کر کون اسے للچائے ہے

مے ہے تیری آنکھوں میں اور مجھ پہ نشہ سا طاری ہے
نیند ہے تیری پلکوں میں اور خواب مجھے دکھلائے ہے

تیرے قامت کی لرزش سے موج مے میں لرزش ہے
تیری نگہ کی مستی ہی پیمانوں کو چھلکائے ہے

تیرا درد سلامت ہے تو مرنے کی امید نہیں
لاکھ دکھی ہو، یہ دنیا رہنے کی جگہ بن جائے ہے

☆☆☆

☆

زمیں کے سینے میں جذب ہو کر رہا نہ خونِ وفا شعاراں
کھلے جو غنچے ہنسی جو کلیاں تو مسکرائے رخِ نگاراں
فضا کے پہلو میں کھل کے انگڑائی لی شفق رنگ پرچموں نے
صدائیں آئیں کہ ہو رہی ہے سحر شبِ تیرہ روزگاراں
دعائیں دیتی ہے چین کی فوج کو شکستہ دلوں کی دھڑکن
یہ لشکرِ انقلاب پرچم ہے لشکرِ اہرمن شکاراں
یہ کس نگارِ بہار پیکر نے اپنا دامن جھٹک دیا ہے
مہک رہے ہیں چمن ہزاروں، چمن چمن رنگِ نو بہاراں

☆☆☆

عطرِ فردوسِ جواں میں یہ بسائے ہوئے ہونٹ
خونِ گلرنگِ بہاراں میں نہائے ہوئے ہونٹ
خود بخود آہ لرزتے ہوئے بوسوں کی طرح
میرے ہونٹوں کی لطافت کو جگائے ہوئے ہونٹ
دستِ فطرت کے تراشے ہوئے دو برگِ گلاب
دل کے ٹوٹے ہوئے ٹکڑوں کو بنائے ہوئے ہونٹ
ظلم اور جبر کے احکام سے خاموش مگر
مُہر پیمانِ محبت کی لگائے ہوئے ہونٹ

☆☆☆

وہ مری دوست وہ ہمدرد وہ غمخوار آنکھیں
ایک معصوم محبت کی گنہگار آنکھیں

شوخ، شاداب و حسیں، سادہ و پرکار آنکھیں
مست، سرشار، جواں بیخود و ہشیار آنکھیں

ترچھی نظروں میں وہ ابھی ہوئی سورج کی کرن
اپنے دزدیدہ اشاروں میں گرفتار آنکھیں

جنبشِ ابرو و مژگاں کے خنک سائے میں
آتش افروز، جنوں خیز، شرر بار آنکھیں

کیفیتِ دل کی سناتی ہوئی ایک ایک نگاہ
بے زباں ہو کے بھی وہ مائل گفتار آنکھیں

موسم گل میں وہ اڑتے ہوئے بھنوروں کی طرح
غنچۂ دل پہ وہ کرتی ہوئی یلغار آنکھیں

کبھی چھلکی ہوئی شربت کے کٹوروں کی طرح
اور کبھی زہر میں ڈوبی ہوئی تلوار آنکھیں

کبھی ٹھہری ہوئی یخ بستہ غموں کی جھیلیں
کبھی سہما ہوا، سمٹا ہوا اک پیار آنکھیں

کبھی جھکتے ہوئے بادل کبھی گرتی بجلی
کبھی اٹھتی ہوئی آمادۂ پیکار آنکھیں

نوکِ ابرو میں کبھی تلخیٔ انکار لیے
کبھی گھولے ہوئے شیرینیٔ اقرار آنکھیں

آنچ میں اپنی جوانی کی سلگتی چتون
شبنمِ اشک میں دھوئی ہوئی گلنار آنکھیں

حسن کے چاند سے مکھڑے پہ چمکتے تارے
ہائے آنکھیں وہ حریفِ لب و رخسار آنکھیں

عشوہ و غمزہ و انداز و ادا پر نازاں
اپنے پندارِ جوانی کی پرستار آنکھیں

روح کو روگ محبت کا لگا دیتی ہیں
صحتِ دل جو عطا کرتی ہیں بیمار آنکھیں

صحنِ زنداں میں ہے پھر رات کے تاروں کا ہجوم
شمع کی طرح فروزاں سرِ دیوار آنکھیں

●

☆☆☆

# اردو

ہماری پیاری زبان اردو
ہماری نغموں کی جان اردو
حسین، دلکش جوان اردو
زبان وہ دھل کے، جس کو گنگا کے جل سے پاکیزگی ملی ہے
اودھ کی ٹھنڈی ہوا کے جھونکوں سے جس کے دل کی کلی کھلی ہے
جو شعر و نغمہ کے خلد زاروں میں آج کوئل سی کوکتی ہے

اسی زباں میں ہمارے بچپن نے ماؤں سے لوریاں سنی ہیں
جوان ہو کر اسی زباں میں کہانیاں عشق نے کہی ہیں
اسی زباں کے چمکتے ہیروں سے علم کی جھولیاں بھری ہیں

اسی زباں سے وطن کے ہونٹوں نے نعرۂ انقلاب[1] پایا
اسی سے انگریز حکمرانوں نے خود سری کا جواب پایا
اسی سے میری جواں تمنا نے شاعری کا رباب پایا

یہ اپنے نغمات پُر اثر سے دلوں کو بیدار کر چکی ہے
یہ اپنے نعروں کی فوج سے دشمنوں پہ یلغار کر چکی ہے
ستمگروں کی ستمگری پر ہزار ہا وار کر چکی ہے

---

1. انقلاب زندہ باد تحریک آزادی کا سب سے مشہور نعرہ اردو زبان ہی کی دین ہے۔

کوئی بتاؤ وہ کون سا موڑ ہے جہاں ہم جھجک گئے ہیں
وہ کون سی رزم گاہ ہے جس میں اہلِ اردو ہنک گئے ہیں
وہ ہم نہیں ہیں جو بڑھ کے میداں میں آئے ہوں اور ٹھٹھک گئے ہیں

یہ وہ زباں ہے کہ جس نے زنداں[1] کی تیرگی میں دیے جلائے
یہ وہ زباں ہے کہ جس کے شعلوں سے جل گئے پھانسیوں کے سائے
فرازِ دار و رسن سے بھی ہم نے سرفروشی[2] کے گیت گائے۔

کہا ہے کس نے ہم اپنے پیارے وطن میں بھی بے وطن رہیں گے
زبان چھن جائے گی ہمارے دہن سے ہم بےسخن رہیں گے
ہم آج بھی کل کی طرح دل کے ستار پر نغمہ زن رہیں گے

یہ کیسی بادِ بہار ہے جس میں شاخِ اردو نہ پھل سکے گی
وہ کیسا روئے نگار ہوگا نہ زلف جس پر مچل سکے گی
ہمیں وہ آزادی چاہیے جس میں دل کی مینا اُبل سکے گی

ہمیں یہ حق ہے ہم اپنی خاکِ وطن میں اپنا چمن سجائیں
ہماری ہے شاخِ گُل تو پھر کیوں نہ اس پہ ہم آشیاں بنائیں
ہم اپنے انداز اور اپنی زباں میں اپنے گیت گائیں

کہاں ہو متوالو آؤ بزمِ وطن میں ہے امتحاں ہمارا
زبان کی زندگی سے وابستہ آج سود و زیاں ہمارا
ہماری اردو رہے گی باقی اگر ہے ہندوستاں ہمارا

---

1. اردو کے درجنوں ادیب اور شاعر قیدِ فرنگ میں رہ چکے ہیں۔
2. سرفروشی کی تمنا اب ہمارے دل میں ہے — دیکھنا ہے زور کتنا بازوئے قاتل میں ہے۔

چلے ہیں گنگ و جمن کی وادی میں نم ہوائے بہار بن کر
ہمالیہ سے اتر رہے ہیں ترانۂ آبشار بن کر
رواں ہیں ہندوستاں کی رگ رگ میں خون کی سرخ دھار بن کر
ہماری پیاری زبان اردو
ہماری نغموں کی جان اردو
حسین دلکش جوان اردو

☆☆☆

# غزل

(ہند پاک مشاعرے کے موقع پر کہی گئی)

پھر شمیمِ گل نویدِ جانفزا لائی ہے آج
مرے گلشن میں بہارِ رفتہ پھر آئی ہے آج

پھر اٹھا ہے وادیٔ گنگا سے ابرِ نو بہار
سمتِ راوی سے ہوائے مہرباں آئی ہے آج

آج پھر ہے اتحادِ شیشہ و ساغر کا دور
محفلِ رنداں میں جشنِ بادہ پیمائی ہے آج

چشمِ ساقی تجھ میں سارا میکدہ آباد ہے
قامتِ رعنا میں موجِ مے کی انگڑائی ہے آج

کھل گئے ہیں اشتیاقِ دید میں آنکھوں کے در
دوستوں کی خانۂ دل میں پذیرائی ہے آج

'آملے ہیں سینہ چاکانِ چمن سے سینہ چاک'
شور ہے محفل میں دیوانوں کی بن آئی ہے آج

پھر وہی گلیاں وہی اگلا طوافِ کوئے دوست
عشق کو مژدہ کہ پھر سامانِ رسوائی ہے آج

کون ہے جس سے سنبھالا جائے گا میرا جنون
خود ہی پائے شوق کو زنجیر پہنائی ہے آج

ڈر رہا ہوں جان و تن کو پھونک ڈالے گی یہ آگ
میرے سینے میں جو ضبطِ غم نے بھڑکائی ہے آج

آج پسپائی میں ہے اہلِ خرد کی مصلحت
سرفروشی ہی میں اہلِ دل کی دانائی ہے آج

مسکرائے زخمِ دل، جلنے لگے سینے کے داغ
روحِ استبداد کیسی کیسی شرمائی ہے آج

خونِ ناحق لالہ و گل بن کے پھوٹا خاک سے
تیشہ زن کے خوں سے دشت و در کی زیبائی ہے آج

لہہ دو صیادوں سے کُل چینوں کو کردو ہوشیار
فصلِ گل نے دور تک زنجیر پھیلائی ہے آج

ہاں یہی ہے روزِ محشر، ہاں یہی روزِ حساب
تیری رسوائی ہے اب یا میری رسوائی ہے آج

پھر ہے میناروں پہ رعشہ، پھر ہیں گنبد سرنگوں
پھر نوا شاعر کی ایوانوں سے ٹکرائی ہے آج

آج پھر قدموں پہ آ کر جھک رہی ہے کائنات
اپنے قبضے ہیں جہانِ نو کی دارائی ہے آج

خاک پر جھکتی نہیں افلاک پر رکتی نہیں
جو نگہ تقدیرِ عالم کی تماشائی ہے آج

ایک ساحل ہے کہ ابھرا ہے بھنور کی گود سے
ایک کشتی ہے کہ طوفانوں سے ٹکرائی ہے آج

رنگِ مے، حسنِ نگاراں، جشنِ گل، فصلِ بہار
ہند کی روحِ جواں شعروں میں کھنچ آئی ہے آج

جل اٹھا نبضوں میں خوں روشن ہوئے دل میں چراغ
شاعرِ آتش نوا نے آگ برسائی ہے آج

☆☆☆

# اناج

میری عاشق ہیں کسانوں کی حسیں کنیائیں
جن کے آنچل نے محبت سے اٹھایا مجھ کو
کھیت کو صاف کیا، نرم کیا مٹی کو
اور پھر کوکھ میں دھرتی کی سلایا مجھ کو
خاک در خاک ہر اک تہہ میں ٹٹولا لیکن
موت کے ڈھونڈتے ہاتھوں نے نہ پایا مجھ کو
خاک سے لے کے اٹھا مجھ کو مرا ذوقِ نمو
سبز کونپل نے ہتھیلی میں چھپایا مجھ کو
موت سے دور مگر موت کی اک نیند کے بعد
جنبشِ بادِ بہاری نے جگایا مجھ کو
بالیاں پھولیں تو کھیتوں پہ جوانی آئی!
ان پریزادوں نے بالوں میں سجایا مجھ کو
میرے سینے میں بھرا سرخ کرن نے سونا
اپنے جھولے میں ہواؤں نے جھلایا مجھ کو
میں رکابی میں، پیالوں میں مہک سکتا ہوں
چاہیے بس لب و رخسار کا سایہ مجھ کو

میری عاشق ہیں کسانوں کی حسین کنیائیں
گود سے ان کی کوئی چھین کے لایا مجھ کو
ہوسِ زر نے مجھے آگ میں پھونکا ہے کبھی
کبھی بازار میں نیلام چڑھایا مجھ کو
قید رکھا کبھی لوہے میں کبھی پتھر میں
کبھی گوداموں کی قبروں میں دبایا مجھ کو
سی کے بوروں میں مجھے پھینکا ہے تہہ خانوں میں
چور بازار کبھی راس نہ آیا مجھ کو
وہ ترستے ہیں مجھے اور میں ترستا ہوں انھیں
جن کے ہاتھوں کی حرارت نے اُگایا مجھ کو

کیا ہوئے آج مرے ناز اٹھانے والے
ہیں کہاں قید غلامی سے چھڑانے والے

☆☆☆

# غزل

گرم ہے اب کی بہت گرم ہوائے کشمیر
دہکی دہکی نظر آتی ہے فضائے کشمیر

جانے کس پر یہ نگاہِ غلط انداز پڑے
بہکی بہکی سی ہے کچھ دن سے ادائے کشمیر

چند سکوں میں بکی تھی یہ کبھی کشتِ بہار
چند سکے ہی ہیں کیا اب بھی بہائے کشمیر

ظلم عریاں تو نہیں سازشِ پنہاں ہے مگر
آہ کیا اب بھی فرنگی ہے خدائے کشمیر

ورقِ گل کو مسل ڈالا ہے کس ظالم نے
پارہ پارہ ہوئی جاتی ہے ردائے کشمیر

کوئی بتلائے کہ یہ بھوک یہ افلاس ہے کیوں
شیر و شہد و ثمر و گل ہے عطائے کشمیر

جانے فریادِ جگر دوز بنے گی کب تک
نالۂ زیرِ لبی تک ہے نوائے کشمیر

اس طرف سے بھی گزر قافلۂ صبح بہار
راس آتی ہے بہاروں کو ہوائے کشمیر

☆☆☆

# تہنیت

اے سرزمینِ کا شمر شاعر کی فردوسِ نظر
جنت کی تصویرِ حسین آباد روئے خاک پر
ہر شاخ شاخِ گل ہے یاں ہر شاخِ گل شاخِ ثمر
اے سرزمین کا شمر

نیلم کے کہساروں کے دامن میں زمرد کی زمیں
موتی کی جھالر سے حسیں، موجِ رواں کی آستیں
بہتے ہوئے دریاؤں میں پگھلے ہوئے شمس و قمر
اے سرزمین کا شمر

سونا اگلتی ہے زمیں چاندی لٹاتی ہے فضا
پی کر شرابِ لالہ گوں وادی میں آتی ہے ہوا
گویا شرابِ ارغواں کے جام ہیں گلہائے تر
اے سرزمین کا شمر

یاں ذرّے ذرّے کے لیے فطرت کی دولت عام ہے
ہر سنگ کو انعام ہے ہر خشت کو اکرام ہے
انساں کی قسمت میں مگر، دردِ دل و داغِ جگر
اے سرزمین کا شمر

پتھر کے ٹیلوں کو ہوا ملبوس بر فانی عطا
بے جاں مناظر کے لیے بھی سبزہ و گل کی قبا
عریاں بدن لیکن ترے نورِ نظر، لختِ جگر
اے سرزمین کا شمر

دولت کے سایے میں مگر مجبور و معذور و فقیر
آزاد و خود مختار لیکن دامِ سازش میں اسیر
قومِ شریف و چرب دست و تر دماغ و باہنر
اے سرزمین کا شمر

دُھندلی نظر آتی ہیں کچھ رنگین و روشن وادیاں
پڑتی ہیں شاید دور سے نیو یارک کی پرچھائیاں
پوشیدہ زیرِ شاخِ گل تیر و سناں، تیغ و تبر
اے سرزمین کا شمر

ہاں بک نہ جائے دیکھنا تیرے شہیدوں کا لہو
ہاں لٹ نہ جائے کشتِ گل، ہاں اڑ نہ جائے رنگ و بو
ہاں تُل نہ جائے ڈالروں کے ڈھیر میں شاخِ ثمر
اے سرزمین کا شمر

بدلی نظر آتی ہے کچھ مشرق کے باغوں کی ہوا
ہے بھیرویں کی تان سے گونجی ہوئی ساری فضا
چہکیں گے تیرے باغ میں کب نغمہ سنجان سحر
اے سرزمین کا شمر

پہلو میں ارضِ سوویت، انسانیت کی پاسباں
اور سر کے او پر انقلاب چیں کا دستِ مہرباں
ہیں منتظر کب سے تری یلغار کے فتح و ظفر
اے سرزمین کا شمر

گنگ و جمن کی تہنیت لایا ہوں تیرے واسطے
جمہوریت کی راہ میں ملتے ہیں سارے راستے
ہر کاروانِ شوق کی ہے ایک منزل اک ڈگر
اے سرزمین کا شمر

☆☆☆

# حسن کشمیر

آباد ہے خوابوں کی طرح وادیٔ کشمیر
فانوس ہیں تاروں کے تو پھولوں کے چراغاں
دامن میں پہاڑوں کے لہکتی ہیں بہاریں
پتھر کی ہتھیلی پہ مہکتا ہے گلستاں
'سنتور'[1] بجاتی ہوئی پھرتی ہیں ہوائیں
ہر باغ میں آوارہ و سرمست و غزلخواں
اڑتی ہوئی آتی ہیں پرستانِ افق سے
ملبوسِ شفق پہنے ہوئے صبح کی پریاں
ہر وادیٔ شاداب ہے محبوبۂ گلفام
معشوقۂ نوخیز ہے ہر جوئے کہستاں
جھیلیں ہیں کہ نیلم کے تراشے ہوئے پیالے
فوارے ہیں یا گوہر و الماس ہیں رقصاں
'شالی'[2] کے ہیں یہ کھیت کہ سبزے کے سمندر
سایے ہیں چناروں کے کہ جنت کے شبستاں

---

1 'سنتور' کشمیر کا قومی ساز ہے
2 'شالی' کشمیری زبان میں دھان کو 'شالی' کہتے ہیں۔

دوشیزۂ کہسار، پہاڑوں کی غزالہ
بنتِ مہ و خورشید ہے ہر دخترِ دہقاں
جو چھین لے دل وہ ہنرِ دست ہنر مند
انمول مگر جنس کے بازار ہیں ارزاں
اخلاص و محبت کی وہ گوندھی ہوئی مٹی
اخلاق و مروت کے وہ ڈھالے ہوئے انساں
بخشا ہے انھیں جہدِ مسلسل کے عمل نے
وہ ذوقِ لطافت کہ ہے پروردۂ طوفاں
شاعر کو یقیں ہے کہ نکھر آئے گا اک روز
وہ حسن جو افلاس کی چادر میں ہے پنہاں

☆☆☆

# جہلم کا ترانہ

مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں

وادی میں لہراتا ہوا
سبزے سے اٹھلاتا ہوا
سو پیچ و خم کھاتا ہوا
ہنستا ہوا گاتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

موجوں کی زلفیں کھولتا
قطروں کے موتی رولتا
معشوقۂ کشمیر کے
پہلو میں اتراتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں
الماس پاش، انجم فشاں

چیرا ہن آب رواں
دوشیزۂ مہتاب کو
آئینہ دکھلاتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

کھیتوں کے دامن میں یہاں
باغوں کے سایے میں وہاں
اپنی شراب ناب کے
ساغر کو چھلکا تا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

جو ذرّہ ہے سیراب ہے
جو خاک ہے شاداب ہے
خونِ بہارِ جاوداں
رگ رگ میں دوڑاتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

مثلِ بتانِ سیم تن
وادی بہ وادی گا مزن
موجِ نسیمِ صبح کی
جنبش کو شرماتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

فطرت مری وارفتگی
آزادگی و سرکشی
طوفاں سے ملتا ہوں گلے
ساحل سے ٹکراتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

آسودگی جسم و جاں
آغوش بحر بیکراں
شوریدگی کو عشق کے
آداب سکھلاتا ہوا
ہردم رواں، ہردم دواں، ہردم جواں رہتا ہوں میں
مانند جوئے زندگی شام و سحر بہتا ہوں میں

☆☆☆

# رائفل کی گولیوں کا نغمہ اور نئے شعری پیکر کی تخلیق

## (ایک خط سلطانہ کے نام)

(سینٹرل جیل ناسک سے لکھے ہوئے اس خط پر کوئی تاریخ نہیں ہے۔ یہ جن حالات میں لکھا گیا تھا ان میں تاریخ کا خیال نہ رہ جانا معمولی بات ہے۔ یہ خط کئی ہفتے بعد کسی قیدی کے ہاتھ بمبئی بھیجا گیا تھا۔ جیل کی ڈاک سے اس کا جانا ممکن نہیں تھا۔ یہ واقعہ وسط 1949ء کا ہے جب انقلابی قیدیوں نے یہ فیصلہ کیا تھا کہ وہ ایک جیل سے دوسری جیل میں ٹرانسفر Transfer ہونے سے انکار کریں گے۔ یہ بھی خاموش احتجاج کا ایک طریقہ تھا۔)

مقتل کو کس نشاط سے جاتے ہیں ہم کہ ہے
پُر گل خیالِ زخم سے دامن نگاہ کا

کل شام کو سیاسی قیدیوں پر فائرنگ ہوئی۔ ہماری پشت پر بارک کی پتھریلی دیوار تھی اور دس گز کے فاصلے پر سامنے مسلح پولیس کی رائفلیں۔ تم نے اخبار میں خبر پڑھ لی ہوگی۔ سرکاری بیان شائع ہوا ہوگا۔

کل تیسرے پہر پولیس کی دو سیاہ رنگ گاڑیاں ہماری بارک کے سامنے آکر رکیں۔ عام طور سے قیدی جیل کے گیٹ پر اتارے جاتے ہیں لیکن ان قیدیوں نے اترنے سے انکار کر دیا تھا۔ یہ سب سیاسی قید[illegible] تھے، دھوکہ دے کر بمبئی سے ناسک لایا گیا ہے۔ ان کے لیڈر مراٹھی زبان کے مشہور اور مقبول گانے والے اور عوامی ستار[illegible] کے دوسرے ساتھی امر شیخ ہمارے ساتھ قید ہیں۔ انھوں نے نیچے اتر کر ڈانگے سے بات کی۔ ان کے لہجے میں تندی اور تیزی تھی انھوں نے صرف ایک سوال کیا ۔'آپ لوگ ہمارا ساتھ دیں گے یا جیل ادھیکاریوں کا۔' ظاہر ہے جیل ادھیکاریوں کا ساتھ دینے کا سوال ہی [illegible] نا تھا۔ ڈانگے نے ہم سب کی طرف سے جیلر کو الٹی میٹم دے دیا کہ اگر آپ ان سب قیدیوں کو بمبئی واپس نہیں لے جائیں گے تو ہم اپنی بارک کے اندر واپس نہیں جائیں گے۔ ہمارے پاس احتجاج کا یہی طریقہ تھا کہ رات کے وقت لاک اپ Lock-up سے انکار کر دیں۔ جیلر نے نہایت متانت سے کہا کہ جیل کی ڈسپلن نہیں توڑی جا سکتی۔ آپ بارک میں بند ہونے سے انکار کریں گے تو کوئی دوسرا طریقہ اختیار کرنا پڑے گا۔ ان معصوم (بے ضرر) لفظوں کا مطلب ہم کو معلوم تھا کیونکہ اطلاع مل چکی تھی

کہ گیٹ پر مسلح پولیس آئی ہے۔ ڈانگے مسکرا دیے۔ یہ ہم سب کی طرف سے جواب تھا۔ ہم دو ڈھائی سو قیدی پارک کی چہار دیواری سے باہر نکل آئے اور دیوار کے پاس کھڑے ہو گئے۔ باقی کام منٹوں میں پورا ہو گیا۔ پولیس کی سیاہ گاڑیاں (جن میں بمبئی سے لائے ہوئے قیدی تھے) ہمارے سامنے سے ہٹالی گئیں اور ان کی جگہ مسلح پولیس آکر کھڑی ہو گئی۔ انھیں دیکھ کر قیدیوں کو جلال آ گیا۔ بہت سے قیدی ایک ساتھ پولیس کی طرف جھپٹے اور پولیس نے گولی چلا دی۔ ہمیں اب تک علم نہیں کہ وہاں کوئی مجسٹریٹ تھا یا نہیں۔ گولی چلانے کا حکم کس نے دیا۔ ایک قیدی جان سے مارا گیا اور کئی قیدی زخمی ہو گئے۔ اس کے بعد ہم پارک میں واپس آ گئے۔ ہر طرف اندھیرا تھا۔ بجلی غائب تھی۔

اب اس واقعے کو چوبیس گھنٹے ہو چکے ہیں۔ جیل کا کوئی افسر اب تک ہمارے پاس نہیں آیا ہے۔ صرف یہ خبر ہے کہ پولیس کی گاڑیوں میں بیٹھے ہوئے قیدیوں کو بڑے بڑے ربڑ کے پائپوں Pipes سے پانی کی دھار مار کر چوہوں کی طرح باہر نکالا گیا ہے اور کسی بارک میں بند کر دیا گیا ہے۔

رات بھر امر شیخ اپنی خوبصورت اور طاقتور آواز میں مراٹھی کے انقلابی گیت گاتا رہا۔ میں نے ڈانگے کو غالب کے دو شعر لکھ کر دیے۔

عشرتِ قتل گہہ اہلِ تمنا مت پوچھ

عید نظارہ ہے شمشیر کا عریاں ہونا

قد و گیسو میں قیس و کوہکن کی آزمائش ہے

جہاں ہم ہیں، وہاں دار و رسن کی آزمائش ہے

ہم لوگ صبح سے آپس میں باتیں کر رہے ہیں کہ فائرنگ کے وقت کس کی کیا کیفیت تھی۔ مجھے اپنا حال صرف اتنا معلوم ہے کہ بارک سے نکلتے وقت ایک عجیب قسم کا جوش تھا لیکن جب میں دیوار سے پیٹھ لگا کر کھڑا ہو گیا اور سامنے مسلح پولیس اور اس کی رائفلیں دکھائی دیں تو میں نے اپنے دل کے دھڑکنے کی آواز سنی۔ چند لمحوں میں یہ آواز گولی چلنے کی کرخت آوازوں میں ڈوب گئی۔ بس یہ معلوم ہوا جیسے میرا دل سینے سے نکل کر نیچے گر گیا ہے۔ اس کے بعد دل پھر واپس آ گیا اور دھڑکنے لگا۔ اس لمحے میں مجھے کوئی خیال نہیں آیا۔ موت کا لفظ گولی چلنے کے بعد یاد آیا۔

اب سکون ہے اور سناٹا۔ نئے نئے شعری پیکر ڈھل رہے ہیں جن سے ہماری شعری روایت بالکل بیگانہ ہے۔ ع

شام کی آنکھ میں بارود کے کاجل کی لکیر

رائفل کرتی ہے فولاد کے ہونٹوں سے کلام
گولیاں کرتی ہیں سیسے کی زباں سے باتیں

بارود کا کاجل، فولاد کے ہونٹ، سیسے کی زبان۔ اردو زبان کی نازک مزاجی اس انداز بیان کو کیسے برداشت کر سکے گی۔ یہ خمِ شمشیر، تیر نگاہ اور پیکان یار سے کس قدر مختلف ہے۔

اردو والوں کو میری شاعری سے مانوس ہونے میں وقت لگے گا۔ لکھنؤ والوں نے تو اب تک اقبال کو بھی قبول نہیں کیا ہے، جس کی ساری شعری روایت کلاسیکی ہے۔ دراصل ہمیں قبول عام کی سند کی زیادہ فکر نہیں کرنی چاہیے۔ دل پر جو گزرتی ہے اس کے لیے دل ہی زبان تلاش کرتا ہے اور 'دل سے جو بات نکلتی ہے اثر رکھتی ہے۔'

بہر حال میرے خط سے تمھیں اطمینان ہو جائے گا کہ ناسک جیل میں سب خیریت ہے۔ ہم زندگی کے ایک خوفناک مگر دلچسپ تجربے سے گزر رہے ہیں۔

راہ میں فوجوں کا پہرا، سر پہ تلواروں کی چھاؤں
آئے ہیں زنداں میں بھی باشوکتِ شاہانہ ہم
جاتے جاتے دے گئے ہم زندگی کو رنگ و نور
رفتہ رفتہ بن گئے اس عہد کا افسانہ ہم

☆☆☆

# ایک خواب اور

1964

سلطانہ کے نام

کہ گل بدستِ تو از شاخ تازہ تر ماندہ

# حرفِ اوّل

خواب اور شکستِ خواب اس دور کا مقدر ہے۔ اور نئے خواب دیکھنا انسان کا ایک ایسا حق جس سے کوئی طاقت، کوئی اقتدار اسے محروم نہیں کر سکتا۔ اور شاید یہی انسان اور انسانیت کے مستقبل کی ضمانت ہے۔

ہزاراں سال با فطرت نشستم
بہ او پیوستم و از خود گسستم
ولیکن داستانم این دو حرف است
تراشیدم، پرستیدم، شکستم

سردار جعفری
فروری 1965

# ایک خواب اور

خواب اب حسنِ تصور کے افق سے ہیں پرے
دل کے اک جذبۂ معصوم نے دیکھے تھے جو خواب
اور تعبیروں کے تپتے ہوئے صحراؤں میں
تشنگی آبلہ پا، شعلہ بکف موج سراب
یہ تو ممکن نہیں بچپن کا کوئی دن مل جائے
یا پلٹ آئے کوئی ساعتِ نایابِ شباب
پھوٹ نکلے کسی افسردہ تبسم سے کرن
یا دمک اٹھے کسی دستِ بریدہ میں گلاب
آہ پتھر کی لکیریں ہیں کہ یادوں کے نقوش
کون لکھ سکتا ہے پھر عمرِ گزشتہ کی کتاب
بیتے لمحات کے سوئے ہوئے طوفانوں میں
تیرتے پھرتے ہیں پھوٹی ہوئی آنکھوں کے حباب
تابشِ رنگِ شفق، آتشِ روئے خورشید
مل کے چہرے پہ سحر آئی ہے خونِ احباب
جانے کس موڑ پہ کس راہ میں کیا بیتی ہے
کس سے ممکن ہے تمناؤں کے زخموں کا حساب

آستینوں کو پکاریں گے کہاں تک آنسو
اب تو دامن کو پکڑتے ہیں لہو کے گرداب
دیکھتی پھرتی ہے ایک ایک کا منہ خاموشی
جانے کیا بات ہے شرمندہ ہے اندازِ خطاب
در بدر ٹھوکریں کھاتے ہوئے پھرتے ہیں سوال
اور مجرم کی طرح ان سے گریزاں ہے جواب
سرکشی، پھر میں تجھے آج صدا دیتا ہوں
میں ترا شاعرِ آوارہ و بے باک و خراب
پھینک پھر جذبۂ بے تاب کی عالم پہ کمند
ایک خواب اور بھی اے ہمتِ دشوار پسند

# ہاتھوں کا ترانہ

ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
ان ہاتھوں کی تکریم کرو
دنیا کے چلانے والے ہیں
ان ہاتھوں کو تسلیم کرو
تاریخ کے اور مشینوں کے پہیوں کی روانی ان سے ہے
تہذیب کی اور تمدن کی بھرپور جوانی ان سے ہے
دنیا کا فسانہ ان سے ہے، انساں کی کہانی ان سے ہے
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
صدیوں سے گذر کر آئے ہیں، یہ نیک اور بد کو جانتے ہیں
یہ دوست ہیں سارے عالم کے، پر دشمن کو پہچانتے ہیں
خود شکتی کا اوتار ہیں، یہ کب غیر کی شکتی مانتے ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
ہیں زخم ہمارے ہاتھوں کے، یہ پھول جو ہیں گلدانوں میں
سوکھے ہوئے پیاسے چلّو تھے، جو جام ہیں اب میخانوں میں
ٹوٹی ہوئی و انگڑائیوں کی محرابیں ہیں ایوانوں میں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو

راہوں کی سنہری روشنیاں، بجلی کے جو پھیلے دامن میں
فانوس حسیں ایوانوں کے، جو رنگ و نور کے خرمن ہیں
یہ ہاتھ ہمارے جلتے ہیں، یہ ہاتھ ہمارے روشن ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
خاموش ہیں یہ خاموشی سے، سو بربط و چنگ بناتے ہیں
تاروں میں راگ سلاتے ہیں، طبلوں میں بول چھپاتے ہیں
جب ساز میں جنبش ہوتی ہے، تب ہاتھ ہمارے گاتے ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
اعجاز ہے یہ ان ہاتھوں کا، ریشم کو چھوئیں تو آنچل ہے
پتھر کو چھوئیں تو بت کر دیں، کالکھ کو چھوئیں تو کاجل ہے
مٹی کو چھوئیں تو سونا ہے، چاندی کو چھوئیں تو پایل ہے
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
بہتی ہوئی بجلی کی لہریں، سمٹے ہوئے گنگا کے دھارے
دھرتی کے مقدر کے مالک، محنت کے افق کے سیارے
یہ چارہ گرانِ دردِ جہاں، صدیوں سے مگر خود بے چارے
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
تخلیق یہ سوزِ محنت کی، اور فطرت کے شہکار بھی ہیں
میدانِ عمل میں لیکن خود، یہ خالق بھی معمار بھی ہیں
پھولوں سے بھری یہ شاخ بھی ہیں اور چلتی ہوئی تلوار بھی ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
یہ ہاتھ نہ ہوں تو مہمل سب، تحریریں اور تقریریں ہیں
یہ ہاتھ نہ ہوں تو بے معنی، انسانوں کی تقدیریں ہیں
سب حکمت و دانش علم و ہنر، ان ہاتھوں کی تفسیریں ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو

یہ کتنے سبک اور نازک ہیں، یہ کتنے سڈول اور اچھے ہیں
چالاکی میں استاد ہیں یہ اور بھولے پن میں بچے ہیں
اس جھوٹ کی گندی دنیا میں بس ہاتھ ہمارے سچے ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
یہ سرحد سرحد جڑتے ہیں اور ملکوں ملکوں جاتے ہیں
بانہوں میں بانہیں ڈالتے ہیں اور دل سے دل کو ملاتے ہیں
پھر ظلم و ستم کے پیروں کی زنجیرِ گراں بن جاتے ہیں
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
تعمیر تو ان کی فطرت ہے، اک اور نئی تعمیر سہی
اک اور نئی تدبیر سہی، اک اور نئی تقدیر سہی
اک شوخ و حسیں خواب اور سہی اک شوخ و حسیں تعبیر سہی
ان ہاتھوں کی تعظیم کرو
ان ہاتھوں کی تکریم کرو
دنیا کو چلانے والے ہیں
ان ہاتھوں کو تسلیم کرو

# زندگی

## (1)

کس نے کہا کہ حاصلِ وہم و گماں ہے زندگی
کس نے کہا کہ دہر کا سرِّ نہاں ہے زندگی
جتنی نہاں ہے زندگی اتنی عیاں ہے زندگی
کتنی حسین، کتنی شوخ، کتنی جواں ہے زندگی

صبح سے لے کے تا بہ شام، مست خرام و تیز گام
کرتی نہیں کہیں قیام، کرتی نہیں کہیں مقام
جذبۂ شوق ہے تمام، منزلِ شوق ناتمام
دامنِ شش جہات میں سیلِ رواں ہے زندگی

سرد ہے پتھروں کا دل، برف کی جیسے ایک سل
خاک حقیر و پست و خوار، ست و ذلیل و مضمحل
عرصۂ کائنات میں اُف رے سکوتِ آب و گل
قلبِ سکوت میں مگر زمزمہ خواں ہے زندگی

اس کے لیے حسیں ہے دن، اس کے لیے جواں ہے رات
مثلِ تغیراتِ دہر، صرف اسی کو ہے ثبات
یہ ہے نگارِ بزمِ گل، یہ ہے عروسِ کائنات
جانِ جہان و شاہدِ کون و مکاں ہے زندگی

(2)

عرصہ گہہ حیات میں، جنگ و جنوں ہیں حکمراں
خون سے سرخ ہے زمیں، خون سے سرخ آسماں
بکھری ہوئی ہیں ہڈیاں، اجڑی ہوئی ہیں بستیاں
نالہ و نوحہ و بکا، آہ و فغاں ہے زندگی

بھوک کا خار زار ہے، پیاس کا ریگ زار ہے
عمرِ رواں کی پشت پر، عمر رواں کا بار ہے
کل بھی وہ بے قرار تھی، آج بھی بے قرار ہے
قلب بشر میں درد کی جوئے رواں ہے زندگی

قہر کی سرخ آگ ہے، زہر کا زرد جام ہے
دوزخِ غم کی صبح ہے، دوزخِ غم کی شام ہے
یہ وہ بہشت ہے جہاں عیش و سکوں حرام ہے
تیغ و سناں ہے زندگی، تیر و کماں ہے زندگی

آپ ہی بت شکن بھی ہے، آپ ہی بت تراش بھی
مرہمِ زخم دل بھی ہے، دل کی مگر خراش بھی
آپ کو گم کیے ہوئے، اپنی مگر تلاش بھی
اپنے تضاد کو لیے، گرم عناں ہے زندگی

گردشِ رقص ہے کہیں، جنبشِ گام ہے کہیں
قند و نبات ہے کہیں، تلخیِ جام ہے کہیں
تابشِ صبح ہے کہیں، آتشِ شام ہے کہیں
اپنے ہزار رنگ میں رقص کناں ہے زندگی

مالکِ خشک و تر بھی ہے، فاتحِ بحر و بر بھی ہے
صاحبِ تاج و زر بھی ہے، خالقِ خیر و شر بھی ہے
اشک بھی ہے گہر بھی ہے، سنگ بھی ہے شرر بھی ہے
شاہِ شہاں ہے زندگی، میرِ جہاں ہے زندگی

گاہ غرورِ تاجدار، گاہ شکستِ شہریار
گاہ سرورِ اہلِ دل، گاہ شعورِ دستکار
گاہ طلسمِ رنگ و بو، گاہ فریبِ چشمِ یار
گاہ فروغِ جلوۂ ماہ و شاں ہے زندگی

تند مزاج و شعلہ خو، برق و شرار کی طرح
جلوہ طراز و دل نواز، روئے نگار کی طرح
آتشِ گل کی پاسباں، بادِ بہار کی طرح
موت کے باغ کے لیے، بادِ خزاں ہے زندگی

اپنی نگاہِ گرم سے سنگ کے دل کو توڑتی
انجم و مہر و ماہ سے، نور کا خوں نچوڑتی
سینۂ کائنات پر نقشِ دوام چھوڑتی
صبحِ ازل سے تا ابد، گرم تکاں ہے زندگی

کارکشا و کارساز، اس کا جوان ہات ہے
اس کی نگاہ سے حسیں، عالمِ ممکنات ہے
بزم تغیرات میں، جانِ تغیرات ہے
بربطِ انقلاب پر زمزمہ خواں ہے زندگی

# سرِ طور

## (آسماں پروا-ؤں کے نام)

'کیا فرض ہے کہ سب کو ملے ایک سا جواب
آؤ نہ ہم بھی سیر کریں کوہِ طور کی'
غالب

دل کو بے تاب رکھتی ہے اک آرزو
کم ہے یہ وسعتِ عالمِ رنگ و بو
لے چلی ہے کدھر پھر نئی جستجو
تا بہ حدِ نظر اُڑ کے جاتے ہیں ہم
وہ جو حائل تھے راہوں میں شمس و قمر
ہم سفر ان کو اپنا بناتے ہیں ہم

ہے زمیں پردۂ لالہ و نسترن
آسماں پردۂ کہکشاں ہے ابھی
رازِ فطرت ہوا لاکھ ہم پر عیاں
رازِ فطرت نہاں کا نہاں ہے ابھی
جس کی صدیوں ادھر ہم نے کی ابتدا
ناتمام اپنی وہ داستاں ہے ابھی
منزلیں اڑ گئیں بن کے گردِ سفر
رہگزاروں ہی میں کارواں ہے ابھی

پی کے ناکامیوں کی شرابِ کہن
اپنا ذوقِ تجسّس جواں ہے ابھی

ہاتھ کاٹے گئے جرأتِ شوق پر
خوں چکاں ہو کے وہ گل فشاں ہو گئے
حیرتوں نے لگائی جو مہرِ سکوت
لب خموشی میں جادو بیاں ہو گئے
راستے میں جو کہسار آئے تو ہم
ایسے تڑپے کہ سیلِ رواں ہو گئے
ہیں ازل سے زمیں کے کُرے پر اسیر
ہو کے محدود ہم بیکراں ہو گئے
ذوقِ پرواز بھی دل کی اک جست ہے
خاک سے زینتِ آسماں ہو گئے

عقلِ چالاک نے دی ہے آکر خبر
اک شبستاں ہے ایوانِ مہتاب میں
منتظر ہیں نگارانِ آتش بدن
جگمگاتی فضاؤں کی محراب میں
کتنے دل کش حسیں خواب بیدار ہیں
ماہ و مرّیخ کی چشمِ بے خواب میں
کھینچ پھر زلفِ معشوقۂ نیلگوں
لے لے شعلے کو پھر دستِ بیتاب میں

مژدہ ہو مہ جبینانِ افلاک کو
بزمِ گیتی کا صاحب نظر آ گیا
تہنیت حسن کو بے نقابی کی دو
دیدہ ور آ گیا، پردہ در آ گیا

آسماں سے گرا تھا جو کل ٹوٹ کر
وہ ستارہ بدوشِ قمر آ گیا
لے کے پیمانۂ دردِ دل ہاتھ میں
مل کے چہرے پہ خونِ جگر آ گیا
بزم سیارگانِ فلک سیر میں
اک ہنر مند سیارہ گر آ گیا

شوق کی حد مگر چاند تک تو نہیں
ہے ابھی رفعتِ آسماں اور بھی
ہے ثریا کے پیچھے ثریا رواں
کہکشاں سے پرے، کہکشاں اور بھی
جھانکتی ہیں فضاؤں کے ہیچاک سے
رنگ اور نور کی وادیاں اور بھی
اور بھی منزلیں، اور بھی مشکلیں
ہیں ابھی عشق کے امتحاں اور بھی

آج دستِ جنوں پر ہے شمعِ خرد
دو جہاں جس کے شعلے سے معمور ہیں
لے کے آئیں پیامِ طلوعِ سحر
جتنے سورج خلاؤں میں مستور ہیں
کہہ دو برقِ تجلّی سے ہو جلوہ گر
آج موسیٰ نہیں ہم سرِ طور ہیں

13/اپریل1961

}{}{}{

# ذوقِ طلب

ہم اس دنیائے رنگ و بو کے طوفانوں سے گزرے ہیں
صنم خانوں سے اٹھے ہیں، پری خانوں سے گزرے ہیں
بڑھا کر تشنگی سے لذّتِ ذوقِ طلب اپنی
بھری مینا کو ٹھکرایا ہے، پیمانوں سے گزرے ہیں
گھڑی بھر شاخِ گل کی چھاؤں پر ٹھہرے تو کیا ٹھہرے
جھٹک کر دامنِ دل کو گلستانوں سے گزرے ہیں
غزل دل کی سنا کر اٹھ گئے ہیں بزمِ یاراں سے
بجاتے اپنی زنجیروں کو زندانوں سے گزرے ہیں
برنگ بوئے گل پیراہن و کاکل سے اڑ آئے
شبستانوں کے عاشق اور شبستانوں سے گزرے ہیں
ہوئی زنجیر پائے شوق، جب بھی آرزو دل کی
تمناؤں کو چھوڑا اور ارمانوں سے گزرے ہیں
چراغ لالہ و گل کر کے روشن اپنے قدموں سے
نسیمِ جانفزا کی طرح ویرانوں سے گزرے ہیں
اٹھایا ناز موجوں کا نہ احساں ہم نے ساحل کا
کوئی منزل ہو، آگے بڑھ گیا ہے کارواں دل کا

قدم اب کھینچ کر اُس دشت اُس وادی میں لائے ہیں
جہاں پر حوصلوں نے اپنے بازو آزمائے ہیں
نہ جانے کیا کشش ہے بمبئی تیرے شبستاں میں
کہ ہم شام اودھ صبحِ بنارس چھوڑ آئے ہیں
پپیہے بولتے ہیں، کوکتی ہیں کوئلیں جن میں
ہمارے دل پہ اُن گاتے ہوئے باغوں کے سائے ہیں
بجاتی ہیں ہوائیں شب کو خوابوں میں ستار اپنا
نشیمن شاخ دل پر سبزہ زاروں نے بنائے ہیں
ہمارے جسم کندن ہوگئے ہیں تیری کرنوں سے
ترے چشموں کی چاندی نے ہمارے منہ دھلائے ہیں
ترے زنداں کی تاریکی میں راتیں ہم نے کاٹی ہیں
تری سڑکوں پہ سوئے، تیری بارش میں نہائے ہیں
کبھی اشکوں کے تارے یاس کی پلکوں سے ٹوٹے ہیں
کبھی امید کے دامن میں موتی جگمگائے ہیں
کبھی نکلی ہیں آہیں لے کے مشعل ظلمتِ شب میں
کبھی نعروں نے پرچم آسمانوں تک اڑائے ہیں
ادائے سرکشی دی ہے غرورِ سر فروشی کو
تری سفاکیوں نے کتنے خنجر آزمائے ہیں
مگر پھر بھی ہمارا عالمِ مہر و وفا یہ ہے
کہ تجھ کو لکھنؤ کی طرح سینے سے لگائے ہیں
اتاری جارہی ہے چشم و دل سے آرتی تیری
چراغ شوق گیتوں کی ہتھیلی پر سجائے ہیں
مبارک ہم رکابِ گردشِ شام و سحر ہونا
مبارک ہم سے آزادوں کا تجھ کو ہم سفر ہونا

}{}{}{

# ہم نے دیکھا ہے

ہجومِ یاس میں ذوقِ فراواں ہم نے دیکھا ہے
کفِ صحرا پہ بھی رقصِ گلستاں ہم نے دیکھا ہے
رواں پایا ہے نبضِ خار میں خونِ بہاراں کو
دلِ ہر ذرّہ میں خورشید رخشاں ہم نے دیکھا ہے
بہاروں نے قدم چومے ہیں ہم وہ آبلہ پا ہیں
خزاں کو اپنی راہوں سے گریزاں ہم نے دیکھا ہے
یہ روشن کس کا رخ ہے کاکلِ امروز و فردا میں
لباسِ نور میں جلووں کو عریاں ہم نے دیکھا ہے
جگر کا خون ہو، دل کا لہو، یا اشک آنکھوں کے
انھیں کو گوہر و الماس و مرجاں ہم نے دیکھا ہے
رباب و بربط و طاؤسِ خوابیدہ کے سینے میں
وفورِ نغمہ سے تاروں کو لرزاں ہم نے دیکھا ہے
تہوں میں خاک کی جب کونپلیں کروٹ بدلتی ہیں
زمیں کے دل میں معشوقوں کو رقصاں ہم نے دیکھا ہے

}{}{}{

# غزل

شکستِ شوق کو تکمیلِ آرزو کہیے
جو تشنگی ہو تو پیمانہ و سبو کہیے

خیالِ یار کو دیجیے وصالِ یار کا نام
شبِ فراق کو گیسوئے مشک بو کہیے

چراغِ انجمنِ حیرتِ نظارہ تھے
وہ لالہ رو جنھیں اب داغِ آرزو کہیے

مہک رہی ہے غزل ذکرِ زلفِ خوباں سے
نسیمِ صبح کی مانند کو بہ کو کہیے

شکایتیں بھی بہت ہیں، حکایتیں بھی بہت
مزا تو جب ہے کہ یاروں کے روبرو کہیے

یہ حکم، کیجیے پھر خنجروں کی دلداری
دہانِ زخم سے افسانۂ گلو کہیے

زبانِ تیغ سے کرتے ہیں پرسشِ احوال
اور اس کے بعد یہ کہتے ہیں آرزو کہیے

ق

ہے زخم زخم مگر کیوں نہ جانیے اسے پھول
لہو لہو ہے، مگر کیوں اسے لہو کہیے

کہیے قامتِ یارانِ کج ادا کی قبا
حنائے پائے نگاران تند خو کہیے
جہاں جہاں بھی خزاں ہے وہیں وہیں ہے بہار
چمن چمن یہی افسانۂ نمو کہیے
زمیں کو دیجے دلِ مدعا طلب کا پیام
فضا کو وسعتِ دامانِ آرزو کہیے
سنواریے غزل اپنی بیانِ غالب سے
زبانِ میر میں بھی ہاں ہاں کبھو کبھو کہیے
مگر وہ حرف دھڑکنے لگے جو دل کی طرح
مگر وہ بات جسے اپنی گفتگو کہیے

ق

وہ جس کے فیض سے غالب ہوا تھا نغمہ سرا
زبان ہے جسے دلّی کی آبرو کہیے
روانی ایسی کہ گنگا کی کھائیے قسمیں
جوانی ایسی کہ جنت کی آبجو کہیے
رہے تو معجزۂ نطق کی دعا دیجے
مٹے تو آنکھ سے ٹپکا ہوا لہو کہیے
جراحتوں کی سیاست ہے جن کا فن سردار
اب ان سے کہیے تو کیا حاجتِ رفو کہیے

# مشرق و مغرب

زندگی ایک، زمیں ایک، انسان بھی ایک
فکر کا بحر بھی، جذبات کا طوفان بھی ایک
وہی سورج ہے، وہی چاند ہے، تارے ہیں وہی
نیلے آکاش کے گلرنگ کنارے ہیں وہی
شرق سے غرب تلک وقت کی پرواز ہے ایک
دل جو سینوں میں دھڑکتے ہیں تو آواز ہے ایک
ہیر مغموم ہے پنجاب کے میدانوں میں
جولیٹ روتی ہے انگلینڈ کے افسانوں میں
عشق کو بخش دیا ذوقِ تماشا ہم نے
حرفِ دل شعلۂ عارض سے تراشا ہم نے
باغ مشرق ہو کہ مغرب ہو، ہوا ایک سی ہے
سرد یا گرم، بہرحال فضا ایک سی ہے
ایشیا والے سے یورپ کی زمیں کھنچ کے نہ مل
میری سوغات بھی دل ہے تری سوغات بھی دل
جس نے لوٹا ہے ہمیں، جس نے ستم ڈھایا ہے
ارضِ مغرب نہیں مغرب کا وہ سرمایا ہے

اور سرمایہ نہ ہندی ہے نہ برطانی ہے
یہ مرے اور ترے خون کی ارزانی ہے
تیرا قاتل بھی وہی ہے مرا قاتل بھی وہی
زیست کی جہد بھی اور جہد کا حاصل بھی وہی
ٹیمس[1] اور سین[2] میں جمنا کی سی بے تابی ہے
موج ڈینوب[3] میں گنگا کی سی بے خوابی ہے
ایسا کچھ فرق نہیں دونوں گلستانوں میں
آہو رم خوردہ ہیں تیرے بھی بیابانوں میں
چشمے مغرب کے ہیں مشرق کے غزالہ کی طرح
نیلگوں سلسلۂ کوہ ہمالہ کی طرح
جنگلوں میں وہی آوارہ ہوا گاتی ہے
کسی بھٹکے ہوئے رہرو کی صدا آتی ہے
کلیاں کھلتی ہیں سنورتے ہوئے گیسو کے لیے
تتلیاں اڑتی ہیں بکھری ہوئی خوشبو کے لیے
پریاں موسم کی ہواؤں میں مچل جاتی ہیں
رت بدلتے ہی قبائیں بھی بدل جاتی ہیں
کشتیاں خوش ہیں سمندر کی گزرگاہوں سے
تیرے ساحل بھی جواں رہتے ہیں ملاحوں سے
تیری محرابیں بھی تہذیب کی انگڑائی ہیں
تیری آغوش میں بھی دہلی و شنگھائی ہیں
ایک جادو کا اثر گردشِ ایام میں ہے
زندگی یاں بھی طلسمِ سحر و شام میں ہے

---

1. انگلینڈ کا دریا جس کے کنارے لندن آباد ہے
2. فرانس کا دریا جس کے دونوں طرف پیرس آباد ہے
3. یورپ کا مشہور دریا جو کئی ملکوں سے گزرتا ہے۔

شب کو جلتے ہیں کنول صبح کو بجھتے ہیں چراغ
مسکراتے ہیں شبستاں میں جوانی کے ایاغ
صبح در کھلتے ہیں محبوب کی بانہوں کی طرح
رہرو ملتے ہیں راہوں میں نگاہوں کی طرح
دن کے نظاروں کو آنکھوں میں چھپا لیتی ہیں
کھڑکیاں رات میں پلکوں کو جھکا لیتی ہیں
دودھ مغرب کے بھی سینے میں رواں ہوتا ہے
ہندوایراں کی طرح طفل جواں ہوتا ہے
راستے دوڑ کے اسکولوں میں مل جاتے ہیں
بچے پھولوں کی طرح گھاس میں کھل جاتے ہیں
یاں بھی جو آنکھ ہے عالم کی تماشائی ہے
ہر نظر لذتِ دیدار کی شیدائی ہے
دل کا آہنگ حسیں تیرے بھی نغمات میں ہے
کیفیت روح کی رنگوں کے طلسمات میں ہے
خیر ہو پیرس و لندن کے ہنر داروں کی
خیر ہو روم کے، یونان کے بت کاروں کی
تیرے بازار میں یوسف بھی، زلیخا ئیں بھی
تیرے ویرانوں میں مجنوں بھی ہیں لیلائیں بھی
زور افلاس کا، دولت کی فراوانی بھی
یاں قباپوشی بھی ہے، چاک گریبانی بھی
حرف حق بھی ہے یہاں اور رسن ودار بھی
لذتِ شوق بھی ہے، جرأتِ کردار بھی
ہم حقیقت سے کبھی دور جو ہو جاتے ہیں
کچھ مظاہر کے طلسمات میں کھو جاتے ہیں
زہر سا نفرت و نخوت کا پیا کرتے ہیں

یوں ہی انسانوں کو تقسیم کیا کرتے ہیں
گیسو کالے ہیں مرے دیس کے محبوبوں کے
اور بادل ہیں سنہری ترے معشوقوں کے
آنکھیں نیلی ہیں تری شوخ حسیناؤں کی
جھلیں کاجل کی مرے آئینہ سیماؤں کی
مختلف کچھ ہیں تراشیں ترے پیراہن کی
شکلیں کچھ اور مرے جیب مرے دامن کی
اصلیت نکہتِ گل کی نہیں گلدانوں سے
مے بدلتی نہیں بدلے ہوئے پیمانوں سے
بوئے گل ایک سی ہے، بوئے وفا ایک سی ہے
میرے اور تیرے غزالوں کی ادا ایک سی ہے

دسمبر 1954

# تین شرابی

ذکر نہیں یہ فرزانوں کا
قصہ ہے اک دیوانوں کا

ماسکو، پیرس اور لندن میں
دیکھے میں نے تین شرابی
سرخ تھیں آنکھیں روح گلابی

نشۂ مے کا تاج جبیں پر
فکر فلک پر پاؤں زمیں پر
بے خبر اپنی لغزشِ پا سے
باخبر اپنے عہد وفا سے
دختر رز کے در کے بھکاری
اپنے قلب و نظر کے شکاری
پی لینے کے بعد بھی پیاسے
جام کی صورت چھلکے چھلکے
ابر کی صورت ہلکے ہلکے

مستی کی تلوار اٹھائے
فصلِ گل چہروں پہ کھلائے
قدم قدم پر بہک رہے تھے
مہک رہے تھے چہک رہے تھے

ایک نے شاید وہسکی پی تھی
دوسرے نے شمپین کی بوتل
تیسرے نے وہ پگھلی چاندی
وُودکا کی سیال حسینہ
وہ شے جس کی تابشِ رخ سے
شیشے کو آ جائے پسینہ

میں نے ان نازک لمحوں میں
روحِ بشر کو عریاں دیکھا
عہدِ خزاں کا رنگِ پریدہ
رنگِ عہدِ بہاراں دیکھا
ظاہر دیکھا پنہاں دیکھا

ذکر نہیں یہ فرزانوں کا
قصہ ہے اک دیوانوں کا

رات نے اپنی کالی زباں سے
خونِ شفق کے دل کا چاٹا
چار طرف خاموشی چھائی
پھیل گیا ہر سو سناٹا

ذت پیرس کے پہلو میں
سین[1] کی موجوں کو نیند آئی
ذسنے لگی مجھ کو تنہائی
مے خانے میں جاکر میں نے
آگ سے دل کی پیاس بجھائی

رند بہت تھے لیکن وہ سب
اپنے نشے میں کھوئے ہوئے تھے
جاگ رہی تھیں آنکھیں لیکن
دل تو سب کے سوئے ہوئے تھے
کوئی نہیں تھا ان میں میرا
میں یہ بیٹھا سوچ رہا تھا
کب یہ ظالم رات کٹے گی
کب واپس آئے گا سویرا

اتنے میں اک قامتِ رعنا
قدم قدم پر پھول کھلاتا
ہونٹوں سے معصوم تبسّم
آنکھوں سے بجلی برساتا
میخانے میں جھوم کے آیا
ناز و ادا کے دام بچھاتا
عیش و طرب کی محبوبائیں
نشۂ مے کی دوشیزائیں
رہ گئیں اپنی آنکھیں مل کر

---

1 سین وہ دریا جس کے دونوں ساحلوں پر پیرس کا خوبصورت شہر آباد ہے۔

آئی قیامت چال میں ڈھل کر
سکّوں کی جھنکار پہ گاتی
سونے کی تلوار نچاتی
اپنے لہو میں آپ نہاتی

اس نازک لمحے میں میں نے
حرص و ہوس کو رقصاں دیکھا
زد میں نظامِ زرداری کی
روحِ بشر کو لرزاں دیکھا
مجبوری کو عریاں دیکھا

ذکر نہیں یہ فرزانوں کا
قصہ ہے اک دیوانوں کا

گہرے کُہرے کی لہروں میں
سارا لندن ڈوب گیا تھا
لمحوں کی روشن آنکھوں میں
شام کا کاجل پھیل چکا تھا
رات کی نیلی دیوی جاگی
دن کے دیوتا کو نیند آئی
ڈسنے لگی مجھ کو تنہائی
میخانے میں جا کر میں نے
آگ سے دل کی پیاس بجھائی

اس محفل میں سب ہی کچھ تھا

ساقی بھی اور پیر مغاں بھی
صہبا کی آغوش کے پالے
طفلکِ مستی، رند جواں بھی
غازہ و رنگ کی معشوقائیں
جن کی لطافت شب بھر کی تھی
عطر اور ریشم کی مینائیں
جن کی صہبا لب بھر کی تھی
آج کا سکھ تھا، کل کا دکھ تھا
آج کی آشا، کل کی نراشا
ہنس ہنس کر غم دیکھ رہے تھے
ان جھوٹی خوشیوں کا تماشا
نا امیدی کے کاندھوں پر
رکھا تھا امید کا لاشا
آج وہ لے لیں، جو مل جائے
کل کیا ہوگا کون بتائے
آج دلوں کی شمع جلا لیں
کل شاید یہ رات نہ آئے
آج تو مے کی کشتی کھے لیں
کل یہ سفینہ ڈوب نہ جائے
آج لبوں کا بوسہ لے لیں
موت کا بوسہ کل لینا ہے
آج دلوں کا قرض چکا لیں
کل تو سب کچھ دے دینا ہے

اس نازک لمحے میں میں نے

روحِ بشر کو ویراں دیکھا
ایٹم بم کے خوف کے آگے
عقل و خرد کو حیراں دیکھا
سارے جہاں کو لرزاں دیکھا

ذکر نہیں یہ فرزانوں کا
قصہ ہے اک دیوانوں کا

دوشِ ہوا پر تاریکی نے
زلفوں کے خم کھول دیے تھے
ماسکو کی خاموش فضا میں
رات کی آنکھوں کے کاجل نے
کتنے جادو گھول دیے تھے
سرخ و سیہ مخمل کے اوپر
شام کے سایوں کو نیند آئی
ڈسنے لگی مجھ کو تنہائی
مے خانے میں جاکر میں نے
آگ سے دل کی پیاس بجھائی

خوش فکروں کا ابرِ بہاراں
جھوم پڑا تھا مے خانوں پر
بادہ کشوں کا رنگیں جھرمٹ
ٹوٹ پڑا تھا پیمانوں پر
ساز کی لے میں تیزی آئی
نشۂ مے کی انگڑائی نے

اپنا حسیں پرچم لہرایا
چپہ چپہ ذرہ ذرہ
قطرہ قطرہ رقص میں آیا
قصوں کے بے تاب بھنور کو
لب کے کٹورے چوم رہے تھے
رقص کے بیکل گردابوں میں
جسم کے طوفاں گھوم رہے تھے
چہروں کی روشن قندیلیں
باہوں کی دلکش محرابیں
مانگ نظر کی تابشی کے
جنبشِ مژگاں کی محرابیں
اس گردش میں درہم و برہم
سارا نظامِ شمس و قمر تھا
پگھل گئے تھے چاند اور سورج
محفل محفل میں رقصِ شرر تھا
رات کی پیشانی سے جیسے
تاروں کا جھومر ٹوٹ گیا ہو
پھر فلک کے ہاتھ سے جیسے
طشت زمرد چھوٹ گیا ہو
ہیرے نیلم لعل اور موتی
خاک پہ جیسے بکھر رہے ہیں
جیسے کسی کے برہم گیسو
بکھر بکھر کر سنور رہے ہوں
توڑ سے کے سر پہ پھینکی
عقل و خرد کا تاج دھرا تھا

دور سے بیٹھا بیٹھا مجھ کو
ایک شرابی دیکھ رہا تھا
اس نے ہوا میں ہاتھ سے اپنے
ننھا سا اک بوسہ پھینکا
اک تتلی سی اُڑتی آئی
میرے دل کے پھول کے اوپر
کچھ کانپی اور کچھ منڈلائی
بیٹھ گئی پر جوڑ کے دونوں
پیار کے رس کو چوس کے اٹھی
اور مری جانب سے ہوا میں
بوسہ بن کر پھر لہرائی
کچھ شرمائی، کچھ اترائی

اور شرابی میز سے اٹھ کر
رقص کے حلقوں سے ٹکراتا
کشتی کی صورت چکراتا
ہاتھ میں اپنا جام اٹھائے
میری جانب جھومتا آیا
خنداں خنداں، نازاں نازاں
رقصاں رقصاں، پیچاں پیچاں
موج ہوا کو چھوتا آیا

میری زباں تھی اردو، ہندی
اس کی زباں تھی روسی لیکن
ایک زباں تھی ایسی بھی جو

دونوں زبانوں سے پیاری تھی
دونوں جس کو بول رہے تھے
چند اشارے چند تبسم
نظروں کا خاموش تکلم
حرف بھی تھے، لفظ بھی تھے
شہد جو دل میں گھول رہے تھے
ہند کی مستی، روس کا نشہ
دونوں نے اک جام بنایا
اور ہوا میں اس کو نچایا
ساتھ ہمارے سب رندوں نے
اپنے دلوں کو ہاتھ میں لے کر
میرے وطن کا جام اٹھایا

اب جو میں نے غور کر دیکھا
جشن نہ تھا یہ دیوانوں کا
گرد ہمارے امن کی دیوی
گیت کی حوریں ساز کی پریاں
نغمے اور آواز کی لڑیاں
پیرس کی بد بخت حسینہ
مغرور امریکہ کا سپاہی
لندن کا بدمست شرابی
عیش و طرب کی محبوبائیں
نشۂ مے کی دوشیزائیں
غازہ و رنگ کی معشوقائیں
عطر اور ریشم کی میناکیں

حافظ اور غالب کی غزلیں
پشکن[1] اور ٹیگور کی نظمیں
کتنے ناچ اور کتنی ادائیں
کتنی شرمیں اور لجائیں
کتنے ماتھے کتنی بندیں
کتنے بت کتنی تصویریں
امن کی کوشش اور تدبیریں
شرق و مغرب کی تقریریں
حلقہ باندھے ناچ رہی تھیں

میں نے اس نازک لمحے میں
روحِ بشر کو نازاں دیکھا
نغمہ و رقص کے پیچ و خم میں
پیار کا جذبہ رقصاں دیکھا
سارے جہاں کو خنداں دیکھا

ذکر نہیں ہے فرقوں کا
قصہ ہے اک دیوتوں کا

ماسکو، بمبئی — دسمبر 1954، جنوری فروری 1955

1 انیسویں صدی کا مشہور روسی شاعر

# قطعہ

تبسمِ لبِ ساقی چمن کھلا ہی گیا
نشاطِ فصلِ بہاراں دلوں پہ چھا ہی گیا
کہو حکایتِ گیسو، فسانۂ قدِ یار
شکستِ دار و رسن کا زمانہ آ ہی گیا

# محفلِ یاراں

برگِ گل ہیں کہ کفِ پائے نگاراں ساقی
ہیں حنائی قدمِ بادِ بہاراں ساقی
لے کے آئی ہے صبا تہنیتِ جشنِ وصال
ہے جواں نکہتِ فردوس کناراں ساقی
ماہ رو ہوں افقِ ساغر و مینا سے طلوع
جگمگاتی رہے یہ محفلِ یاراں ساقی

پراگ جون 1955

)()()(

# جشنِ بادہ گساراں

یہ عیدِ وصالِ یاراں ہے
یہ جشنِ بادہ گساراں ہے
ہنستے ہوئے مکھڑوں پہ کیسے غنچے سے چٹکنے لگتے ہیں
اللہ رے فروغِ بادہ دے، گلزار مہکنے لگتے ہیں
مہتاب دمکنے لگتے ہیں، خورشید چمکنے لگتے ہیں
گردش میں نظامِ جام و سبو یا رقصِ شعلہ عذاراں ہے
یہ عیدِ وصالِ یاراں ہے
ہیں وجد میں ذرے ہستی کے، گردوں کے ستارے گاتے ہیں
نغمات کے گیسو کھلتے ہیں، بل کھاتے ہیں لہراتے ہیں
الفاظ کے پیکر میں ڈھل کر، معنی کے حسیں اتراتے ہیں
کیا حسنِ طلسمِ صوت و صدا کیا جادوئے خوش گفتاراں ہے
یہ عیدِ وصالِ یاراں ہے
مینائے شفق لہراتی ہے، یا جام میں سورج ڈھلتا ہے
پیمانوں اور پیالوں کے آغوش سے چاند نکلتا ہے
ہر قطرۂ مے کے سینے سے اک سیلِ نور ابلتا ہے
چھائی ہوئی ساری محفل پر بوئے فردوس کناراں ہے
یہ عیدِ وصالِ یاراں ہے

آنکھوں کو شفق آلودہ خوں، پلکوں کو گل افشاں رکھتے ہیں
ہم فکر سحر کی شمعوں سے، راتوں کو فروزاں رکھتے ہیں
ہم چاک گریباں میں اپنے، سو مہر درخشاں رکھتے ہیں
یاں رقص میں صبحیں رہتی ہیں، یہ محفل شب بیداراں ہے
یہ عید وصالِ یاراں ہے
وہ آئے یہاں جو رکھتا ہو مرنے کی تڑپ جینے کی لگن
وہ آئے جو سینے پر اپنے زخموں کا کھلا سکتا ہوں چمن
دنیا کی شہادت گاہ میں ہو جو اپنے لہو سے سرخ کفن
ہے چاکِ جگر کی شرط یہاں یہ حلقہ دل افگاراں ہے
یہ عید وصالِ یاراں ہے
یہ جشن بادہ گساراں ہے

# مرے عزیزو مرے رفیقو

(سلطانہ نے ایک خط لکھا کہ یہ لوگ تمھاری کمیونزم سے خائف ہیں)

مرے عزیزو مرے رفیقو
مری کمیونزم سے ہو خائف
مری تمنا سے ڈر رہے ہو
مگر مجھے کچھ گلا نہیں ہے
تمھاری روحوں کی سادگی سے
تمھارے دل کی صنم گری سے

مجھے یہ محسوس ہو رہا ہے
کہ جیسے بیگانہ ہو ابھی تک
تم اپنے اندازِ دلبری سے
کہ جیسے واقف نہیں ابھی تک
ستمگروں کی ستمگری سے
فریب نے جن کے آدمی کو
حقیر و بزدل بنا دیا ہے
حقیقتوں کے مقابلے میں
فرار کرنا سکھا دیا ہے

تمہیں یہ جس دن پتہ چلے گا
حیات سب کا تمہی ہے
حیات حسن عمل تمہی ہے
یہ ایک معجزہ بھی گوشہ
ایک تعزیت پیام سے ہے
عاشقی جنوں ہے یا حماقت
طویل و افسردہ تشنگی
عشق تو عشق تو ہے
تمہیں یہ جس دن پتہ چلے گا
حقیقتیں کہیں کے پیچھے
تمہاری آنکھوں میں جل بجھیں گے
یہ تم نے کیسے سمجھ لیا ہے
کہ دل ہوا حسن سے ہے عاشق
مری نظر حسن سے ہے عاشق
قریب آؤ تمہیں بتاؤں
مجھے محبت ہے آدمی سے
مجھے محبت ہے زندگی سے
مجھے محبت ہے مہ جبینوں
سے گل رخوں سے کلی بدنوں سے
کتابوں سے، دوستوں سے بچوں سے
سے پنچھیوں سے سمندروں سے

مری نگہ میں بسے ہوئے ہیں
ہزار اندازِ دلربائی
میں اپنے سینے کو چاک کر کے
اگر تمھیں اپنا دل دکھاؤں
تو تم کو ہر زخم کے چمن میں
ہزار سرو رواں ملیں گے
اداس مغموم وادیوں میں
ہزارہا نغمہ خواں ملیں گے
ہزار عارض، ہزار شمعیں
ہزار قامت، ہزار غزلیں
سبک خراماں غزال جیسے
ہزار ارماں ہزار امیدیں
فلک پہ تاروں کے جال جیسے

مگر کوئی توڑے دے رہا ہے
لرزتی مژگاں کے نشتروں کو
دلوں کے اندر اتارتا ہے
کوئی سیاست کے خنجروں کو
کسی کے زہریلے تیز ناخن
عقاب کے پنجہ ہائے خونیں
کی طرح آنکھوں پہ آ رہے ہیں
گلاب سے تن مثالِ بسمل
زمین پر تلملا رہے ہیں

جو پیاس پانی کی منتظر تھی
وہ سولیوں پر ٹنگی ہوئی ہے
وہ بھوک روٹی جو مانگتی تھی
صلیبِ زر پہ چڑھی ہوئی ہے
یہ ظلم کیسا، ستم یہ کیا ہے
میں سوچتا ہوں یہ کیا جنوں ہے
جہاں میں نانِ جویں کی قیمت
کسی کی عصمت، کسی کا خوں ہے

تمھیں بتاؤ مرے عزیزو
مرے رفیقو، تمھیں بتاؤ
یہ زندگی پارہ پارہ کیوں ہے
ہماری پیاری حسیں زمیں پر
یہ قتل گہ کا نظارہ کیوں ہے
مجھے بتاؤ کہ آج کیسے
سیاہ بارود کی لکیریں
کٹیلے کانٹوں، نکیلے سرے
سے بانکپن سے الجھ گئی ہیں
خزاں کے کانٹوں کی انگلیاں کیوں
ہر اک چمن سے الجھ گئی ہیں
مجھے بتاؤ لہو نے کیسے
حنا کے جادو کو دھو دیا ہے
حیات کے پیرہن کو انساں

کہ آنسوؤں نے بھگو دیا ہے
بتا سکو تو مجھے بتاؤ
کہ ساتھ تم سے کہاں ہیں چھوٹے
بتا سکو تو مجھے بتاؤ
کہ ہم کہاں پہ گئے ہیں چھوٹے

مرے قریب مرے بچے
مری تکمیل بچے تمہیں ہے
یہ عہد حاضر کی آبرو ہے
مری تکمیل تشنگی کو
حسن عطا نے کی آستہ ہے
یہ ایک معصوم جستجو ہے
تمہارے دل میں بھی جلے ایسی
کئی برس سال آستہ سے
کئی بچی سچی صراحی
کئی مہکی [illegible]
تمہا ہے ہمکو مرے قریب
مرے بچے تمہا ہے سچ
تمہارے چہرے میں کیا تمہیں ہے
تمہاری ٹھوکر سے جاگ اٹھے گی
تمہارے قدموں میں جو تپش ہے
بس ایک آتی کمی ہے یارو
کہ جس بچا نے تمہیں ہے

تمھاری آنکھوں میں کیا ہے سب کچھ
تمھاری آنکھوں میں سب جہاں ہے
تمھاری پلکوں کے نیچے دھرتی
تمھاری پلکوں پہ آسماں ہے
تمھارے ہاتھوں کی جنبشوں میں
ہے جوئے رنگِ بہار دیکھو
نہ دیکھو اس بیستونِ غم کو
تم اپنے تیشوں کی دھار دیکھو

تم اپنے تیشے اٹھا کے لاؤ
میں لے کے اپنی کدال نکلوں
ہزارہا سال کے مصائب
ہزارہا سال کے مظالم
جو روح و دل پر پہاڑ بن کر
ہزارہا سال سے دھرے ہیں
ہم اپنے تیشوں کی ضربِ کاری
سے ان کے سینوں کو چھید ڈالیں
یہ ہے صرف ایک شب کی محنت
جو عہد کر لیں تو، ہم سحر تک
حیاتِ نو کے نئے اجنتا
نئے ایلورا تراش ڈالیں

اکتوبر 1956

# نذرِ عقیدت

لیے سینے میں اپنے امنِ عالم کی مُراد آیا
دیارِ ہند سے ہیں سوئے استالن گراد [1] آیا
صدا دی والگا کی موج نے ختمِ مسافت پر
ادب سے پاؤں رکھنا اس زمینِ عزم و ہمت پر
بچھے ہیں خاک کے سینے پہ سینے سورماؤں کے
یہاں قدموں کے نیچے دل دھڑک اٹھتے ہیں ماؤں کے
بہاروں کی حفاظت کی ہے جاں دے کر جیالوں نے
لہو بو کر اگائی فصلِ گل نازک خیالوں نے
یہاں سے جنگ کا اور موت کا سیلِ جنوں گزرا
یہاں سے سیلِ آہن، سیلِ آتش، سیلِ خوں گزرا
یہاں کی آندھیاں شعلہ بناتی ہیں شراروں کو
ہوائیں تیز کر دیتی ہیں تلواروں کی دھاروں کو
ہراک ذرہ یہاں پیکر ہے جرأت آزمائی کا
یہاں ہے امتحاں سردار کی آتش نوائی کا
وفورِ اشک خوں میں کھو گیا جوشِ خطاب اپنا
ادب سے رکھ دیا گنجِ شہیداں پہ رباب اپنا

جولائی 1955

[1] استالن گراد : اس شہر کا نام اب والگوگراد ہے۔

# غزل

میں جہاں جاتا ہوں وہاں تک آؤ
میری نظروں سے گزر کر دل و جاں تک آؤ

پھر یہ دیکھو کہ زمانے کی ہوا ہے کیسی
ساتھ میرے مرے فردوس جواں تک آؤ

حوصلہ ہو تو اڑو میرے تصور کی طرح
میری تخیل کے گلزار جناں تک آؤ

تیغ کی طرح چلو چھوڑ کے آغوش نیام
تیر کی طرح سے آغوش کماں تک آؤ

پھول کے گرد پھرو باغ میں مانند نسیم
مثل پروانہ کسی شمع تپاں تک آؤ

لو وہ صدیوں کے جہنم کی حدیں ختم ہوئیں
اب ہے فردوس ہی فردوس جہاں تک آؤ

چھوڑ کر وہم و گماں حسن یقیں تک پہنچو
پر یقیں سے بھی کبھی وہم و گماں تک آؤ

اسی دنیا میں دکھادیں تمھیں جنت کی بہار
شیخ جی تم بھی ذرا کوئے بتاں تک آؤ

# جامِ محبت

بزمِ احباب ہے پیمانۂ گلرنگ اٹھائیں
شکوۂ جور و جفا غرق مئے ناب کریں
بادۂ سرخ کے خورشیدِ درخشاں کو جگائیں
آج ہر ساغرِ بلّور کو مہتاب کریں
ایک ہی گھونٹ میں چہروں کے کنول کھل جائیں
رات کے سیلِ سیہ رنگ کو شاداب کریں
پیاس کے دستِ جگر تاب میں دل جلتا ہے
دوستو آؤ علاجِ دلِ بیتاب کریں
لطف تو جب ہے کہ ٹوٹے ہوئے دل جڑ جائیں
آج اس طرح سے کچھ خاطرِ احباب کریں
چند جام اور ابھی روح کے تر ہونے تک
چند جام اور شبِ غم کی سحر ہونے تک

# سو رنگ

اس محفل صد رنگ میں سو رنگ ہیں میرے
ہر رنگ میں رقصاں ہوں گلستان جہاں میں
خوشبو کی طرح کاکلِ پیچاں کی گلی میں
شعلے کی طرح انجمنِ شعلہ رخاں میں
شمشیر بکف لشکر اعدائے وطن میں
پیمانہ بکف محفل پیمانہ کشاں میں
تلوار کی آغوش میں فولاد کے مانند
تیشے کی طرح کارگہ شیشہ گراں میں
نشتر کی طرح تیز دلِ اہلِ ہوس میں
مانند شرر گرم رگ سنگِ گراں میں
کانٹے کی طرح دیدۂ ارباب ستم میں
سرمے کی طرح چشمِ حسینانِ جہاں میں
خورشید جہاں تاب کا ساغر بھی پگھل جائے
وہ آتشِ سیال ہے پیمانۂ جاں میں
بت خانۂ عالم میں ہوں مصروف پرستش
جس طرح برہمن ہو کوئی کوئے بتاں میں

}{}{}{}{

# غزل

لغزشِ گام لیے لغزشِ مستانہ لیے
آئے ہم بزم میں پھر جرأتِ رندانہ لیے

عشق پہلو میں ہے پھر جلوۂ جانانہ لیے
زلف اک ہاتھ میں، اک ہاتھ میں پیمانہ لیے

یاد کرتا تھا ہمیں ساقی و مینا کا ہجوم
اُٹھ گئے تھے جو کبھی رونقِ میخانہ لیے

وصل کی صبح شبِ ہجر کے بعد آئی ہے
آفتابِ رخِ محبوب کا نذرانہ لیے

عصرِ حاضر کو مبارک ہو نیا دورِ عوام
اپنی ٹھوکر میں سرِ شوکتِ شاہانہ لیے

}{}{}{}{

# غزل

تخلیق پہ فطرت کی گزرتا ہے گماں اور
اس آدمِ خاکی نے بنایا ہے جہاں اور

یہ صبح ہے سورج کی سیاہی سے اندھیری
آئے گی ابھی ایک سحر مہر چکاں اور

بڑھنی ہے ابھی اور بھی مظلوم کی طاقت
گھٹنی ہے ابھی ظلم کی کچھ تاب وتواں اور

تر ہوگی زمیں اور ابھی خون بشر سے
روئے گا ابھی دیدۂ خونابہ فشاں اور

بڑھنے دو ذرا اور بھی کچھ دست طلب کو
بڑھ جائے گی دو چار شکن زلفِ بتاں اور

کرنا ہے ابھی خون جگر صرف بہاراں
کچھ دیر اٹھانا ہے ابھی ناز خزاں اور

ہم ہیں وہ بلاکش کہ مصائب سے جہاں کے
ہوجاتے ہیں شائستۂ غم ہائے جہاں اور

# غزل

کام اب کوئی نہ آئے گا بس اک دل کے سوا
راستے بند ہیں سب کوچۂ قاتل کے سوا

باعث رشک ہے تنہاروی رہرو شوق
ہم سفر کوئی نہیں دوریٔ منزل کے سوا

ہم نے دنیا کی ہر اک شے سے اٹھایا دل کو
لیکن اس شوخ کے ہنگامۂ محفل کے سوا

تیغ منصف ہو جہاں، دارورسن ہوں شاہد
بے گنہ کون ہے، اس شہر میں قاتل کے سوا

جانے کس رنگ سے آئی ہے گلستاں میں بہار
کوئی نغمہ ہی نہیں شورِ سلاسل کے سوا

# غزل

کھلے ہیں مشرق و مغرب کی گود میں گلزار
مگر خزاں کو میسر نہیں یقین بہار
خبر نہیں ہے بتوں کے بنانے والوں کو
تمیز ہو تو مہ و کہکشاں ہیں شکار
اسی سے تیغ نگہ آب دار ہوتی ہے
تجھے بتاؤں بڑی شے ہے جرأت انکار
کیے ہیں شوق نے پیدا ہزار ویرانے
اک آرزو نے بسائے ہیں لاکھ شہر دیار
نشاط صبح بہاراں تجھے نصیب نہیں
ترے نگہ میں ہے بیتی ہوئی شبوں کا خمار
فروخت ہوتی ہے انسانیت سی جنس گراں
جہاں کو پھونک نہ دے گی یہ گرمیِ بازار
یہی ہے زینت و آرائش عروس سخن
مگر فریب بھی دیتی ہے شوخی گفتار

1954

# غزل

ظلم کی کچھ میعاد نہیں ہے
داد نہیں فریاد نہیں ہے
قتل ہوئے ہیں اب تک کتنے
کوئے ستم کو یاد نہیں ہے
آخر روئیں کس کو کس کو
کون ہے جو برباد نہیں ہے
قید، چمن بھی بن جاتا ہے
مُرغِ چمن آزاد نہیں ہے
لطف ہی کیا گر اپنے مقابل
سطوت برق و باد نہیں ہے
سب ہوں شاداں سب ہوں خنداں
تنہا کوئی شاد نہیں ہے
دعوتِ رنگ و نکہت ہے یہ
خندۂ گل برباد نہیں ہے

# غزل

ہم جو محفل میں تری سینہ فگار آتے ہیں
رنگ بر دوش، گلستاں بہ کنار آتے ہیں

چاک دل، چاک جگر چاک گریباں والے
مثلِ گل آتے ہیں، مانند بہار آتے ہیں

کوئی معشوق سزاوارِ غزل ہے شاید
ہم غزل لے کے سوئے شہرِ نگار آتے ہیں

کیا وہاں کوئی دل و جاں کا طلبگار نہیں
جا کے ہم کوچۂ قاتل میں پکار آتے ہیں

قافلے شوق کے رکتے نہیں دیواروں سے
سینکڑوں مجس و زنداں کے دیار آتے ہیں

منزلیں دوڑ کے رہرو کے قدم لیتی ہیں
بوسۂ پا کے لیے راہ گذار آتے ہیں

خود کبھی موج و تلاطم سے نہ نکلے باہر
پار جو سارے زمانے کو اتار آتے ہیں

کم ہو کیوں ابروئے قاتل کی کمانوں کا کھنچاؤ
جب سرِ تیرِ ستم آپ شکار آتے ہیں

}{}{}{}{

# غزل

کتنی آشاؤں کی لاشیں سوکھیں دل کے آنگن میں
کتنے سورج ڈوب گئے ہیں چہروں کے پیلے پن میں
بچوں کے میٹھے ہونٹوں پر پیاس کی سوکھی ریت جمی
دودھ کی دھاریں گائے کے تھن سے گر گئیں ناگوں کے پھن میں
ریگستانوں میں جلتے ہیں پڑے ہوئے سو نقش قدم پر
آج خراماں کوئی نہیں ہے امیدوں کے گلشن میں
چکناچور ہوا خوابوں کا دلکش، دلچسپ آئینہ
ٹیڑی ترچھی تصویریں ہیں ٹوٹے پھوٹے درپن میں
پائے جنوں میں پڑی ہوئی ہیں حرص و ہوا کی زنجیریں
قید ہے اب تک ہاتھ سحر کا تاریکی کے کنگن میں
آنکھوں کی کچھ نورس کلیاں نیم شگفتہ غنچۂ لب
کیسے کیسے پھول بھرے ہیں گلچینوں کے دامن میں
دستِ غیب کی طرح چھپا ہے ظلم کا ہاتھ ستم کا وار
خشک لہو کی بارش دیکھی ہم نے کوچہ و برزن میں

}{}{}{

# غزل

یاد آتے ہیں عہد جنوں کے کھوئے ہوئے دلدار بہت
ان سے دور بسائی بستی، جن سے ہمیں تھا پیار بہت

ایک اک کر کے کھلی تھیں کلیاں ایک اک کر کے پھول گئے
ایک اک کر کے ہم سے بچھڑے باغ جہاں میں یار بہت

حسن کے جلوے عام ہیں لیکن ذوق نظارہ عام نہیں
عشق بہت مشکل ہے لیکن عشق کے دعوے دار بہت

زخم لہو یا کھلتی کلیاں، ہاتھ مگر گلدستہ ہے
باغ وفا سے ہم نے چنے ہیں پھول بہت اور خار بہت

جو بھی ملا ہے لے آئے ہیں داغ دل یا داغ جگر
وادی وادی منزل منزل بھٹکے ہیں سردار بہت

# لمحوں کے چراغ

وہ نیند کی طرح نرم سبزہ
خوابوں کی طرح رمیدہ شبنم
پھولوں کی طرح شگفتہ چہرے
خوشبو کی طرح لطیف باتیں
کرنوں کی طرح جواں تبسم
شعلے کی طرح دہکتی خواہش
تاروں کی طرح چمکتی آغوش
ساغر کی طرح چھلکتے سینے
سب قافلۂ عدم کے راہی
وادیٔ عدم میں چل رہے ہیں
تاریکیوں کے کھلے ہیں پرچم
لمحوں کے چراغ جل رہے ہیں
ہر لمحہ حسیں اور جواں ہے
ہر لمحہ فروغ جسم و جاں ہے
ہر لمحہ عظیم و جاوداں ہے

# یہ زندگی ہے

یہ زندگی ہے طویل کتنی
یہ زندگی کتنی مختصر ہے
کبھی شب ہجر ہے کبھی یہ
وصال محبوب کی سحر ہے
کبھی خزاں کی طویل گھڑیوں
میں انتظار بہار جیسے
کبھی مسرت کے ایک لمحے
میں جنبش چشم یار جیسے
کبھی روش ہے چمن کی لیکن
کبھی یہ صحرا کی رہگزر ہے
یہ زندگی ہے طویل کتنی
یہ زندگی کتنی مختصر ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

# حسین تر

کل ایک تو ہوگی اور اک میں
کوئی رقیب رفیق صورت
کوئی رفیق رقیب ساماں
مرے ترے درمیاں نہ ہوگا

ہماری عمر رواں کی شبنم
تری سیہ کاکلوں کی راتوں
میں تار چاندی کے گوندھ دے گی
ترے حسیں عارضوں کے رنگیں
گلاب بیلے کے پھول ہوں گے
شفق کا ہر رنگ غرق ہو گا
لطیف و پر کیف چاندنی میں
تری کتابِ رخِ جواں پر
کہ جو غزل کی کتاب ہے اب
زمانہ لکھے گا اک کہانی
اور ان گنت جھرّیوں کے اندر
مری محبت کے سارے بوسے
ہزار لب بن کے ہنس پڑیں گے

ہم اپنی بجھتی ہوئی شبوں کی
سلونی پرچھائیوں کو لے کر
ہم اپنے عہد طرب کی شاموں
سحر کی رعنائیوں کو لے کر
پرانی یادوں کے جسم عریاں
کے واسطے پیرہن بنیں گے

پھر ایک تو ہوگی اور اس میں
کوئی رقیب رفیق صورت
کوئی رفیق رقیب ساماں
مرے ترے درمیاں نہ ہوگا
ہوس کی نظروں کو تیرے رخ پہ
جمالِ نو کا گماں نہ ہوگا
فقط مری حسن آزمودہ
نظر یہ تجھ کو بتا سکے گی
کہ تیری پیری کا حسن تیرے
شباب سے بھی حسین تر ہے

# میرا سفر

'ہمچو سبزہ بارہا روئیدہ ایم'

(رومی)

پھر اک دن ایسا آئے گا
آنکھوں کے دیئے بجھ جائیں گے
ہاتھوں کے کنول کمھلائیں گے
اور برگِ زباں سے نطق و صدا
کی ہر تتلی اڑ جائے گی
اک کالے سمندر کی تہہ میں
کلیوں کی طرح سے کھلتی ہوئی
پھولوں کی طرح سے ہنستی ہوئی
ساری شکلیں کھو جائیں گی
خوں کی گردش، دل کی دھڑکن
سب راگنیاں سو جائیں گی
اور نیلی فضا کی مخمل پر
ہنستی ہوئی ہیرے کی یہ کنی
یہ میری جنت میری زمیں
اس کی صبحیں اس کی شامیں
بے جانے ہوئے بے سمجھے ہوئے

اک مشتِ غبارِ انساں پر
شبنم کی طرح رو جائیں گی
ہر چیز بھلا دی جائے گی
یادوں کے حسیں بت خانے سے
ہر چیز اٹھا دی جائے گی
پھر کوئی نہیں یہ پوچھے گا
سردار کہاں ہے محفل میں

لیکن میں یہاں پھر آؤں گا
بچوں کے دہن سے بولوں گا
چڑیوں کی زباں سے گاؤں گا
جب بیج ہنسیں گے دھرتی میں
اور کونپلیں اپنی انگلی سے
مٹی کی تہوں کو چھیڑیں گی
میں پتی پتی، کلی کلی
اپنی آنکھیں پھر کھولوں گا
سر سبز ہتھیلی پر لے کر
شبنم کے قطرے تولوں گا
میں رنگِ حنا، آہنگِ غزل
اندازِ سخن بن جاؤں گا
رخسارِ عروسِ نو کی طرح
ہر آنچل سے چھن جاؤں گا
جاڑوں کی ہوائیں دامن میں
جب فصلِ خزاں کو لائیں گی
رہرو کے جواں قدموں کے تلے

سوکھے ہوئے پتوں سے میرے
ہنسنے کی صدائیں آئیں گی
دھرتی کی سنہری سب ندیاں
آکاش کی نیلی سب جھیلیں
ہستی سے مری بھر جائیں گی
اور سارا زمانہ دیکھے گا
ہر قصہ مرا افسانہ ہے
ہر عاشق ہے سردار یہاں
ہر معشوقہ سلطانہ ہے

میں ایک گریزاں لمحہ ہوں
ایام کے افسوں خانے میں
میں ایک تڑپتا قطرہ ہوں
مصروف سفر جو رہتا ہے
ماضی کی صراحی کے دل سے
مستقبل کے پیمانے میں
میں سوتا ہوں اور جاگتا ہوں
اور جاگ کے پھر سو جاتا ہوں
صدیوں کا پرانا کھیل ہوں میں
میں مر کے امر ہو جاتا ہوں

1956

# کوچۂ چاک گریباں

دلِ وحشی کو دیا دستِ جنوں نے مژدہ
کوچۂ چاک گریباں میں بہار آئی ہے
آج دیوانوں کو ہر چیز میسّر ہو گی
درد کی شمع، تصوّر کا پری خانہ بھی
اور تمناؤں کی گل چہرہ کنیزوں کا ہجوم
زخمِ سر، زخمِ جگر اب بہت ارزاں ہوں گے
وحشتِ دل کے لیے دشت و بیاباں ہوں گے
راہ میں دار و رسن محبس و زنداں ہوں گے
کوچۂ یار میں مر رہنے کے ساماں ہوں گے
کوچۂ چاک گریباں میں بہار آئی ہے

}{}{}{

# ایک بات

اس پہ بھولے ہو کہ ہر دل کو کچل ڈالا ہے
اس پہ بھولے ہو کہ ہر گل کو مسل ڈالا ہے
اور ہر گوشۂ گلزار میں سناٹا ہے

کسی سینے میں مگر ایک فغاں تو ہو گی
آج وہ کچھ نہ سہی کل کو جواں تو ہو گی

وہ جواں ہو کے اگر شعلۂ جوالہ بنی
وہ جواں ہو کے اگر آتش صدسالہ بنی
خود ہی سوچو کہ ستم گاروں پہ کیا گزرے گی

}{}{}{}{

# نِوالا

ماں ہے ریشم کے کارخانے میں
باپ مصروف سوتی مل میں ہے
کوکھ سے ماں کی جب سے نکلا ہے
بچہ کھولی کے کالے دل میں ہے
جب یہاں سے نکل کے جائے گا
کارخانوں کے کام آئے گا
اپنے مجبور پیٹ کی خاطر
بھوک سرمائے کی بڑھائے گا
ہاتھ سونے کے پھول اگلیں گے
جسم چاندی کا دھن لٹائے گا
کھڑکیاں ہوں گی بینک کی روشن
خون اس کا دیئے جلائے گا
یہ جو ننھا ہے بھولا بھالا ہے
صرف سرمائے کا نوالا ہے
پوچھتی ہے یہ اس کی خاموشی
کوئی مجھ کو بچانے والا ہے

# دو چراغ

تیرگی کے سیاہ غاروں سے
شہپروں کی صدائیں آتی ہیں
لے کے جھونکوں کی تیز تلواریں
ٹھنڈی ٹھنڈی ہوائیں آتی ہیں
برف نے جن پہ دھار رکھی ہے

ایک میلی دکان تیرہ و تار
اک چراغ اور ایک دوشیزہ
یہ بجھی سی ہے وہ اداس سا ہے
دونوں جاڑوں کی لمبی راتوں میں
تیرگی اور ہوا سے لڑتے ہیں

تیرگی اٹھ رہی ہے میداں سے
فوج در فوج بادلوں کی طرح
اور ہواؤں کے ہاتھ ہیں گستاخ
توڑے لیتے ہیں ننھے شعلے کو
نوچے لیتے ہیں میلے آنچل کو

لڑکی رہ رہ کے جسم ڈھانپتی ہے
شعلہ رہ رہ کے تھرتھراتا ہے
ننگی بوڑھی زمین کانپتی ہے

تیرگی اب سیہ سمندر ہے
اور ہوا ہو گئی ہے دیوانی
یا تو دونوں چراغ گل ہوں گے
یا کریں گے وہ شعلہ افشانی
پھونک ڈالیں گے تیرگی کی متاع

پر مجھے اعتماد ہے ان پر
گو غریب اور بے زبان سے ہیں
دونوں ہیں آگ دونوں ہیں شعلہ
دونوں بجلی کے خاندان سے ہیں

# دردِ عشق

(ایک پرانی تصویر دیکھ کر)

نثار تیری خموشی کے اے نگارِ جواں
نگارِ شعلہ طراز و نگارِ نغمہ نواز
نگاہیں دیکھ رہی ہیں مری طرف اب بھی
مگر شگفتہ نہیں غنچۂ لب و آواز
خبر نہیں کہ تجھے بھی ہے کچھ خبر اس کی
کہ بجتے رہتے ہیں پھر بھی جو ٹوٹ جاتے ہیں ساز
بھٹکتی رہتی ہے اکثر شکستِ دل کی صدا
تڑپتی رہتی ہے سینے میں آرزوئے نیاز
بہارِ عشق جواں مرگ صورتِ گلِ نو
مثالِ خار مگر عمرِ دردِ عشق دراز

# اہلِ درد

کوئی مقام نہیں اہلِ درد کے قابل
کوئی بہشت نہیں اہلِ آرزو کے لیے
تمام صحنِ چمن مقتلِ تمنا ہے
کفن لہو کا ملا ذوقِ جستجو کے لیے
ہوئے شکار کبھی تیغِ دوست کی خاطر
ہدف بنے ہیں کبھی ناوکِ عدو کے لیے
لیا ہے ہنس کے کبھی سنگِ محتسب سر پہ
سپر ہوئے ہیں کبھی ساغروسبو کے لیے
کبھی مثالِ نسیمِ بہار آوارہ
کسی خیال کے گیسوئے مشک بو کے لیے
نشیبِ خاک کبھی شوقِ خاکساری میں
فرازِ دار کبھی عظمتِ گلو کے لیے
وفائے عشق سے کوئی خفا نہیں لیکن
بس ایک تیغ کہ پیاسی ہے جو لہو کے لیے
اب آج پھرتے ہیں بے آبرو تو غم کیا ہے
وطن عزیز وطن تیری آبرو کے لیے

# دو شعر

ہر منزل اک منزل ہے نئی اور آخری منزل کوئی نہیں
اک سیلِ روانِ دردِ حیات اور درد کا ساحل کوئی نہیں

ہر گام پہ خوں کے طوفاں ہیں، ہر موڑ پہ بسمل رقصاں ہیں
ہر لحظہ ہے قتلِ عام مگر کہتے ہیں کہ قاتل کوئی نہیں

# دو شعر

یہ نہ پوچھ تیری جفاؤں کے جو ہوئے شکار کہاں گئے
ترے کوچے ہی میں وہ دفن ہیں وہ وفا شعار کہاں گئے

کبھی دیکھا لکھنو دیس میں، کبھی ڈھونڈا دتی دیار میں
جنھیں کج ادائیاں آتی تھیں وہ ہمارے یار کہاں گئے

## دو شعر

شوق کی راہ میں گُل اور کبھی خار ملے
ہم کو ہر طرح کے ہر رنگ کے دلدار ملے

دھوم تھی شہر زلیخا کے شبستانوں کی
کتنے یوسف تھے کہ رُسوا سرِ بازار ملے

## دو شعر

عشق پابندیٔ آداب سے چھوٹا تو سہی
حاصلِ عمر ہے اک لغزشِ پا اے ساقی

اس اندھیرے میں کہ ملتی نہیں انسان کو راہ
صرف تابندہ ہے شاعر کی نوا اے ساقی

# غزل

خزاں ہے چار دن کی پھر بہاراں
چمن، محبوب، جشنِ مے گساراں
کڑی ہے زندگی کی دھوپ لیکن
ہری شاخِ نہالِ یادِ یاراں
مبارک سُرمۂ مژگانِ خوباں
سلامت دشنۂ چشمِ نگاراں
خوشا معشوقیِ عاشق نوازاں
زہے محبوبیِ یزداں شکاراں
وہ شامِ شوخیِ شعلہ فروشاں
وہ صبحِ جلوۂ آتش عذاراں
یہ فصلِ نعرہ ہائے انقلابی
یہی ہے موسمِ صورت ہزاراں
فضائیں دیر سے ہیں ابر آلود
کہاں ہے کاروانِ برق و باراں

# تین شعر

خونِ دل ہے تو رواں رنگِ بہاراں نہ سہی
نالۂ غم ہے جواں، صوتِ ہزاراں نہ سہی

رشتۂ درد تو ہے رشک و حسد کی صورت
میری قسمت میں نہیں الفتِ یاراں نہ سہی

دل کی تسکیں کے لیے کم نہیں سامانِ نشاط
شب مہتاب سہی، صبح بہاراں نہ سہی

# غزل

شبوں کی، زلف کی، روئے سحر کی خیر مناؤ
نگارِ شمس عروسِ قمر کی خیر مناؤ
سپاہِ دشمنِ انسانیت قریب آئی
دیارِ حسن سرِ رہ گزر کی خیر مناؤ
ابھی تو اوروں کے دیوار و در پہ یورش تھی
اب اپنے سایۂ دیوار و در کی خیر مناؤ
چلی ہے آتش و آہن کے دل سے بادِ سموم
چمن کے جلوۂ گلہائے تر کی خیر مناؤ
گزر نہ جائے کہیں بحر و بر سے خون کی دھار
فروغِ شبنم و آب و گہر کی خیر مناؤ
یہ نفع خوروں کی دانش فروش دنیا ہے
متاعِ علم کی، جنسِ ہنر کی خیر مناؤ
مرے لیے ہے مری مفلسی و ناپاکی
تم اپنی پاکیِ قلب و نظر کی خیر مناؤ

☆☆☆☆☆☆☆☆

# تخلیق کا کرب

ابھی ابھی مری بے خوابیوں نے دیکھی ہے
فضائے شب میں ستاروں کی آخری پرواز
خبر نہیں کہ اندھیرے کے دل کی دھڑکن ہے
کہ آ رہی ہے اجالوں کے پاؤں کی آواز
بتاؤں کیا تجھے نغموں کے کرب کا عالم
لہو لہان ہوا جا رہا ہے سینۂ ساز

☆☆☆☆☆☆☆☆

# دو شعر

برگِ خشک و زرد بھی ہے گلستاں کو سازگار
ہے خزاں آئینہ دارِ حسنِ تجدیدِ بہار
ہے ہمیشہ سے یہی افسانۂ پست و بلند
حرفِ باطل زیبِ ممبر، حرفِ حق بالائے دار

☆☆☆☆☆☆☆☆

## دو شعر

تمام رات اندھیرے کا جسم جلتا رہا
تمام رات چٹختا رہا سیاہ بلور

تمام رات ستاروں کی طرح پلکوں پر
لرزتے اشک سناتے رہے حکایت نور

☆☆☆☆☆☆☆☆

## دو شعر

کسی حسیں نہ کسی دلربا کی بات کرو
کرو تو اس بُتِ کافر ادا کی بات کرو

شکست وعدۂ محبوب سے اداس ہو کیوں
پھر ایک وعدۂ صبر آزما کی بات کرو

☆☆☆☆☆☆☆☆

# دو شعر

پسند کیوں قاتلوں کو آئیں ہمارے زخمِ بدن کی باتیں
سناؤ پھولوں کا ذکر ان کو، کرو نہ ان سے چمن کی باتیں

حسین ہے آرزو تو اے دل حسین ہو حرفِ آرزو بھی
کریں گے اس یارِ سرو قد سے ہم آج سرو سمن کی باتیں

# تین شعر

یہ بوئے گل ہے کہ ہے بوئے پیرہن تیری
ہری بھری رہے اے دوست انجمن تیری

تمام سینۂ سحر ہے تمام روحِ شفق
کہ دل سے پھوٹ رہی ہے مرے کرن تیری

مری نظر کا ہے جادو کہ تیرے حسن کا سحر
بہار پھیل گئی ہے چمن چمن تیری

# سلام

مری وفا کی طرف سے چلی ہے لے کے صبا
مرے حبیب تری دلنوازیوں کو سلام
تری نگاہِ محبت سے دل کی وادی میں
کیا ہے آ کے بہاروں کے قافلوں نے قیام
چھلکتے ہیں مری یادوں کے میکدے میں ابھی
وہ تیرے پیار کے ساغر ترے شباب کے جام
افق پہ میرے تصوّر کے کانپتا ہے ابھی
نیاز و ناز کی مہکی شبوں کا ماہِ تمام
دمکتی ہے میرے سینے پہ تیرے رخ کی سحر
مہکتی ہے مرے شانوں پہ تیری زلف کی شام
سرورِ عشق کی پابندیوں کا ضامن ہے
دل و جگر پہ تری دلبری کا نقشِ دوام
ترا خیال کچھ اس طرح دل میں آتا ہے
کہ جیسے ساز کے تاروں پہ راگنی کا خرام
کہ جیسے غنچۂ نورس پہ قطرۂ شبنم
کہ جیسے سینۂ شاعر پہ بارشِ الہام
کہ جیسے سرخ لبوں پہ کرن تبسم کی

اے جبیں دیدۂ پرنم میں عشق کا پیغام
جو تو نہیں تھی تو اک درد بے دوا تھی حیات
ترے بغیر محبت کی زندگی تھی حرام
تو مل گئی ہے تو آساں ہیں زیست کی راہیں
سبک سبک سی ہے کچھ آج گردشِ ایام

جنوری 1954

## قطعہ

حسن تیرا کبھی گل اور کبھی مہتاب ہوا
کبھی آئینہ کبھی مہرِ جہاں تاب ہوا
دلِ بیتاب مرا ریگِ رواں کی صورت
تیرے دیدار کی شبنم سے نہ سیراب ہوا

# تین شعر

کنارِ شوق میں تو اور ویراں ہے کنار اپنا
ترے ہونٹوں سے پی کے بڑھ گیا رنجِ خمار اپنا

جنھیں اپنا سمجھ کر ہم تھے نازاں وہ بھی کیا نکلے
نہ باقی احترام ان کا نہ باقی اعتبار اپنا

طلوعِ آدمیت ہے بہت آہستہ آہستہ
ابھی انسان کو کرنا ہے صدیوں انتظار اپنا

# تین شعر

جنونِ زلف معنبر نہیں تو کچھ بھی نہیں
دماغِ عقل معطر نہیں تو کچھ بھی نہیں 1

بہت حسین سہی زندگی کا بت خانہ
نگاہ شوق صنم گر نہیں تو کچھ بھی نہیں

جوابِ تلخِ لبِ یار ہو کہ بوسۂ یار
اگر وہ قندِ مکرر نہیں تو کچھ بھی نہیں

1. بہ این لطیفہ دماغِ خرد معطر کن (حافظ شیرازی)

# دو شعر

دل ترے لیے ہے پھر، زخمِ تازہ کی سوغات
آج ظلم پر اپنے، پھر کوئی پشیماں ہے

کیا عجب سحر تک خود آفتاب بن جائے
اک چراغ پلکوں پر شام سے فروزاں ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

# قطعہ

ہوائے صبحِ مشرق جاگ اٹھی ہے
چمن میں آتشِ گل تیز تر ہے
نگارِ ایشیا ہے گل بداماں
کہ عیدِ شعلہ و جشنِ شرر ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

# پانچ شعر

جس سے پہچان لیا کرتے تھے دشمن کو بھی
آپ کا بھی تو کچھ انداز عنایت ہے وہی

یہ فقط طرز ادا، رنگ قبا کا ہے فریب
قد ستم کا ہے وہی، ظلم کا قامت ہے وہی

قصر و ایواں میں نیا جشن ہو یہ ممکن ہے
رہگزاروں میں مگر شورِ قیامت ہے وہی

آ کے منزل پہ بھی ملتا نہیں منزل کا سراغ
اپنی گم کردہ رہی ان کی قیادت ہے وہی

گر یہی آپ کا اندازِ ستم رانی ہے
میرے اشعار میں تبلیغِ بغاوت ہے وہی

☆☆☆☆☆☆☆☆

# آباد ویرانے

اجنبی لگتے ہیں چھ شہروں کے ایوانوں میں ہم
کتنے آوارہ ہیں ان آباد ویرانوں میں ہم
پیاس کی شدت سے جب گھبرا کے چیخ اٹھتی ہے روح
بجلیاں حل کر کے پی جاتے ہیں پیمانوں میں ہم
اس دیار بیکسی میں زندگی ممکن نہیں
ہاں مگر زندہ رہیں گے غم کے افسانوں میں ہم
بوئے آدم، بوئے گل، بوئے وفا ملتی نہیں
گھوم آئے ہیں تیرے شبستانوں میں ہم
آہ یہ جنس فراواں کس قدر نایاب ہے
ڈھونڈتے پھرتے ہیں انسانوں کو انسانوں میں ہم

☆☆☆☆☆☆☆☆

# مرے خواب

پھر مرے خواب تصور کے جواں شہزادے
مستیِ شوق کی گلرنگ قبائیں پہنے
بزم امروز میں پیمانہ بکف آئے ہیں
پوچھتے ہیں کوئی پیاسا تو نہیں محفل میں
کوئی بھوکا تو سرِ راہ نہیں سوتا ہے
موجِ مے کس نے چھپا رکھی ہے میخانوں میں
بجلیاں کس نے دبا رکھی ہیں پیمانوں میں
ساقی خاموش ہے اور پیرِ مغاں شرمندہ

# ایک پھول

میں دیکھ چکا ہوں سب بہاریں
بیٹھا ہوں گلوں کی انجمن میں
کتنی ہے لطافت اور نزاکت
بیلے کی کلی کے کنوارے پن میں
کیا رنگ کنول کے ہے لبوں پر
کیا رس ہے گلاب کے دہن میں
چمپا کے بدن میں ہے جو خوشبو
ملتی نہیں حور کے بدن میں
اک پھول ہے تو بھی شوخ و شاداب
ریشم کے لرزتے پیرہن میں
لیکن ہے تری ادا کچھ اور
کچھ اور ہے تیرے بانکپن میں
شرمندہ ہیں دختران گلزار
گلزار ہے ایسا تیرے تن میں
جو نکہت و رنگ میں ہو تجھ سا
اک پھول بھی تو نہیں چمن میں
پھولوں کی بہشت باغ میں ہے
اور تیری بہشت میرے من میں
یہ عمر شگوفہ کار تیری
راس آئے تجھے بہار تیری

# قطعہ

عطا ہوئی ہے مرے دل کی سلطنت تجھ کو
حریم جاں میں اتر شمع دلبری لے کر
گزر وفا کے شبستان رنگ و نکہت میں
مزاج آدمی و شیوۂ پری لے کر

☆☆☆☆☆☆☆☆

# ترے پیار کا نام

دل پہ جب ہوتی ہے یادوں کی سنہری بارش
سارے بیتے ہوئے لمحوں کے کنول کھلتے ہیں
پھیل جاتی ہے ترے حرفِ وفا کی خوشبو
کوئی کہتا ہے مگر روح کی گہرائی سے
شدتِ تشنہ لبی بھی ہے ترے پیار کا نام

☆☆☆☆☆☆☆☆

# جب ترا نام لیا

جب ترا نام لیا دل نے، تو دل سے میرے
جگمگاتی ہوئی کچھ جھل مل سی راتیں نکلیں
اپنی پلکوں پہ سجائے ہوئے اشکوں کے چراغ
سر جھکائے ہوئے کچھ ہجر کی شامیں گزریں
قافلے کتنے گئے پھر درد کے صحراؤں میں
درد جو تیری طرح نور بھی ہے نار بھی ہے
دشمن جاں بھی ہے، محبوب بھی، دلدار بھی ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

# درد اک چاند ہے

درد اک چاند ہے
ہوتا ہے جو سینے میں طلوع
غم ہے اک نشترِ نور
جو دل و جاں کے اندھیرے میں اتر جاتا ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

# غم کا ہیرا

غم کا ہیرا
دل میں رکھو
کس کو دکھاتے پھرتے ہو
یہ چوروں کی دنیا ہے

☆☆☆☆☆☆☆☆

## اجنبی آنکھیں

ہماری شامیں ان میں ڈوبیں
ہماری راتیں ان میں کھوئیں
ہمارے ساغر ان میں ٹوٹے
ہماری ہستی
غرق ان آنکھوں میں ہے
دیکھتی ہیں وہ مجھے لیکن بہت بیگانہ وار

٭٭٭٭٭٭٭٭

## شعلہ لبی

یہ مری شعلہ لبی
تشنہ لبی کی تکمیل
اور تری شعلہ لبی
آتش سیال کا جام
کر دیا جس نے حریف لب پیمانہ مجھے

٭٭٭٭٭٭٭٭

# پیاس بھی ایک سمندر ہے

پیاس بھی ایک سمندر ہے سمندر کی طرح
جس میں ہر درد کی دھار
جس میں ہر غم کی ندی ملتی ہے
اور ہر موج
لپکتی ہے کسی چاند سے چہرے کی طرف

# شعلہ و شبنم

شعلہ ہے ایک نظر ایک نظر ہے شبنم
ایک آئینۂ صد رنگ تمہارا عالم
کبھی دلدار ہو تم اور کبھی پتھر کے صنم
تم ہی قاتل ہو مرے تم ہی مسیحا میرے

# یاقوت لبی

کون دے سکتا ہے یاقوت لبی کی قیمت
کون کر سکتا ہے قرضِ نگہ یار ادا
دونوں عالم ہیں ترے ایک تبسم کا خراج

# چاند کو رخصت کر دو

میرے دروازے سے اب چاند کو رخصت کر دو
ساتھ آیا ہے تمھارے جو تمھارے گھر سے
اپنے ماتھے سے ہٹا دو یہ چمکتا ہوا تاج
پھینک دو جسم سے کرنوں کا سنہری زیور
تم ہی تنہا مرے غم خانے میں آ سکتی ہو
ایک مدت سے تمھارے ہی لیے رکھا ہے
میرے جلتے ہوئے سینے کا دمکتا ہوا چاند
دل خوں گشتہ کا ہنستا ہوا خوش رنگ گلاب

# آرزو کے صنم خانے

میں نے جانا تھا کہ اب کچھ بھی نہیں ہے باقی
شکوۂ جور و جفا، شکریۂ لطف و کرم
لب ہیں پیمانے، نہ اندازِ نظر ہے ساقی
مٹ گئی کاہش جاں، ختم ہوئی لذت غم

یک بیک پھر وہی مدہوش ہوائیں آ میں
کھیلتی رہتی تھیں جو گیسوئے جاناں کے قریب
یک بیک جاگ اٹھے عشق کے خوابیدہ نصیب

آئی پھر خنکی گل، شعلۂ رخسار کی آنچ
شامِ گیسو کی مہک، صبح بدن کی خوشبو
آئے پھر رقص کناں دشت وفا کے آہو
ایک اک کر کے پلٹ آئے گریزاں لمحے
ایک اک کر کے ہوئے سارے ستارے روشن
وہی ہاتھوں کی تمنا وہی رنگیں دامن

دل نے چھیڑی ہے پھر شوق ملاقات کی بات
گائے آنکھوں نے نئی ساعت دیدار کے گیت
پھر وہی عشق کی ہار اور وہی حسن کی جیت
پھر وہی کاوشِ جاں اور وہی لذتِ غم
شکوۂ جور و جفا شکریۂ لطف و کرم

میں نے جانا تھا کہ اب کچھ بھی نہیں ہے باقی
آرزو ہے کہ صنم خانے سجا لائی ہے
دل میں سوئی ہوئی یادوں کو سجا لائی ہے

# تم نہیں آئے تھے جب

تم نہیں آئے تھے جب، تب بھی تو موجود تھے تم
آنکھ میں نور کی اور دل میں لہو کی صورت
درد کی لو کی طرح، پیار کی خوشبو کی طرح
بے وفا وعدوں کی دلداری کا انداز لیے

تم نہیں آئے تھے جب، تب بھی تو تم آئے تھے
رات کے سینے میں مہتاب کے خنجر کی طرح
صبح کے ہاتھ میں خورشید کے ساغر کی طرح
شاخِ خوں رنگِ تمنا میں گلِ تر کی طرح

تم نہیں آؤ گے جب، تب بھی تو تم آؤ گے
یاد کی طرح، دھڑکتے ہوئے دل کی صورت
غم کے پیمانۂ سرشار کو چھلکاتے ہوئے
برگ ہائے لب و رخسار کو مہکاتے ہوئے
دل کے بجھتے ہوئے انگارے کو دہکاتے ہوئے
زلف در زلف بکھر جائے گا پھر رات کا رنگ
شبِ تنہائی میں بھی لطفِ ملاقات کا رنگ

روز آئے گی صبا کوئے صباحت سے پیام
روز گائے گی سحر تہنیتِ جشنِ فراق

آؤ آنے کی کریں بات کہ تم آئے ہو
اب تم آئے ہو تو میں کون سی شے نذر کروں
کہ مرے پاس بجز مہر و وفا کچھ بھی نہیں
ایک خوں گشتہ تمنا کے سوا کچھ بھی نہیں

# تو مجھے اتنے پیار سے مت دیکھ

تو مجھے اتنے پیار سے مت دیکھ
تیری پلکوں کے نرم سائے میں
دھوپ بھی چاندنی سی لگتی ہے
اور مجھے کتنی دور جانا ہے
ریت ہے گرم، پاؤں کے چھالے
یوں دہکتے ہیں جیسے انگارے
پیار کی یہ نظر رہے نہ رہے
کون دشتِ وفا میں جلتا ہے
تیرے دل کو خبر رہے نہ رہے
تو مجھے اتنے پیار سے مت دیکھ

# بہت قریب ہو تم

بہت قریب ہو تم، پھر بھی مجھ سے کتنی دور
کہ دل کہیں ہے، نظر ہے کہیں، کہیں تم ہو
وہ جس کو پی نہ سکی میری شعلہ آشامی
وہ کوزۂ شکر و جامِ انگبیں تم ہو

مرے مزاج میں آشفتگی صبا کی ہے
ملی کلی کی ادا، گُل کی تمکنت تم کو
صبا کی گود میں، پھر بھی صبا سے بیگانہ
تمام حسن و حقیقت، تمام افسانہ

وفا بھی جس پہ ہے نازاں وہ بے وفا تم ہو
جو کھو گئی ہے مرے دل کی وہ صدا تم ہو
بہت قریب ہو تم، پھر بھی مجھ سے کتنی دور
حجابِ جسم ابھی ہے، حجابِ روح ابھی
ابھی منزلِ صد مہر و ماہ باقی ہے
حجاب فاصلہ ہائے نگاہ باقی ہے
وصالِ یار ابھی تک ہے آرزو کا فریب

# تمھارے ہاتھ

تمھارے نرم حسیں، دل نواز ہاتھ نہیں
مہک رہے ہیں مرے ہاتھ میں بہار کے ہاتھ
مچل رہی ہیں ہتھیلی میں انگلیوں کی لویں
تڑپتی نبض کہے جا رہی ہے پیار کی بات
پگھل رہی ہے رخِ آتشیں پہ ہجر کی شام
نکل رہی ہے سیہ زلف سے وصال کی رات

# نسیم تیری قبا

نسیم تیری قبا، بوئے گُل ہے پیراہن
حیا کا رنگ ردائے بہار اوڑھاتا ہے
ترے بدن کا چمن ایسے جگمگاتا ہے
کہ جیسے سیلِ سحر، جیسے نور کا دامن
ستارے ڈوبتے ہیں چاند جھلملاتا ہے

# پیاس کی آگ

میں کہ ہوں پیاس کے دریا کی تڑپتی ہوئی موج
پی چکا ہوں میں سمندر کا سمندر پھر بھی
ایک اک قطرۂ شبنم کو ترس جاتا ہوں
قطرۂ شبنم اشک
قطرۂ شبنم دل، خونِ جگر
قطرۂ نیم نظر
یا ملاقات کے لمحوں کے سنہری قطرے
جو نگاہوں کی حرارت سے ٹپک پڑتے ہیں
اور پھر لمس کے نور
اور پھر بات کی خوشبو میں بدل جاتے ہیں
مجھ کو یہ قطرۂ شاداب بھی چکھ لینے دو
دل میں یہ گوہر نایاب بھی رکھ لینے دو
خشک ہیں ہونٹ مرے، خشک زباں ہے میری
خشک ہے درد کا، نغمے کا گلو
میں اگر پی نہ سکا وقت کا یہ آب حیات
پیاس کی آگ میں ڈرتا ہوں کہ جل جاؤں گا

☆☆☆☆☆

# قتّالۂ عالم

اک ادا یہ بھی ہے قتالۂ عالم تیری
آج پہلو میں جو محبوب بنی بیٹھی ہے
دلبری اپنی جتاتا ہو ستم گر جیسے
قامت ناز ہے تلوار کا پیکر جیسے
سائے مژگاں سے برستے ہوئے نشتر جیسے

سارے عالم کی شکاری تری زلفوں کی کمند
کبھی مقتل، کبھی زنداں، کبھی مے خانہ ہے
بزمِ یاراں ہے کبھی، کوئے نگاراں ہے کبھی
شمع کی آگ ہے سوزِ دلِ پروانہ ہے
ماتمِ زخمِ خزاں، بادِ بہاراں ہے کبھی
ہم نے ہر حال میں ہر رنگ میں چاہا ہے تجھے
زندگی جان کے سینے سے لگایا ہے تجھے
وصل اور ہجر کے آئینے میں دیکھا ہے تجھے
تیرے ساغر کو پیا زہر کا ساغر جیسے
بوسۂ لب ہے ترا، بوسۂ خنجر جیسے

# قطعہ

نسیمِ صبحِ تصور یہ کس طرف سے چلی
کہ میرے دل میں چمن در کنار آتی ہے
کہیں ملے تو مرے گلبدن سے کہہ دینا
ترے خیال سے بوئے بہار آتی ہے

٭٭٭٭٭٭٭٭

# غزل

خوبر روئے خوش جمال ہیں ہم
ناز پروردۂ وصال ہیں ہم

ہم کو یوں رائیگاں نہ کر دینا
حاصل فصل ماہ و سال ہیں ہم

رنگ ہی رنگ، خوشبو ہی خوشبو
گردش ساغرِ خیال ہیں ہم

رونق کاروبار ہستی میں
ہم نے مانا شکستہ حال ہیں ہم

مال وزر، مال و زر کی قیمت کیا
صاحب دولت کمال ہیں ہم

کس کی رعنائی خیال ہے تو
تری رعنائی جمال ہیں ہم

ایسے دیوانے پھر نہ آئیں گے
دیکھ لو ہم کو بے مثال ہیں ہم

دولت حسن کا زوال ہے تو
دولت عشق کا زوال ہیں ہم

# غزل

نام اس نو گلِ رنگیں کا لیا ہے کہ نہیں
عطر افشاں نفسِ بادِ صبا ہے کہ نہیں

دیکھنا پھول سے کھلتے ہوئے ہونٹوں میں مرے
غنچۂ دل کے چٹکنے کی صدا ہے کہ نہیں

وصل کی صبح تو منسوب ترے نام سے ہے
ہجر کی رات کا بھی کوئی خدا ہے کہ نہیں

اک ذرا اس کا جو اندازِ جفا ہو معلوم
ہم بتا سکتے ہیں اس بت میں وفا ہے کہ نہیں

کاکلِ ناز، ترے حلقۂ عنبر بو میں
میری قسمت کی کوئی شامِ بلا ہے کہ نہیں

# غزل

حسرتِ دل ہے ساقیِ محفل، ڈھلتی ہے صہبائے خیال
شامِ تمنا خون سے رنگیں، اشک سے روشن صبحِ جمال

کج ہے کلاہِ ہجر بھی سر پر، اہلِ دل کی شان نہ پوچھ
روشن اس آئینے میں ہے، جاہ و جلالِ عہدِ وصال

شاخِ نہالِ درد و غم پر غنچۂ دل پھر خون ہوا
اتنا شوخ نہیں تھا یارو، رنگِ بہاراں اگلے سال

ساز سے کوئی نغمہ نکلے، دل میں کوئی پھول کھلے
ایک بار تو اپنی زباں سے پوچھ ہمارے درد کا حال

رات بہت تاریک ہے، شاید دشمن شب خوں ماریں گے
مشعلِ جاں بجھنے مت دینا، روشن رکھنا شمعِ خیال

روٹھنے والا کوئی نہیں ہے، کوئی منانے والا نہیں
ایسا تو اے دل نہ پڑا تھا اس سے پہلے غم کا کال

# غزل

ابھی اور تیز کر لے، سرِ خنجرِ ادا کو
مرے خوں کی ہے ضرورت، تری شوخیِ حنا کو

تجھے کس نظر سے دیکھے یہ نگاہِ درد آگیں
جو دعائیں دے رہی ہے، تری چشمِ بے وفا کو

کہیں رہ گئی ہو شاید، ترے دل کی دھڑکنوں میں
کبھی سن سکے تو سن لے، مری خوں شدہ نوا کو

کوئی بولتا نہیں ہے، میں پکارتا رہا ہوں
کبھی بت کدے میں بت کو، کبھی کعبے میں خدا کو

# غزل

نغمۂ زنجیر ہے اور شہر یاراں ان دنوں
ہے بہت اہلِ جنوں، شورِ بہاراں ان دنوں

اس وفا دشمن سے پیمانِ وفا ہے استوار
زیرِ سنگِ سخت ہے پھر دستِ یاراں ان دنوں

محتسب بھی حلقۂ رنداں کا ہے امیدوار
کم نہ ہو جائے وقارِ میگساراں ان دنوں

تیزیٔ تیغِ ادا کی شہرتیں ہیں دور دور
ہے بہت آباد کوئے دل فگاراں ان دنوں

دوستو پیراہنِ جاں خونِ دل سے سرخ تر
بڑھ گیا ہے التفاتِ گل عذاراں ان دنوں

اہلِ دل پر بارشِ لطفِ نگاہِ دلنواز
مہرباں ہے عشق پر چشمِ نگاراں ان دنوں

ہے گدائے میکدہ کے سر پہ تاجِ خسروی
کوزہ گر کی گِل ہے خاکِ شہر یاراں ان دنوں

کیا عجب عشرت کدوں پر بجلیاں گرنے لگیں
ہے بہت سرکش نگاہِ سوگواراں ان دنوں

# تین شعر

رفیق بھی ہے تری یاد غم گسار بھی ہے
لہو میں ڈوبی ہوئی تیغِ آب دار بھی ہے

خزاں شکستِ بہاراں کا نام ہے لیکن
خزاں پیام برِ صبحِ نو بہار بھی ہے

گزرتا رہتا ہے یادوں کی کہکشاں سے کوئی
مگر کسی کا ہر اک لمحہ انتظار بھی ہے

# دو سنّاٹے

ہم نہیں ہیں، یہ گلے ملتے ہیں دو سنّاٹے
خامشی ہے کہ مہکتی ہے گُلِ تر کی طرح
تیرے ہونٹوں پہ لرزتی ہے کرن کی صورت
میرے سینے پہ اتر آئی ہے خنجر کی طرح

# شعلۂ حسن

شعلۂ حسن ترا آگ ہے اپنی روشن
اپنی خوشبو سے مہک اٹھا ہے گلشن میں گلاب
انکھڑیوں نے تری کاجل کا جگایا جادو
تیرے ہاتھوں نے کیا رنگ حنا کو شاداب
تیری محفل ہے کہ تہذیب دل و جاں کا سبق
میں نے سیکھے ہیں یہاں عشق و جنوں کے آداب

# قطعہ

آ ترے ہونٹ چوم لوں اے مژدہ نجات
صدیوں کے بعد ختم پہ آئی ستم کی رات
ہر شاخ پر کھلے ہوئے رنگ شفق کے پھول
ہر نخل کی کمر میں نسیم سحر کا ہات

☆☆☆☆☆☆☆☆

# قطعہ

ابھی جواں ہے غم زندگی کا ہر لمحہ
دھڑک رہا ہے دل بیقرار کی صورت
حسین و شوخ ہے مستقبل بشر کا خیال
کسی تبسم بے اختیار کی صورت

☆☆☆☆☆☆☆☆

# تن کی چاندی من کا سونا

ہم نے بیچی تن کی چاندی
ہم نے بیچا من کا سونا
آنکھ کے ہیرے
ہاتھ کے دریا
بازاروں میں لے کر نکلے
پھر بھی مفلس اور کنگال

اور انھوں نے
ہم سے خریدی تن کی چاندی
ہم سے خریدا من کا سونا
لوٹ لیے آنکھوں کے ہیرے
پی لیے ہاتھوں کے دریا
اور کہلائے
صاحب دولت، صاحبِ مال

لیکن اک دن
تن کی چاندی، من کا سونا

آنکھ کے ہیرے، ہاتھ کے دریا
سب واپس آ جائیں گے
اور زمانہ ہو گا نہال
اور دنیا ہوگی خوش حال
کوئی نہ ہو گا صاحب دولت
کوئی نہ ہو گا صاحب مال
کوئی نہ رہ جائے گا مفلس
کوئی نہ ہو گا پھر کنگال

# قطعہ

متحد ہوکے اٹھے ظلم کے قدموں سے عوام
سارے گم گشتہ عزیزان جہاں مل ہی گئے
لاکھ گلشن میں بچھائے تھے خزاں نے کانٹے
قدم باد بہار آئے تو گل کھل ہی گئے

# شامِ غم

شامِ غم صبحِ عشرت کی تمہید ہے
بھیگی آنکھوں میں تارے کھٹکتے رہیں
نوکِ مژگاں پہ نشتر چمکتے رہیں
دل کے داغوں سے یہ رات روشن رہے
خوں کے دھبوں سے گلزار دامن رہے
آج زخموں کو ہنسنے کی تاکید ہے

آرزو کی ہتھیلی پہ جلتا رہے
شوخیِ حسن رنگِ حنا کا کنول
بس تمنا کا ساغر چھلکتا رہے
مل ہی جائے گا ناکامیوں کا بدل
ہجر کے درد کا چاند بجھ جائے گا
دیکھو وہ زیرِ دامانِ رنگ شفق
وصلِ محبوب کا سرخ خورشید ہے

ہو بلا سے جو ہے سخت تر امتحاں
داؤں پر لگ چکے دین و دل، جسم و جاں

عاشقوں کو کہاں فکر سود و زیاں
رکنے والا نہیں شوق کا کارواں
ہمسفر آندھیاں ہم قدم بجلیاں
دل کو منظور اس شوخ کی دید ہے

ہر خزاں ہے بہاراں کی پیغام بر
سرحد شب پہ روشن سوادِ سحر
پردۂ خاموشی میں ہے گرمِ نوا
اک نئی زندگی کا نیا نغمہ گر
سارا عالم محبت کی آغوش ہے
وصل ہی وصل ہے تا بہ حدِ نظر
آج دیدارِ محبوب کی عید ہے

# لطفِ سخن

جب ہوں رسوا سرِ بازار تو ہے لطفِ سخن
حرفِ حق جب ہو سرِ دار تو ہے لطفِ سخن
اپنے اور غیر ہوں سچ کہنے پہ آمادۂ قتل
اور نہ ہو کوئی طرف دار تو ہے لطفِ سخن
مصلحت وقت کی اقرار سکھائے لیکن
دل میں ہو جرأت انکار تو ہے لطفِ سخن
ظلم کے خوف کے اور موت کے سناٹے میں
ایک اک حرف ہو بیدار تو ہے لطفِ سخن

# سناٹا

رواں ہیں وقت کے پر ہول رہگزاروں پر
ہزاروں سال کے درماندہ رہروانِ حیات
نہ کوئی منزلِ آسودگی نہ راہِ نجات

طویل ظلم کا صحرا، طویل جبر کا دشت
یہ آفتاب، سر آسماں پہ آگ کا طشت
افق سے تا بہ افق ہے ہوائے گرم کا گشت

نہ کوئی سایہ کہیں ہے نہ کوئی پرچھائیں
شجر ہوا میں اُڑے جاتے ہیں دھواں ہو کر
ہر ایک سمت صدا دے رہے ہیں سناٹے
خموشی بولتی ہے خوف کی زباں ہو کر

* * * * * * * *

# خنجروں کی روشنی

تیرگی کی سازشیں ، بد بختیوں کا اژدہام
کوچۂ احساس میں ہنگامۂ شور نشور
ہر طرف پھیلی ہوئی ہے خنجروں کی روشنی
ہر طرف بکھرا ہوا ہے ایک خوں آلودہ نور
رنگ رخ کے آئینے، آنکھوں کے ساغر چور چور
پھر بھی دھڑکے ہی چلا جاتا ہے قلبِ ناصبور

مشعلِ جاں شعلہ ساماں، دردِ انساں سر بلند
ظلم کی شامیں مبارک، غم کی راتیں ارجمند

کس قدر سفاک ہیں ان قاتلوں کے خط و خال
کتنی تابندہ شہیدانِ وفا کی ہے جبیں
شوخ اور بے باک کتنا بے گناہوں کا لہو

خنجروں کی روشنی تھی تیرگی کی ہم نوا
خنجروں کی روشنی تھی دشمنِ خوابِ سحر
خنجروں کی روشنی تھی باعثِ زخمِ جگر
روزنِ زخمِ جگر سے پھر سحر پیدا ہوئی
اور تاریکی کے گوشوں میں سمٹ کر رہ گئی
سازشوں کی تیرہ بختی خنجروں کی روشنی

ہ ہ ہ ہ ہ ہ ہ ہ ہ

# قطعہ

یہ ایک خوشی درد کے دامن میں پلی ہے
ابت سب دا س نغمے و ل کے گلہ ہے
یہ اس کی  ت صبا ، کلی چیں
نکلیں سے ر پیر شہید ں کے لہو سے

# جب صبا آئے گی

جب صبا آئے گی ہر زلف کو مہکاتی ہوئی
رنگ کے جام در و بام سے چھلکاتی ہوئی
برگ صد لالہ و گل راہ میں بکھراتی ہوئی
شب کی مے صبح کے پیمانے میں ڈھل جائے گی
ختم ہو جائیں گے سب سردئ دل تلخئ جاں
شمع افسردگئ روح پگھل جائے گی
باغ خوابیدہ سہی، ننھی شبنم پہ نہ جاؤ
یہ تو ہیں رات کے آنسو جو ٹپک جائیں گے
ایک اک شاخ میں ہے دوڑی ہوئی آتش گل
جب صبا آئے گی شعلے بھی چمک جائیں گے
لب مہک اٹھیں گے رخسار دہک جائیں گے
جب صبا آئے گی ہر زلف کو مہکاتی ہوئی

# قتلِ آفتاب

شفق کے رنگ میں ہے قتلِ آفتاب کا رنگ
افق کے دل میں ہے خنجر، لہولہان ہے شام
سفید شیشۂ نور اور سیاہ بارشِ سنگ
زمیں سے تا بہ فلک ہے بلند رات کا نام

یقیں کا ذکر ہی کیا ہے کہ اب گماں بھی نہیں
مقامِ درد نہیں منزلِ فغاں بھی نہیں
وہ بے حسی ہے کہ جو قابلِ بیاں بھی نہیں
کوئی ترنگ ہی باقی رہی نہ کوئی امنگ
جبینِ شوق نہیں، سنگِ آستاں بھی نہیں
رقیب جیت گئے ختم ہو چکی ہے جنگ
دلوں میں شعلۂ غم بجھ گیا ہے کیا کیجے
کوئی حسین نہیں جس سے اب وفا کیجے
سوائے اس کے کہ قاتل کو ہی دعا دیجے

مگر یہ جنگ نہیں وہ جو ختم ہو جائے
اک انتہا ہے فقط حسن ابتدا کے لیے
بچھے ہیں خار کہ گزریں گے قافلے گل کے

خموشی مہر بہ لب ہے کسی صدا کے لیے
اداسیاں ہیں یہ سب نغمہ و نوا کے لیے

وہ پہنا شمع نے پھر خونِ آفتاب کا تاج
ستارے لے کے اٹھے نور آفتاب کے جام
پلک پلک پہ فروزاں ہیں آنسوؤں کے چراغ
لویں لچکتی ہیں یا بجلیاں چمکتی ہیں
تمام پیرہنِ شب میں بھر گئے ہیں شرار

ہزار لب سے زمیں کہہ رہی ہے قصۂ دار
ہزار گوشِ جنوں سن رہے ہیں افسانہ

چٹک رہی ہیں کہیں تیرگی کی دیواریں
لچک رہی ہیں کہیں شاخِ گل کی تلواریں
سنک رہی ہے کہیں دشتِ سرکشی میں ہوا
چہک رہی ہے کہیں بلبلِ بہار نوا
مہک رہا ہے وفا کے چمن میں دل کا گلاب
چھلک رہی ہے لب و عارض و نظر کی شراب

جوان خوابوں کے جنگل سے آ رہی ہے نسیم
نفس میں نکہتِ پیغامِ انقلاب لیے
خبر ہے قافلۂ رنگ و نور نکلے کا
سحر کے دوش پہ اک تازہ آفتاب لیے

ㅇㅇㅇㅇㅇㅇㅇㅇ

# برہنہ پا ہے بہار

تمھارے تن پہ سلامت تمھارا پیراہن
ہمارے پاس یہ دامانِ تار تار سہی
تمھارے زیرِ قدم فرشِ گل بساطِ بہار
ہمارے پاؤں میں دشتِ جنوں کے خار سہی

کسی کی بھوک سے بھرتے نہیں ہیں پیٹ اپنا
کسی کی پیاس سے لب اپنے تر نہیں کرتے
برہنگی سے کسی کی لباس کیوں لیں گے
بہشت پر بھی ہوس کی نظر نہیں کرتے

ہمارے دل کی تپش سے چراغ جلتے ہیں
ہماری تشنہ لبی میکدے بناتی ہے
نگاہِ ساقیِ نا مہرباں کا شکوہ کیا
ہمارے نام کی صہبا چھلک ہی جاتی ہے

تمھیں خبر بھی ہے آوارگانِ کوچۂ شوق
شکستہ دل ہیں شگفتہ دلوں کے یار بھی ہیں

بلاکشانِ محبت کا احترام کرو
خراب حال سہی، فخرِ روزگار بھی ہیں

ہماری طرح گریبانِ صبحِ نو بھی ہے چاک
فروغِ چاکِ گریباں ہے اہلِ دل کا شعار
ہماری طرح سے گلزار و دشت وصحرا میں
برہنہ سر ہے صبا اور برہنہ پا ہے بہار

# پیغمبر مسیحا دست[1]

(حضرت عیسیٰ کے مبارک ہاتھوں کے نام)

سنا ہے آئے گا پیغمبر مسیحا دست
قدیم عہد کی صورت نئے زمانے میں
صلیب ودار کو ہو گا عدالتوں سے عروج
دروغ رنگ بھرے گا ہر اک فسانے میں[2]

صدائے حسن وصداقت لہو میں ڈوبے گی
کریں گے دوست بھی اقرار دوستی سے گریز[3]
تُلے گی چاندی کے سکوں میں دل کی جنس وفا[4]
ہوائیں تیغ بکف ہوں گی، شاخ گل خوں ریز

---

1. اس نظم کے سارے حوالے انجیل کی روایت کے مطابق ہیں۔
2. حضرت عیسیٰ کے خلاف عدالت میں کوئی الزام ثابت نہ ہو سکا پھر بھی انھیں صلیب پر چڑھایا گیا۔
3. بارہ حواریوں میں سے ایک نے رات بھر میں تین بار حضرت عیسیٰ کو پہچاننے سے انکار کیا۔
4. ایک حواری نے چاندی کے تیس سکے لے کر حضرت عیسیٰ کو قاتلوں کے حوالے کر دیا۔

نشیبِ خاک بھرے گا قمار خانوں سے
فرازِ دار پہ ہو گا پیمبری کا مقام [1]
گھٹا کی طرح سے جھومیں گے تیرگی کے نشان
سیاہ رو نظر آئے گا آفتاب کا جام [2]

سنا ہے نکلے گی میلادِ نو کے جشن کی بات
صلیبِ ظلم سے اترے گی پھر مسیح کی لاش
نقوشِ پاک قدم بحر و بر پہ چمکیں گے
بڑھے گی اور بھی کچھ دل شکستگاں کی تلاش [3]
وفورِ نور سے معمور ہو گا دیدۂ کور
کرن کی طرح سے بالیدہ انگلیاں ہوں گی [4]
سروں پہ سایۂ رحمت بنیں گے دستِ شفیق
جبینِ درد سے پیدا تجلیاں ہوں گی [5]
نکالے جائیں گے پھر زندگی کے معبد سے
بشر کے اشکوں کے تاجر لہو کے بیوپاری [6]
خدا کے نام کو نیلام کر نہ پائیں گے
وہ چاہے صاحبِ تسبیح ہوں کہ زناری [7]

---

1. صلیب کے نیچے بیٹھے ہوئے سپاہی حضرت عیسیٰ کے کپڑوں کے لیے قرعہ اندازی کر رہے تھے۔
2. شہادت کے وقت اندھیرا چھا گیا اور آفتاب کا رنگ کالا ہو گیا۔
3. حضرت عیسیٰ کے مصلوب ہو جانے کے بعد دوبارہ زندہ ہونے کی طرف اشارہ ہے، علامت کے طور پر یہ بھی سمجھنا صحیح ہے کہ سچائی قتل نہیں کی جا سکتی وہ پھر زندہ ہو جاتی ہے۔
4. اندھوں کی آنکھوں کو بینائی ملنے اور کوڑھیوں کے تندرست ہو جانے کی طرف اشارہ ہے جو اعجاز مسیحائی تھا۔
5. مصائب کا خاتمہ اور مسرت کی ابتدا۔
6. حضرت عیسیٰ نے سود خور تاجروں کو کلیسا سے باہر نکال دیا تھا۔
7. صاحبِ تسبیح = مسلمان، زناری = ہندو

وہ ہاتھ بڑھ کے سنبھالیں گے کائنات کی باگ
نہا چکے ہیں مشقت کے جو پسینے سے
جراحتِ دل و جاں مندمل کریں گے وہ ہاتھ
نشاں ہیں جن کی ہتھیلی پہ سخت کوشی کے

وہ ہاتھ جن کو پنہائی گئی ہیں زنجیریں
وہ ہاتھ چھید چکی ہے جنھیں صلیب کی کیل
وہ ہاتھ شعلۂ حق بن کے ہو رہے ہیں بلند
اندھیری رات میں روشن ہے صبحِ نو کی دلیل

وہی مسیح و محمدؐ وہی کلیم و خلیل
وہی حسین و دل آرا، وہی جلیل و جمیل

# رہبر کی موت

اپنا رہبر جنگ کے میداں میں کام آیا ہے آج
وہ وطن کی آبرو، اہلِ وطن کا افتخار
اشتراکیت کی جمہوری روایت کا نقیب
محفلِ انسان میں انسانیت کا تاجدار
ایک مردہ لاش، یہ توہین کر سکتا ہے کون
پاؤں پھیلائے ہوئے گلشن میں سوتی ہے بہار
اپنی سرد آہوں کی چادر ہی اڑھائیں گے اسے
کیا نچھاور ہم کریں گے اس پہ صرف اشکوں کے ہار
کیا زمانے سے کہیں گے جا کے بس اتنی سی بات
مر گیا ہے وہ تو اس کے غم میں ہیں ہم سوگوار
یوں تو رک سکتا نہیں اب دل کے طوفانوں کا گیت
کُند ہو سکتی نہیں یوں عشق کے خنجر کی دھار
اب ہماری آنکھ میں ہے اس کی بند آنکھوں کا نور
اب ہمارے جسم میں ہے اس کی روحِ بیقرار
اس کا پرچم لے کے میداں میں نکلنا ہے ہمیں
فرشِ گل سے دور انگاروں پہ چلنا ہے ہمیں

8/جون 1964

# صندل وگلاب کی راکھ

مرے وطن کی زمیں کے اداس آنچل میں
نہ آج رنگ نہ خوشبو، بھری ہوئی ہے دھول
خبر نہیں کہ ہے کس دل جلے کی لاش جسے
جھکا کے سر کو پہاڑوں نے بھی کیا ہے قبول
سنا ہے جس کی چتا سے یہ خاک آئی ہے
وہ فصل گل کا پیمبر تھا عہد نو کا رسول
اسے خبر تھی خزاں کس چمن میں سوتی ہے
وہ جانتا تھا کہ کیا ہے بہار کا معمول
سکھایا کشمکش جنگ و امن میں اس نے
جراحتوں کو چمن بندئ جہاں کا اصول
انھیں دلوں کی محبت میں کیاریاں بوئیں
اگے ہوئے تھے جہاں صرف نفرتوں کے ببول
عطا ہوئی تھی اسے روز وشب کی بیتابی
وہ اس کی جرأت رندانہ اس کا شوق فضول
جو آج موت کے دامن میں اک ستارہ ہے
وہ زندگی کے گریباں میں تھا گلاب کا پھول

وفا کا ذکر ہی کیا اس کی بے وفائی نے
خراج عشق و محبت کیا ہے ہم سے وصول
وہ برہمن کہ جسے مسجدوں نے پیار کیا
وہ بت شکن کہ جو بزم بتاں میں تھا مقبول
وہ جسم آج ہے جو صندل و گلاب کی راکھ
وطن کی خاک کے سجدوں میں اب بھی ہے مشغول
اتر رہا ہے کچھ اس طرح اپنی دھرتی پر
کہ آسمان سے جس طرح رحمتوں کا نزول
اب اس کے فیض سے بنجر بھی لہلہائیں گے
کھلیں گے خار بیاباں سے بھی بہار کے پھول

8/جون 1964

# فاصلے

ہزار فاصلے حائل ہیں فاصلوں کے سوا
وہاں ہو تم کہ جہاں دل دھڑک نہیں سکتا
دلوں میں درد کے شعلے چمک نہیں سکتے
وہاں ہو تم کہ جہاں آرزو کا نام نہیں
وفا کی رسم جنوں کا شعور عام نہیں
نظر کے چاند ستارے بجھائے جاتے ہیں
پلک سے خون کے آنسو ٹپک نہیں سکتے
حسین یادوں کے دامن جلائے جاتے ہیں
وہاں ہو تم کہ جہاں دل دھڑک نہیں سکتے

وہاں ہے عشق پہ پابندی نظر اب تک
خود اپنی آگ سے ہے حسن بے خبر اب تک
خیال یار کی راتیں ہیں مختصر اب تک

یہاں بس ایک تمنا اک آرزو یہ ہے
کہ تم بھی میری طرح سوگوار ہو جاؤ
کسی کی یاد میں آنکھوں کی نیند اڑ جائے
وہ دن بھی آئے کہ تم بیقرار ہو جاؤ

دسمبر 1964

# متفرق اشعار

پرتو سے جس کے عالمِ امکاں بہار ہے
وہ نو بہار ناز ابھی رہ گزر میں ہے

☆☆☆

سو ملیں زندگی سے سوغاتیں
ہم کو آوارگی ہی راس آئی

☆☆☆

تو وہ بہار جو اپنے چمن میں آوارہ
میں وہ چمن جو بہاراں کے انتظار میں ہے

☆☆☆

کمی کمی سی تھی کچھ رنگ و بوئے گلشن میں
لبِ بہار سے نکلی ہوئی دعا تم ہو

☆☆☆

شب کے سناٹے میں یہ کس کا لہو گاتا ہے
سرحدِ درد سے یہ کس کی صدا آتی ہے

☆☆☆

بہت برباد ہیں، لیکن صدائے انقلاب آئے
وہیں سے وہ پکار اٹھے گا جو ذرہ جہاں ہوگا

☆☆☆

اسی لیے تو ہے زنداں کو جستجو میری
کہ مفلسی کو سکھائی ہے سرکشی میں نے

☆☆☆

یہ میکدہ ہے، یہاں ہیں گناہ جام بدست
وہ مدرسہ ہے وہ مسجد وہاں ملے گا ثواب

☆☆☆

دل ونظر کو ابھی تک وہ دے رہے ہیں فریب
تصورات کہن کے قدیم بت خانے

☆☆☆

انقلاب آئے گا رفتار سے مایوس نہ ہو
بہت آہستہ نہیں ہے جو بہت تیز نہیں

☆☆☆

پیاس جہاں کی ایک بیاباں، تیری سخاوت شبنم ہے
پی کے اٹھا جو بزم میں تیری، اور بھی تشنہ کام اٹھا

☆☆☆

یہ تیرا گلستاں، تیرا چمن، کب میری نوا کے قابل ہے
نغمہ مرا اپنے دامن میں آپ اپنا گلستاں لاتا ہے

☆☆☆

# پیراہنِ شرر

## نئی نظمیں

1965

ان کا جو فرض ہے وہ اہلِ سیاست جانیں
میرا پیغام محبت ہے جہاں تک پہنچے

جگر مرادآبادی

میں اپنے دوست مشہور مصوّر حسین کا شکر گزار ہوں
جنھوں نے گرد پوش کا ڈیزائن بنایا ہے

# پیراہنِ شبنم

علی سردار جعفری کو میں اندازاً 27 یا 28 سال سے جانتا ہوں۔ یہ اس زمانے میں لکھنؤ یونیورسٹی کے طالب علم تھے اور انجمن ترقی پسند مصنفین کی لکھنؤ کی شاخ کے سرگرم رکن۔ میرا حافظہ اگر غلطی نہیں کرتا تو وہ شاید اس ادبی انجمن کے سکریٹری تھے۔ انجمن کے جلسے مرحومہ رشید جہاں کے مکان پر ہوتے تھے اور گو اس زمانے میں بھی یہ شعر کہتے تھے لیکن اس وقت یہ سمجھا جاتا تھا کہ یہ ایک پُر جوش، باحوصلہ اور باعمل اشتراکیت پر ایمان لانے والے نوجوان کارکن زیادہ ہیں اور شاعر کم۔ اراکین انجمن ترقی پسند مصنفین کے امیر کارواں اس وقت بہ ظاہر تو جوش ملیح آبادی تھے لیکن ان کے محبوب ترین شاعر دراصل مجاز مرحوم تھے اور اس کے بعد جذبی اور جاں نثار اختر کا نام آتا تھا۔ کسے خبر تھی کہ چند ہی سال بعد سردار ان سب کو پیچھے چھوڑ کر آگے نکل جائے گا اور دنیائے شعر میں اپنا مخصوص اور بلند مقام خالی اپنے وطن ہی میں حاصل نہ کرے گا بلکہ اس کی شاعرانہ عظمت اپنے ملک کے باہر بھی تسلیم کی جائے گی۔

سردار مجھ سے عمر میں 12 یا 13 سال چھوٹے ہیں۔ اگر زندگی میں جمود نہ ہو تو یہ عرصہ ادبی قدروں کو بدل دینے کے لیے بہت کافی ہے۔ موجودہ دور تو اتنا برق رفتار ہو چکا ہے کہ صبح کا مستقبل شام آتے آتے ماضی بن چکا ہوتا ہے۔ ایسی صورت میں سردار کی شاعری کا میرے دور کی شاعری سے موضوعاتِ سخن، اندازِ بیان، علامات اور تخلیقِ حسن کے نظریات، چاروں اعتبار سے مختلف ہونا ناگزیر تھا۔ ایک سردار کیا آج کے دور کے سب شاعر اپنے اپنے انداز میں نئے تخلیقی تجربے کر رہے ہیں اور جن لوگوں کا یہ خیال ہے کہ یہ شاعری کچی ہے اور انحطاط ادب کی دلیل ہے وہ بڑی حد تک اپنی پرانی مٹتی ہوئی قدروں کو سینے سے لگائے ہوئے اور بدلتی ہوئی زندگی کی زندہ قدریں قبول کرنے کو راضی نہیں۔

موجودہ دور کے شعراء کی طرف جب بھی میرا خیال جاتا ہے تو میرے ذہن میں پہلا نام

سرداری کا آتا ہے۔ ظاہر ہے کہ یہ میری پسند کی بات ہے۔ شاید اس پسند کی وجہ یہ ہے کہ سردار کی اور میری محض ادبی قدریں ہی نہیں بلکہ انسانی قدریں بھی بہت کچھ مشترک ہیں اور گو آج وہ دھارے پر ہے اور میں کنارے سے لگ چکا ہوں لیکن پھر بھی ہماری نظریں ایک ہی افق کی طرف اٹھتی ہیں۔ ہم نے ایک ہی خواب دیکھا ہے اور اپنی بساط بھر اسی طرف اپنی کشتیاں بڑھا کر اوروں کو بھی اس خواب کو حقیقت بنانے کی دعوت دی ہے۔

آج زندگی کا، ہر فن کار سے خالی یہی تقاضا نہیں ہے کہ وہ زندگی کی ناانصافیوں اور غلط نظریوں کی وجہ سے جو انسانی مشکلیں اور محرومیاں ہیں ان کو سمجھے بلکہ ان کے خلاف آواز بھی اٹھائے اور جہد بھی کرے۔ صحیح مفہوم میں آج کے شاعر کو مجاہد بھی ہونا ضروری ہے۔ لیکن شاعر کا جہد میدانِ جنگ میں نہیں ہوتا۔ ہوسکتا ہے کہ ایک شاعر تلوار بھی اٹھالے لیکن یہ فعل اس کا بحیثیت ایک شہری کے ہوگا، بہ حیثیت ایک فنکار کے نہیں کیوں کہ اصل لڑائی تو دلوں اور ذہنوں میں لڑی جارہی ہے۔ اور تلوار اس نزاع میں کام نہیں دیتی۔ سردار کی زندگی میں ایک مقام ایسا آیا تھا جب مجھے اندیشہ ہونے لگا تھا کہ کہیں سردار کے دل میں جو شہری ہے وہ شاعر کے ہاتھ سے قلم چھین کر تلوار نہ اٹھالے لیکن شکر ہے کہ یہ نوبت نہیں آئی اور سردار نے قلم ہی کو تلوار بنالیا۔ سردار کے ارتقائے فن میں یہ ایک اہم منزل تھی اور اس مقام سے گزرنے کے بعد اس کا شعور جو پہلے ہی سے بیدار تھا اور زیادہ پختہ ہوا اور اس کے لہجے میں تندی کی جگہ وہ نرمی آگئی جس نے اسے ساری نوع انسان کے قریب کردیا۔ 'پیراہنِ شرر' تک پہنچتے پہنچتے یہ قلم کی تلوار اب اس کے ہاتھ میں شاخِ گل بن چکی ہے۔ اور وہ نظریاتی غبار کی سطح سے ابھر کر کرۂ نور پر پہنچ گیا ہے۔ اب اس کے پیام میں ایک پیمبرانہ حلاوت ہے اور زخم انساں کے لیے مرہم۔ آج اس کی منزل کا تعین اس مجموعے کا آخری شعر کرتا ہے ؎

کم ظرفیِ گفتار ہے دشنام طرازی تہذیب تو شائستگیِ دیدۂ تر ہے

حرف اول میں وہ اپنا نظریہ ان الفاظ میں پیش کرتا ہے۔

'یہ خیال صحیح نہیں ہے کہ سماجی نظام کی تبدیلی کے ساتھ ساتھ انسانی فطرت خود بخود بدل جاتی ہے۔ بدی ختم ہوجاتی ہے اور نیکی کا ظہور ہوتا ہے۔ اس حقیقت کے اعتراف سے مفر نہیں کہ سماجی نظام کی تبدیلی جو ضروری بھی ہے اور ناگزیر بھی ناکافی ہے......... معاشی اور سیاسی نظاموں کی ناانصافیوں کو پہچاننا اور ان کے خاتمے کے لیے لڑنا برحق ہے لیکن ساتھ ہی ساتھ صدیوں کی نفرت، ہوس، بدی، خودغرضی، غلط احساس برتری اور اسی قسم کے دوسرے تاریک جالوں سے دل و دماغ کی صفائی بھی برحق ہے۔ اس کے

بغیر نہ تو دنیا سے جنگوں کا خاتمہ ہوسکتا ہے اور نہ ناانصافیاں ختم ہوسکتی ہیں۔'

جب سے انسان نے متمدّن زندگی میں قدم رکھا ہے وہ امن کا جویا رہا ہے لیکن ابھی تک اس کی قسمت میں ایک کے بعد دوسری جنگ آتی چلی گئی ہے۔ انسان کا بڑھتا ہوا علم ہر آنے والی جنگ کو جنگ گزشتہ سے اور زیادہ ہولناک تباہ کن بناتا چلا جارہا ہے اور آج یہ نوبت آگئی ہے کہ نوعِ انساں کے مرنے جینے ہی کا سوال سامنے آگیا ہے۔ ایسا معلوم ہوتا ہے جیسے انسان کی عقل (جو اس کی ذاتی غرض اور حرص کا دوسرا نام ہوکر رہ گئی ہے) اُس کے دل (جو جذبۂ اخوت کا دوسرا نام ہے) کو پیچھے چھوڑ کر اتنا آگے بڑھ گئی ہے کہ اب وہ اس کی آواز بھی نہیں سن سکتی۔ آج دنیا کو تباہی سے بچانا دراصل صرف اس سوال پر منحصر ہے۔

نمو کی طاقت ابھی دلوں میں ہے یا اسے زیست کھو چکی ہے
ضمیرِ انساں میں آنچ باقی ہے یا یہ لَو سرد ہو چکی ہے

آج ہر فنکار کا پہلا فرض یہ ہے کہ وہ عقل اور دل کا یہ فاصلہ اور بڑھنے نہ دے بلکہ انہیں قریب لانے کی کوشش کرے اور ضمیر انساں کو جھنجھوڑ جھنجھوڑ کر اس انسانی اخوت کی لو کو بجھنے نہ دے بلکہ ہوا دے دے کر اسے شعلۂ جوالہ بنا دے۔

اگر اس نظر سے اردو شعری ادب کا جائزہ لیا جائے تو سردار کا مقام سب سے نمایاں نظر آتا ہے۔ 'پیراہنِ شرر' کی زیادہ تر نظمیں نوعِ انساں کے لیے مشعلِ راہ ہیں۔ سردار کا بیدار شعور اور ساتھ ہی ساتھ الفاظ کا فنکارانہ حسنِ انتخاب ان نظموں کو ادبی شہکار بنا دیتا ہے اور اس کے احساس کی صداقت اور خلوص اس کے لہجے کو وہ دردمندی بھی عطا کر دیتا ہے جو بعض نظموں کو انسانی دستاویز کا درجہ دے دیتا ہے۔ ان نظموں میں سردار ایک معلّم اور فلسفی بن کر نہیں بلکہ ایک دوست بن کر سامنے آتا ہے اور چونکہ وہ غم مشترک میں اپنا ساتھی ہے لہٰذا اس کی آواز میں اک بے پناہ کشش اور اس کے پیام میں ایک پایندہ اثر پیدا ہو جاتا ہے۔ ظریف مرحوم نے شاعر کے بارے میں کہا تھا۔

تو معالج نفسِ امّارہ کی بیماری کا ہے  تو ذریعہ قوم اور ملّت کی بیداری کا ہے

میں نے بھی اپنے مجموعۂ کلام 'میری حدیث عمر گریزاں' میں ایک عظیم فنکار کی تعریف یوں کی تھی۔

'میں تو اس فنکار کو عظیم فنکار سمجھتا ہوں جو نوعِ انساں کی اکائی بن کر انسانی درد و غم سہے اور اس غم کا مکمل احساس ہونے کے باوجود اس کی ذات میں اتنی لوچ اور اس کے فن میں اتنی سکت ہو کہ وہ اس

زہر کو امرت بنا کر پی جائے، اپنے دل و دماغ کی معصومیت، تازگی اور حسن کو برقرار رکھے اور دانائی کی چوٹیوں سے کُل نوعِ انسان کو جس میں گمراہ انسان بھی شامل ہوں، ایک طفلِ معصوم کے میٹھے اور سریلے بولوں میں پکارے اور منزلِ انسانیت کی طرف قدم بڑھانے کا پیغام دے۔'

'پیراہنِ شرر' کی ان نظموں میں سردار نے اگر یہ مقام حاصل نہیں کرلیا ہے تو اس مقام سے بہت دور بھی نہیں ہے۔

زندگی اور ادب دونوں ایک سلسلۂ لامتناہی ہیں۔ دونوں افق در افق آگے بڑھتے ہی چلے جاتے ہیں اور جب تک دنیا قائم ہے یہ سلسلہ ختم ہونے والا نہیں ہے۔ میرا خیال تو ایسا ہے کہ وہ نظامِ حیات کبھی بھی مرتب نہ ہو سکے گا جس سے خوب تر کا جلوہ کچھ نگاہوں میں نہ ہو۔ یہ خوب تر کی خواہش ہی ارتقائے زندگی کا راز ہے۔ عظیم فن کار وہی ہے جس کا دیدۂ بینا اس خوب تر کو دیکھ سکے اور کاروانِ انسان کو اس خوب تر منزل کی طرف گامزن ہونے پر آمادہ کرے۔ ظاہر ہے کہ ایسا کرنے میں دشواریوں کا سامنا کرنا پڑتا ہے اور سختیاں اٹھانی پڑتی ہیں۔ لیکن ایک سچا شاعر ان سے ڈر کر اپنی آواز اٹھانے سے گریز نہیں کرتا۔ غالب کے اس شعر میں ؎

لکھتے رہے جنوں کی حکایاتِ خوں چکاں ہر چند اس میں ہاتھ ہمارے قلم ہوئے

اور چکبست کے اس شعر میں ؎

نظر کو بند کریں یا مجھے اسیر کریں مرے خیال کو بیڑی پنہا نہیں سکتے

اور فیض کے اس قطعے میں ؎

متاعِ لوح و قلم چھن گئی تو کیا غم ہے کہ خونِ دل میں ڈبو لی ہیں انگلیاں میں نے
زباں پہ مہر لگی ہے تو کیا کہ رکھ دی ہے ہر ایک حلقۂ زنجیر میں زباں میں نے

اور سردار کے پیراہنِ شرر کے ان اشعار میں ؎

کھڑا ہے کون یہ 'پیراہنِ شرر' پہنے
بدن ہے چور تو ماتھے سے خون جاری ہے
کوئی دوانہ ہے لیتا ہے سچ کا نام اب تک
فریب و مکر کو کرتا نہیں سلام اب تک

باوجود 'اندازِ بیان' اور علامات کے نمایاں فرق کے ایک حیرت انگیز خاندانی مشابہت ہے۔ ایک کرب جو دور بہ دور سینہ بہ سینہ منتقل ہوتا چلا آ رہا ہے۔ لیکن سردار کی آواز یہیں پر ختم نہیں ہو جاتی بلکہ

اس کی نگاہ بینا ایک درخشاں مستقبل کی بشارت بھی دیتی ہے۔ اس مجموعے کی آخری نظم 'امانتِ غم' میں سردار کہتا ہے ۔

امانت غم انساں امانت غمِ دل
یہ اک چراغ ہے قندیل مہر و مہ کی طرح
جو یہ نہ ہو تو زمانے میں روشنی کیوں ہو

- - - - - - - - - - - - -

اٹھو کہ جشنِ دل و جاں منایا جائے گا
ہر اک چمن میں یہی گل کھلایا جائے گا
یہ گل جو دردِ محبت امانت غم ہے
یہ گل جو شوخ بھی خوں گشتہ بھی ملول بھی ہے
خدائے عشق بھی ہے امن کا رسول بھی ہے

انسان کے دل کی آرزو نا موافق ماحول سے لڑنے کے لیے ایک شاعر کا پیام بن کر ہمیشہ ہونٹوں تک آتی رہی ہے۔ غالب کے کاغذی پیرہن سے لے کر سردار کے پیراہن شرر تک یہ آرزو نہ جانے کتنے لباس پہن کر گھڑی گھڑی سامنے آئی ہے لیکن جو چیز 'پیراہن شرر' کو طرۂ امتیاز بخشتی ہے وہ یہ کہ اس پیراہن شرر کے نیچے ایک پیراہن شبنم بھی ہے۔ ممکن ہے کہ اس سلگتی ہوئی دنیا کو یہ پیراہن شبنم ابھی سالوں میسّر نہ ہو لیکن ایک سچے فن کار کا حوصلہ اس خیال سے پست نہیں ہوتا۔ وہ تو اس عقیدے پر عمل کرتا ہے۔

بلا سے ہم نے نہ دیکھا تو اور دیکھیں گے فروغِ گلشن و صوتِ ہزار کا موسم

آنند نرائن ملاؔ 25رفروری 1966

# حرفِ اوّل

ایک دیوانہ کھڑا ہوا ہے، چاک دامن، چاک گریباں۔ اور اس پر چاروں طرف سے پتھراؤ ہو رہا ہے۔ یہ بارش اتنی شدید ہے کہ پتھر سے پتھر ٹکرا رہا ہے اور جسم سے خون کی دھاریں نکل رہی ہیں اور پتھروں سے چنگاریاں اُڑ رہی ہیں اور اس طرح برس رہی ہیں کہ دیوانے کے برہنہ جسم کا لباس بن گئی ہیں۔ اب چاکِ دامن اور چاکِ گریبان کی بھی گنجائش نہیں رہ گئی ہے مگر دیوانہ جو خود صداقت ہے اور صداقت کی آواز سر سے پاؤں تک ایک حسین مگر خون آلود شاعر بن گیا ہے۔

بہ جرمِ عشق تو ام می کشند غوغائیست
تو نیز بر سرِ بام آ کہ خوش تماشائیست

یہ قتل صدیوں سے جاری ہے اور نہ جانے کب تک جاری رہے گا۔ یہ رُکتا ہے اور پھر شروع ہو جاتا ہے اور انسانیت ایک منزل اور آگے بڑھ جاتی ہے۔ کبھی کبھی یہ محسوس ہوتا ہے کہ صداقت، جیسے گلاب کا پودا ہے، جس کی شاخیں قلم ہو جانے کے بعد نئے پھولوں کا پیراہن پہن لیتی ہیں۔ یہ بھی پیراہنِ شرر ہے۔ یا صداقت ایک دانہ ہے جو زمین میں دفن ہونے کے بعد پھر اُگتا ہے اور ہزار دانوں میں تبدیل ہو جاتا ہے۔ یہ مسیح بھی ہے اور حسین بھی اور انسان کی لافانی جدوجہد بھی۔ یہ کذب کی قاتلانہ حرکتوں کا جواز نہیں ہے بلکہ صداقت کی مظلومیت کا کرشمہ ہے جو ظلم سے زیادہ طاقتور ہے۔ اس کی زبان کبھی بند نہیں کی جا سکتی، اس کی خوشبو کبھی قید نہیں کی جا سکتی۔

دستِ صیّاد بھی عاجز ہے، کفِ گل چیں بھی
بوئے گل ٹھہری نہ بلبل کی زباں ٹھہری ہے

یہ خیال صحیح نہیں ہے کہ سماجی نظام کی تبدیلی کے ساتھ ساتھ انسانی فطرت خود بخود بدل جاتی

ہے، بدی ختم ہو جاتی ہے اور نیکی کا ظہور ہوتا ہے۔ اس حقیقت سے انحراف سے مفر نہیں کہ سماجی نظام کی تبدیلی، جو ضروری بھی ہے اور ناگزیر بھی، ناکافی ہے۔ ذہنی اور روحانی تبدیلی بھی ایک جہاد ہے اور چونکہ یہ جہادِ نفس ہے اس لیے اور بھی مشکل ہے۔ کبیر داس کے الفاظ میں

''جسم و جان کے رن میں گھمسان کی لڑائی ہو رہی ہے۔ ہوس، غصہ، غرور اور لالچ مقابلے پر کھڑے ہوئے ہیں۔ صبر، قناعت اور صداقت کی بادشاہت میں شمشیر کا نام بلند ہو رہا ہے۔۔

'صداقت کے متلاشی کی جدّ و جہد بہت دشوار ہے۔ سورما کی لڑائی دو چار گھنٹے چلتی ہے ستی کی جدّ و جہد ایک پل میں ختم ہو جاتی ہے لیکن صداقت کا متلاشی دن رات جنگ کرتا ہے۔ اس کی لڑائی زندگی کے آخری لمحے تک جاری رہتی ہے۔''

بہتر سماجی نظام اس جہادِ نفس کے لیے سازگار فضا پیدا کرتا ہے۔ لیکن اس سازگار فضا میں مسلسل جہاد ضروری ہے۔ یہ اجتماعی عمل بھی ہے اور انفرادی بھی۔

دوسروں کے نفس سے پہلے اپنے نفس سے جہاد ضروری ہے۔ معاشی اور سیاسی نظاموں کی ناانصافیوں کو پہچاننا اور ان کے خاتمے کے لیے لڑنا برحق ہے۔ لیکن ساتھ ہی ساتھ صدیوں کی نفرت، ہوس، بدی، خود غرضی، غلط احساسِ برتری اور اس قسم کے دوسرے تاریک جالوں سے دل و دماغ کی صفائی بھی برحق ہے۔ اس کے بغیر نہ تو دنیا سے جنگوں کا خاتمہ ہو سکتا ہے اور نہ ناانصافیاں ختم ہو سکتی ہیں۔

تلوار پرانے ظالموں کو صفحۂ ہستی سے نیست و نابود تو ضرور کر سکتی ہے لیکن نئے ظالموں کو پیدا کرنے والی کوکھ کو ضبطِ تولید نہیں سکھا سکتی پھر کتنی بار تاریخ کی نہ بند ہونے والی آنکھوں نے یہ تماشا دیکھا ہے کہ مظلوم ظالموں میں تبدیل ہو گئے ہیں۔ اس بھیانک قلبِ ماہیت کو بھی تو روکنا ضروری ہے۔

خارجی نظام کی تبدیلی کی جدّ و جہد سیاسی جماعتوں کا اجتماعی عمل ہے۔ لیکن انسانی روح کے داخلی نظام کی ترتیب و تربیت کی جدو جہد شاعروں اور دانشوروں کے حصے میں آتی ہے۔ اس میں شعر و فن کی تمام اصناف کام آتی ہیں۔ عشقیہ شاعری روح میں لطافت پیدا کرتی ہے اور لذتِ فراق کو بھی لذتِ وصال بنا کر انسانوں کو سخت سے سخت حالات میں جینا سکھاتی ہے اور سیاسی اور انقلابی شاعری روح کو صلابت عطا کرتی ہے۔ ضرورت دونوں کی ہے۔ اخلاقی شاعری کا بھی ایک مقام ہے۔ لیکن شاعر کا منصب واعظ کے منصب سے بلند ہے اور اندازِ بیان مختلف۔ یہی وجہ ہے کہ ممبر پر واعظ جلوہ گر ہوتا ہے

لیکن دلوں میں شاعر ابھرتا ہے۔

میری یہ نئی نظمیں جو پیراہنِ شرر پہنے کھڑی ہیں، سیاسی دستاویزیں نہیں ہیں۔ واقعات ان کی تخلیق میں کارفرما ضرور رہے ہیں۔ لیکن یہ واقعات کا بیان نہیں ہیں بلکہ ان سے پیدا ہونے والے روحانی کرب کا اظہار ہیں۔ انھیں احتجاج کہنا بھی غلط ہے۔ شاید دل کی چیخ اور روح کی پکار نے ان نظموں کی شکل اختیار کر لی ہے۔

کبھی کبھی یہ محسوس ہوتا ہے جیسے دنیا کے سر پر خوف اور نفرت دو بھوت منڈلا رہے ہیں (اور یہی انسان کے سب سے بڑے دشمن ہیں) جن سے گھبرا کر انسانی عقل ماؤف ہو جاتی ہے اور دل کی شرافت کمتر درجے کے جذبات میں تبدیل ہو جاتی ہے اور بھوتوں سے لڑنے کے بجائے انسان انسانوں کا خون کرنے لگتے ہیں اور خون جتنا زیادہ بہتا ہے خوف اور نفرت میں اتنا ہی اضافہ ہوتا جاتا ہے اور شاعر کی آواز گونگی ہو جاتی ہے اور ساز کے تار ٹوٹ جاتے ہیں۔

گیت کے دل میں خنجر ہے، الفاظ ہیں سر بریدہ

اپنے قبضے میں اک بے بسی کے سوا کچھ نہیں

نالے بیکار، فریاد بے سود ہے

آؤ مل کر محبت کو آواز دیں

نیکیوں کو پکاریں

یہ آواز اور یہ پکار خوف اور نفرت کے گہرے اندھیرے میں کتنی ہی نحیف و نزار، کتنی ہی بیکار کیوں نہ معلوم ہو لیکن اس میں امید کی ایک ننھی سی کرن دکھائی دیتی ہے جو گھنے سے گھنے اندھیرے کے دل میں اتر سکتی ہے اور خوف زدہ روح کو ایک لمحے کے لیے بے خوف بنا سکتی ہے۔

اس اندھیرے میں کہ ملتی نہیں انسان کو راہ

صرف تابندہ ہے شاعر کی نوائے ساقی

دوسری جنگ عظیم کے خاتمے کے بعد سے، جنگ نہ کرنے کے عہد اور انجمن اقوام متحدہ کی تشکیل کے باوجود، دنیا تیسری جنگ عظیم کے خطرے سے دوچار ہے اور اگر یہ جنگ ہو گئی تو آخری جنگ ہو گی۔ لیکن اتفاق سے یہ خوف جو جنگوں کو جنم دیتا ہے اسی خوف نے تیسری عالم گیر جنگ روک بھی رکھا ہے۔ خوف ناک ایٹمی اور ریڈیائی ہتھیاروں سے مسلح طاقتوں کے درمیان ایک باہمی توازن قائم ہو گیا ہے۔ لیکن جب کبھی دنیا کے کسی گوشے میں کوئی چھوٹی سی جنگ شروع ہوتی ہے تو اس توازن کے بگڑ جانے

کا اندیشہ پیدا ہو جاتا ہے اور تیسری عالم گیر جنگ کا بھیانک چہرہ دکھائی دینے لگتا ہے۔

گزشتہ چند سالوں کے اندر تیسری جنگ عظیم کا محور یورپ سے ایشیا میں منتقل ہو گیا ہے کیوں کہ ایشیا اور افریقہ کے آزاد ہونے والے ملک، جو کل تک غلام تھے دنیا کی بڑی طاقتوں کے توازن میں فرق پیدا کرنے کی صلاحیت رکھتے ہیں۔ اب ویت نام سے کشمیر تک ایک نیم دائرہ ہے جو ہمالیہ کی چوٹیوں سے گزرتا ہوا جہلم کی وادیوں تک پہنچ جاتا ہے اور اس میں ایشائی اقوام کی آرزوؤں اور امیدوں کی بڑی طاقتوں کے مفادات اور سیاسی مصلحتوں کی بجلیاں چمک رہی ہیں۔

اس نیم دائرے کے بطن میں مستقبل کی ساری تعبیریں ہیں۔ وہ بہت بھیانک بھی ہو سکتی ہیں اور اگر انسانی اقدار کی جیت ہو تو ایک خوبصورت بشارت بھی بن سکتی ہیں لیکن یہ بشارت اس دن پوری ہو گی جب خوف کے بجائے محبت جنگوں کے روکنے کا باعث بنے گی۔ جب نفرت کے بجائے ایک عالمگیر انسانی برادری کا تصور انسان کے درمیان نئے رشتے قائم کرے گا۔

اس لیے آج کی جنگ آلود فضا میں ان قدروں کا نام بار بار لینا ضروری ہے جو ساری انسانیت کا صدیوں کا ورثہ ہیں اور یہ خوشی کی بات ہے کہ ہندستان نے اپنی بائیس دن کی دفاعی جنگ میں بھی جو ہمیں مجبوراً لڑنی پڑی ان قدروں کو فراموش نہیں کیا۔ ہم جو گوتم بدھ، اشوک، کبیر، گرونانک، میر، غالب، ٹیگور، گاندھی اور نہرو کی شرافت کے وارث ہیں آج بھی ان الفاظ کو فخر کے ساتھ دہرا سکتے ہیں جو ہمارے راشٹر پتی ڈاکٹر رادھا کرشنن نے 25 ستمبر 65ء کی رات ہندستانی قوم کو مخاطب کرتے ہوئے اپنی ریڈیو تقریر میں ارشاد فرمائے تھے:۔

"جنگ جو کبھی کبھی دفاعی مقاصد کے لیے ضروری ہو جاتی ہے اس کے بعد بھی ایک بدی ہے اور انسانیت کے لیے خطرہ۔ اس سے کسی مسلک کو کوئی فائدہ نہیں پہنچتا کیونکہ وہ اپنے پیچھے صرف تلخی خوف اور شبہات چھوڑ جاتی ہے اور سماجی اور معاشی ترقی کی تمام کوششوں کو نقصان پہنچاتی ہے.....

'ہم ایک بین الاقوامی برادری کے رکن ہیں اور یقین رکھتے ہیں کہ انسانیت تمام قوموں سے بالاتر ہے اس لیے ہمیں خلوص نیت کے ساتھ تمام جھگڑوں کے پرامن فیصلے کی کوشش کرنی چاہئے۔ ہر سچے انسان کے لیے یہ ضروری ہے کہ وہ جس حد تک ممکن ہو اپنی انسانیت کو برقرار رکھے۔

'جرمن فلسفی شاپن ہار کو یہ شکایت تھی کہ اکثر انسان بندر سے ملتے

جلتے ہیں اس نے افسوس کے ساتھ کہا کہ اس سے بھی بری بات یہ ہے کہ دور
سے ان پر انسان ہونے کا شبہ ہوتا ہے۔ زیادہ تر جنگیں غلط فہمی، جھنجھلاہٹ،
ناکامی، محرومی اور قومی جذبات کا نتیجہ ہوتی ہیں۔ اگر ہم انسانوں کی طرح رہنا
چاہتے ہیں تو ہمیں ان تمام جذباتی کیفیات پر قابو حاصل کرنا پڑے گا۔''

(ٹائمز آف انڈیا بمبئی کی رپورٹ سے ترجمہ 26/ستمبر 1965)

ڈاکٹر رادھا کرشنن کے الفاظ میں ہندستان کی صدیوں کا دل دھڑک رہا ہے۔ یہ ہم سب کے دل کی آواز ہے۔ اپنی سرحد، اپنی آزادی، اپنی غیر مذہبی جمہوریت کی حفاظت میں بحالت مجبوری ہتھیار اٹھانے کے باوجود جنگ کی خباثت کو کبھی برکت کا نام نہیں دیا گیا۔ یہ چونکہ ہماری مملکت کے صدر اور ہندستان کے سب سے زیادہ ذمہ دار شہری کے الفاظ ہیں اس لیے ان میں حکومت کی جنگ اور امن کی پالیسی تلاش کی جاسکتی ہے اور ہم یہ کہہ سکتے ہیں کہ یہ جنگ نفرت کے ساتھ نہیں بلکہ انتہائی دردمندی کے ساتھ لڑی گئی ہے۔ جنگ کی ناگزیر غارت گری اور تباہ کاری کے باوجود دلوں میں اتحاد، محبت اور امن کا جذبہ انگڑائیاں لیتا رہا ہے اور آج بھی ہر دل میں یہی خواہش ہے کہ ہماری سلگتی ہوئی سرحدیں پُر امن ہو جائیں۔ وزیراعظم شاستری کی ہر تقریر، ہر بیان سے اس نصب العین پر ہمارے بنیادی عقیدے کی مہر ثبت ہوتی ہے۔

ہماری قوم کے دل کی صحیح حالت کا اندازہ عصمت چغتائی کی ایک مختصر سی تقریر سے کیا جا سکتا ہے۔ عصمت نے کہا کہ:

''اگر میرا بھائی، میری بیٹی کے سینے میں خنجر بھونکنے کی کوشش کرے گا تو
میں اپنے بھائی کو قتل کر دوں گی اور پھر اس کی لاش پر بیٹھ کر روؤں گی۔''

کچھ ایسا ہی جذبہ عظیم امریکی شاعر والٹ وھٹ مین کی ایک نظم میں ہے۔ وہ کہتا ہے :

'مصالحت ایک لفظ ہے، آسمان کی طرح خوبصورت
'خوبصورت اس لیے کہ جنگ اور اس کی تباہ کاریاں ہمیشہ ہمیشہ کے لیے ختم ہو جائیں
'خوبصورت اس لیے کہ موت اور رات جو دو بہنیں ہیں ان کے
ہاتھ خون اور گندگی سے بھری ہوئی زمین
کو بار بار دھوئیں
'کیونکہ میرا دشمن مر چکا ہے، ایک ایسا شخص جو میری طرح مقدس

اور ملکوتی تھا

'میں وہاں نظر ڈالتا ہوں جہاں وہ اپنے سفید بے خون

چہرے کے ساتھ

تابوت میں لیٹا ہوا ہے

میں اس کے قریب آتا ہوں

'اور جھکتا ہوں اور جھک کر تابوت کے اندر سفید چہرے کو بڑی نرمی کے ساتھ

اپنے ہونٹوں سے چھو لیتا ہوں''

بمبئی کے ادیبوں کے اسی جلسے میں گجراتی زبان کے ایک بڑے ادیب گلاب داس بروکر نے اپنے پاکستان میں رہنے والے گجراتی قارئین کا ذکر کیا جو انھیں محبت اور پیار سے تحفے بھیجتے رہتے ہیں۔

نئی دلی کی مشہور نامہ نگار خاتون امیتا ملک کا بیان ہے کہ عین اس زمانے میں جب ہندستانی فوجیں لاہور سکٹر کی طرف بڑھ رہی تھیں، دلی میں نہ جانے کتنے لوگ جن کی حب الوطنی پر شبہ نہیں کیا جا سکتا، لاہور اور سیالکوٹ کے گلی کوچوں کو فخر اور محبت کے ساتھ یاد کر رہے تھے۔ ظاہر ہے یہ وہ ہندو اور سکھ ہیں جو تقسیم کے وقت ان شہروں سے بے آبرو ہو کر نکلے تھے لیکن ان کے پیار کا یہ عالم تھا کہ وہ لاہور کو پیرس کی طرح حسین کہہ رہے تھے۔ حالانکہ ملک کے قومی رہنما اور فوجی افسر بار بار یہ اعلان کر رہے تھے کہ ہندستانی فوجوں کا مقصد لاہور پر قبضہ کرنا نہیں ہے پھر بھی یہ دکھے ہوئے دلوں کے ہندستانی لاہور کے لیے بیتاب تھے۔

(السٹر یٹڈ ویکلی آف انڈیا، بمبئی)

خود وزیر اعظم شاستری، وزیر دفاع چوہان اور ہمارے نائب صدر ڈاکٹر ذاکر حسین نے راشٹر پتی کی آواز میں آواز ملا کر ان جذبات کا اظہار کیا کہ ہماری لڑائی پاکستان کے عوام کے خلاف نہیں ہے۔ ہم ان کی ایک انچ زمین پر بھی قبضہ نہیں کرنا چاہتے، ہم تو یہ چاہتے ہیں کہ وہ ایک خوش حال اور پُر امن زندگی بسر کریں اور ہمیں ہمارے ملک کے اندر چین سے رہنے دیں۔ جب جنگ اپنے شباب پر تھی اور روزانہ بمباری کی خبریں آ رہی تھیں اور دلی اور بمبئی کی دلہن کی طرح جگمگاتی ہوئی راتیں سیاہ پوش ہو گئی تھیں، اس وقت بھی ہر ایک کے دل میں یہی جذبہ تھا کہ یہ جنگ جلد سے جلد ختم ہو جائے۔

اسی زمانے میں میری نظم 'کون دشمن ہے' شایع ہوئی۔ اس نظم کا اور اس کے بعد 'صبح فردا' اور دوسری نظموں کا جس محبت اور خلوص کے ساتھ ہر حلقے میں استقبال کیا گیا وہ ہندستانی قوم کے دل کی

بنیادی شرافت کا ثبوت تھا۔ اردو کے علاوہ ہندی، انگریزی، مراٹھی، گجراتی، پنجابی اخبارات اور رسائل نے اس نظم کو بار بار شایع کیا، دوستوں نے اسے ایک دوسرے کے پاس تحفے کی طرح بھیجا، پڑھنے والوں نے مجھے محبت بھرے خطوط لکھے، آل انڈیا ریڈیو نے اسے مختلف شہروں سے بار بار نشر کیا اور کشمیر کے وزیر اعلیٰ محمد طارق نے مجھے سری نگر سے لکھا کہ:

'نظم بے حد پسند کی گئی۔ کل مجھے ریڈیو سے سرحد کے اس پار رہنے والوں کو خطاب کرنا تھا۔ میں نے تقریر کم کی اور نظم زیادہ سنائی۔ پوسٹر اور پمفلیٹ کی شکل میں نظم چھاپی جارہی ہے۔'

میں نے بمبئی اور دلی کے درمیان مختلف شہروں میں صرف چند ہفتوں کے اندر یہ نظم سیکڑوں بار سنائی اور بعض محفلوں میں کئی کئی بار پڑھی اور ہر مرتبہ کسی بوڑھے، کسی جوان، کسی مرد یا عورت کی آنکھوں میں آنسو بھر آئے۔ یہ نم دیدہ آنکھیں ہندو اور مسلمان کی قید سے آزاد تھیں۔

میں نے تیس برس کی شاعرانہ زندگی میں اس سے اچھی نظمیں بھی کہی ہیں، پرسکون زمانے میں بھی اور طوفانی دور میں بھی، سیاسی ہنگاموں اور فرقہ وارانہ فسادات کی تباہ کاریوں کے عالم میں، جب کہ جذبات برانگیختہ ہوتے ہیں، میری کسی نظم کا اتنا شاندار استقبال نہیں ہوا۔ اس تجربے نے میرے یقین اور حوصلے کو بڑھا دیا ہے۔ میں اپنے ملک کی صحت مند جمہوری روایت پر فخر کرسکتا ہوں اور اعتماد کے ساتھ یہ کہہ سکتا ہوں کہ ہماری قوم کی روح گندی نہیں ہے اور اس پُر امن قوم کو جنگ باز قوم میں تبدیل نہیں کیا جاسکتا۔

یہ ہندستان کی عظمت اور صداقت کی دلیل ہے کہ جنگ کے شباب کے زمانے میں بھی عام آدمی گلوگیر آواز میں یہ مصرعے میرے ساتھ دہرا رہے تھے۔

ہمارے پاس ہے کیا دردِ مشترک کے سوا
مزا تو جب تھا کہ مل کر علاجِ جاں کرتے
خود اپنے ہاتھوں سے تعمیرِ گلستاں کرتے
ہمارے درد میں تم اور تمھارے درد میں ہم
شریک ہوتے تو پھر جشنِ آشیاں کرتے

اس حقیقت سے کیسے انکار کیا جاسکتا ہے کہ تقسیم کے باوجود ہندستان اور پاکستان کے عوام ایک دوسرے سے جتنے قریب ہیں دنیا کا کوئی ملک اس کی مثال نہیں پیش کرسکتا۔ ہندستان کے تمدن کے ابتدائی سرچشمے ہڑپا اور موہنجو داڑو تہذیب کی نشانیاں ٹکشلا اور سکھوں کی مقدس زیارت گاہیں پاکستان میں

ہیں گرو نانک کے نقشِ قدم اب بھی اس خاک میں تلاش کیے جا سکتے ہیں اور مسلمانوں کی تہذیب کی نشانیاں لال قلعہ، قطب مینار، تاج محل، نظام الدین اولیا اور خواجہ معین الدین چشتی کے مزار، غالب اور میر کے شہر دلی اور لکھنؤ اور آگرہ سب ہندستان میں ہیں۔ اسی بنگالی زبان کی خوشبو ڈھاکے میں پھیلی ہوئی ہے جس سے کلکتے کی گلیاں معطر ہیں۔ ٹیگور اور نذر الاسلام دونوں جگہ کے قومی شاعر ہیں۔ اگر ایک دلی اٹھ کر کراچی میں جا بستی ہے تو ایک لاہور دلی میں آباد ہو گیا ہے۔ وہی اردو، وہی پنجابی، وہی سندھی زبانیں دونوں ملکوں کے درمیان دریاؤں کی طرح بہہ رہی ہیں، اگر فیض ہندستان میں مقبول ہیں تو مولانا ابوالکلام آزاد اور کرشن چندر کی تحریریں پاکستانیوں کی آنکھ کا سرمہ ہیں۔ ہماری تہذیب، ہمارا تمدن، ہمارا رہن سہن، ہماری جذباتی افتاد، ہمارے پیار کرنے اور نفرت کرنے کے طریقے سب ایک سے ہیں۔ یہی وجہ ہے کہ جب کوئی امرتا پریتم تقسیم کی غارت گری پر آنسو بہاتی ہے تو اپنی بے بسی کے عالم میں وارث شاہ کو آواز دیتی ہے۔ لاہور ریڈیو اور دلی ریڈیو ایک ہی لے میں بیر گاتے ہیں۔ پھر کیا اس کے بعد ہم یہ محسوس کرنے پر مجبور نہیں ہیں کہ ان دو ملکوں کے درمیان ہونے والی جنگ سے زیادہ بھیانک کسی اور جنگ کا تصور نہیں کیا جا سکتا۔

غالباً 10 یا 11 ستمبر کی بات ہے میں اپنے گھر کی دوسری منزل سے اتر رہا تھا کہ پہلی منزل کے زینے پر مجھے ایک سکھ دوست ملے جنھیں میں اتنا کم جانتا تھا کہ پہچاننے میں تکلف ہوا۔ وہ تھوڑی دور میرے ساتھ چلتے رہے اور پھر پوچھنے لگے 'کیا ہو رہا ہے؟' میں نے ایک لفظ میں جواب دیا 'جنگ' سردار جی خاموش رہے اور پھر تھوڑی دیر کے بعد بولے 'ایک شعر سناؤں' اور انھوں نے مجھے میرا ایک پرانا شعر سنایا۔

کام اب کوئی نہ آئے گا بس اک دل کے سوا
راستے بند ہیں سب کوچۂ قاتل کے سوا

یہ محبت اور دردمندی اگر پاکستان کو بھی نصیب ہو جائے تو ہم بڑی آسانی سے کوچۂ قاتل کو کوچۂ جاناں میں تبدیل کر سکتے ہیں۔

لیکن افسوس کی بات یہ ہے کہ پاکستان کے ادیبوں اور دانشوروں نے نفرت کو اپنا سب سے بڑا حربہ بنا رکھا ہے۔ ہمیں پاکستان کے اندرونی حالات میں مداخلت کرنے کا کوئی حق نہیں ہے اور نہ ہم پاکستان کے حکمرانوں سے بات کر سکتے ہیں لیکن ہم پاکستان کے شاعروں، ادیبوں اور دانشوروں کو مخاطب کرنے کا حق ضرور رکھتے ہیں اور اگر ہماری آواز ان تک پہنچ سکے تو ہم ان سے یہ کہنا چاہتے ہیں کہ

ہندستان کے خلاف نفرت پھیلانے کے بجائے اگر وہ اپنے ملک کے اندر محبت، دوستی اور ہمدردی کی فضا پیدا کرنے کی کوشش کریں، اپنے عوام کے جمہوری حقوق کے لیے آواز بلند کریں اور اپنے ملک کو سامراجی سازشوں کے جال سے باہر نکال لینے کی جدوجہد میں اپنے قلم سے کام لیں تو ہندستان اور پاکستان کے درمیان خوشگوار حالات پیدا ہو سکتے ہیں۔ یہ دونوں ملکوں کی بقا اور ترقی ہی کے لیے نہیں بلکہ سارے ایشیا کی آزادی اور سارے عالم کے امن کے لیے ایک مبارک قدم ہوگا۔

ہماری پیش کش امن ہے اور ہم اس کا جواب امن کے نعرے ہی کی شکل میں سننا چاہتے ہیں۔

انسانی برادری کا جو خواب صوفیوں اور سنتوں نے دیکھا تھا، جس کے ترانے رومی، حافظ، کبیر اور گرونانک جیسی مقدس ہستیوں نے گائے تھے، وہ خواب ابھی تک شرمندۂ تعبیر نہیں ہوا ہے۔ انسان اب بھی نسل، رنگ مذہب، عقائد، سیاست، جغرافیائی حدود اور قوموں کے نام پر تقسیم ہے۔ جب انسان ان تمام اضافی تعریفوں سے بے نیاز ہو کر صرف انسان رہ جائے گا، وہ وقت ابھی بہت دور ہے لیکن اس وقت کا تصور کرنا، اس کو محسوس کرنا، دیکھ لینا اور اس کا جشن منانا ہر شاعر کا کام ہے۔

بمبئی

اکتوبر 1965 — سردار جعفری

# پیراہن شرر

کھڑا ہے کون یہ پیراہن شرر پہنے
بدن ہے چور تو ماتھے سے خون جاری ہے
زمانہ گزرا کہ فرہاد و قیس ختم ہوئے
یہ کس پہ اہلِ جہاں، حکم سنگ باری ہے
یہاں تو کوئی بھی شیریں ادا نگار نہیں
یہاں تو کوئی بھی لیلیٰ بدن بہار نہیں
یہ کس کے نام پہ زخموں کی لالہ کاری ہے

کوئی دِوانہ ہے، لیتا ہے سچ کا نام اب تک
فریب و مکر کو کرتا نہیں سلام اب تک
ہے بات صاف سزا اِس کی سنگ ساری ہے

6اگست1965ء

# تم بھی آؤ

منزل دور اندھیری راہیں
کانٹے کانٹے، جنگل جنگل
خشک لہو کے لمبے صحرا
خون کی بارش
سناٹوں کے بھاری پتھر
جیسے اولوں کا پتھراؤ

تنہا راہیں کٹ نہ سکیں گی
تنہا منزل مل نہ سکے گی
پاؤں کے چھالے
دشت کے دل میں
پھول کی صورت کھل نہ سکیں گے
خون کی بارش رک نہ سکے گی
سناٹوں کے ہاتھ کے پتھر
ختم نہ ہوں گے
میں تنہا ہوں، تم بھی تنہا
تنہا تنہا مر جائیں گے
میں آتا ہوں
تم بھی آؤ

15 جولائی 1965

# انٹلکچول

(ایک طنزیہ نظم)

یہ کتابیں ہیں، یہ کافی کے حسیں پیالے ہیں
جن پہ بنگال کے نقاشوں نے
اپنے ہاتھوں سے بنائے ہیں عجب نقش و نگار
جیمنی رائے کی تصویریں بھی شرمندہ ہیں

اور یہ ٹوٹا ہوا سر، اینٹھے ہوئے ہاتھ اور پاؤں
سات آنکھوں کا فریب
گیارہ ہونٹوں کا طلسم
ایک تصویر ہے، مقصد ہے نہ مطلب کوئی
صرف اک لذتِ اظہار کا آئینہ ہے
کس کو معلوم حسیں کیا ہے، بھیانک کیا ہے
ایک ہی شے ہے، جسے کہتے ہیں احساسِ نشاط
یا نشاطِ احساس
نہ تو اظہار ہی ممکن ہے، نہ ترسیل اس کی

جس کو سر سمجھا تھا، وہ سر بھی نہیں
آنکھ اور ہونٹ فقط رنگ کے کچھ دھبے ہیں
اور دھبے بھی نہیں
شاید اک لمحۂ بیتاب و گریزاں جم کر
قطرۂ خونِ دل و اشک بنا جاتا ہے

اور یہ لمحہ کہ ازل ہے نہ ابد
وقت کی جنبشِ پرکار یہ گریزاں سایہ
آتشیں بوسۂ لب ماضی و مستقبل کا
یاس و امید کی ہم آغوشی
موت اور زیست کا وصل
یہی انساں کی حقیقت، یہی انسان کی اصل

وقت اور موت کے پنجے سے ملے گی نہ نجات
سب ہی بے کار ہیں شمشاد قدوں کی باتیں
لب لعلیں کی مسیحا نفسی کے قصے
حق و باطل کے تصادم کے تمام افسانے
اِک حقیقت ہے تو وہ روح کی تنہائی ہے
مئے تنہائی سے تنہائی کا پیمانہ بھرو
مئے تنہائی سے
مئے تنہائی سے

1 / جون 1965

# یہ لہو

اس لہو کا کیا کرو گے
یہ لہو
گرم جیسے بوسۂ لب، سرخ جیسے رنگِ گل
ننھے بچوں کا تبسّم، بوڑھے ہونٹوں کی دعا
نیم وا آنکھوں کا کاجل، نرم ہاتھوں کی حنا
بربطِ مطرب کا نغمہ، سازِ شاعر کی نوا
عشق کا عہدِ وفا
یہ لہو کافر نہیں، مرتد نہیں، مسلم نہیں
وید و گیتا کا ترنّم، مصحفِ یزداں کا لحن
یہ کتابِ زندگی کا پہلا حرفِ دل نواز
آرزوئی سب سے پہلی راگنی
روحِ انجیلِ مقدس، جانِ توریت و زبور
خنجروں کی پیاس اس شعلے سے بجھ سکتی نہیں

اس لہو کا کیا کرو گے
یہ لہو
گرم و سرخ و نوجواں

خاک پر ٹپکے گا تو جل جائے گی دھرتی کی کوکھ
آسماں سے قطرۂ رحمت نہ برسے گا کبھی
کوئی دانہ پھر نہ اُپجے گا کبھی
کوئی کونپل مسکرائے گی نہ پھر مہکے گا پھول

یہ لہو ہونٹوں کی خوشبو، یہ لہو نظروں کا نور
یہ لہو عارض کی رنگت، یہ لہو دل کا سرور
آفتابِ کوہِ فاراں، جلوۂ سینا و طور
شعلۂ حرفِ صداقت، سوزِ جانِ ناصبور
کلمۂ حق کا اجالا، یہ تجلی کا ظہور
یہ لہو، میرا لہو، تیرا لہو، سب کا لہو

10/اگست 1965

# دعا

(ویت نام سے کشمیر تک خون آلودہ افق کے نام)

پھر چلا جنگ کا دیوتا
سرخ شعلوں کے خنجر کو تانے ہوئے
خون کی پیاس سے
گوشت کی بھوک سے
چیختا اور چنگھاڑتا
آسمانوں پہ عفریت کی طرح اڑتا ہوا
موت کی طرح دھرتی پہ چلتا ہوا

حسن کی خیر ہو، خیر بچوں کی معصومیت کی
فصلیں سہمی ہوئی
کھیت گھبرائے گھبرائے سے
جو فضائیں نئی کونپلوں کی مہک سے معطر تھیں وہ
گندی بارود کی بو سے سرشار ہیں
خوں کے چھینٹے ہیں شبنم کے پیراہنوں پر
مندروں، مسجدوں اور کلیساؤں کے دامنوں پر

اس کا آغاز سب پر عیاں ہے،
انجام کچھ بھی نہیں
حاصلِ قتل و غارت ہے کیا؟
چند اجڑے ہوئے شہر، جھلسے ہوئے راستے
سرنگوں بیوگی
اشک آلودہ و زخم خوردہ یتیمی

کوئی گوتم نہیں جس کی شفقت
دل کے زخموں پہ رکھ دے
اپنے غمگیں تبسم کی درد آشنا چاندنی
کوئی گاندھی نہیں
آج جس کی شہادت سپر بن کے ہر وار کو روک لے
کوئی نہرو نہیں
جس کا دامن پکڑ کر یہ پوچھیں یہ کیا ہو رہا ہے

گیت کے دل میں خنجر ہے، الفاظ ہیں سر بریدہ
اپنے قبضے میں ایک بے بسی کے سوا کچھ نہیں
نالے بیکار، فریاد بے سود ہے
آؤ مل کر محبت کو آواز دیں
نیکیوں کو پکاریں

16/ اگست 1965

⁂ ⁂ ⁂

# قطعہ

دل کو پھر زخم تمنا نے ا ب ت بہ ے
جان بے تاب کو لو درد نے ہ یار گیا
جب کبھی یاد کیا شاہد ر ہائی سے
ہم نے بھی کوئے ملامت سے نہ انکار کیا

17 اگست 1965

* * * * * *

# غزل

الجھے کانٹوں سے کہ کھِلے گل تر سے پہلے
فکر یہ ہے کہ صبا آئے کدھر سے پہلے
جام و پیمانہ و ساقی کا گماں تھا لیکن
دیدۂ تر ہی تھا یاں دیدۂ تر سے پہلے
ابرِ نیساں کی نہ برکت ہے نہ فیضان بہار
قطرے گم ہو گئے تعمیرِ گہر سے پہلے
جم گیا دل میں لہو، سوکھ گئے آنکھوں میں اشک
تھم گیا دردِ جگر، رنگِ سحر سے پہلے
قافلے آئے تو تھے نعروں کے پرچم لے کر
سرنگوں ہو گئی ہر آہ اثر سے پہلے
خونِ سر بہہ گیا، موت آ گئی دیوانوں کو
بارشِ سنگ سے طوفانِ شرر سے پہلے
سرخیِ خون تمنا کی مہک آتی ہے
دل کوئی ٹوٹا ہے شاید گلِ تر سے پہلے
مقتلِ شوق کے آداب نرالے ہیں بہت
دل بھی قاتل کو دیا کرتے ہیں سر سے پہلے

18/ اگست 1965

# غزل

وہ بہاریں وہ ہوائیں، جو زمیں زمیں چمن دیں
وہی مہر و ماہ لائیں، جو اُفق اُفق کرن دیں

یہ نیا زمانہ اے دل جو وقار کھو چکا ہے
اسے اپنی سربلندی، اسے اپنا بانکپن دیں

جو ہیں رند بھٹکے بھٹکے، جو ہیں ساقی بہکے بہکے
انہیں درسِ میکدہ دیں، انہیں ذوقِ انجمن دیں

بڑی دیر ہو چکی ہے کہ ہیں نوحہ خواں ستارے
چلو اب شبِ سیہ کو، نئی صبح کا کفن دیں

لبِ تیغ پر لہو ہے، لبِ زخم پر تبسم
یہ حیات تن برہنہ اسے کیسا پیرہن دیں

نئی روح جسم خستہ کو عطا نہ ہو سکے تو
یہ کریں کہ روحِ نو کو، کوئی اک نیا بدن دیں

نئی ابروؤں کو بجلی، نئی انکھڑیوں کو صہبا
نئی تیغ دیں نظر کو، نئی زلف کو شکن دیں

یہ زمیں مری زمیں ہے، یہ فلک مرا فلک ہے
انھیں صید کر چکی ہیں، مرے فکر کی کمندیں

اُسی بزم میں ملیں گے ابھی شعرِ تر کے ساغر
چلو بزمِ جعفری میں تمھیں جامِ فکر و فن دیں

28/اگست 1965

# غزل

وہی ہے وحشت ، وہی ہے نفرت، آخر اس کا کیا ہے سبب
انساں انساں بہت رٹا ہے ، انساں انساں بنے گا کب

وید، اُپنی شد پرزے پرزے، گیتا قرآں ورق ورق
رام و کرشن و گوتم و یزداں ، زخم رسیدہ سب کے سب

اب تک ایسا ملا نہ کوئی، دل کی پیاس بجھاتا جو
یوں میخانہ چشم بہت ہیں ، بہت ہیں یوں تو ساقی لب

جس کی تیغ ہے دنیا اس کی، جس کی لاٹھی اس کی بھینس
سب قاتل ہیں سب مقتول ہیں ، سب مظلوم ہیں ظالم سب

خنجر خنجر قاتل ابرو، دلبر ہاتھ، مسیحا ہونٹ
لہو لہو ہے شام تمنا، آنسو آنسو صبح طرب

دیکھیں دن پھرتے ہیں کب تک، دیکھیں پھر کب ملتے ہیں
دل سے دل، آنکھوں سے آنکھیں، ہاتھ سے ہاتھ اور لب سے لب

زخمی سرحد، زخمی قومیں، زخمی انساں ، زخمی ملک
حرفِ حق کی صلیب اٹھائے، کوئی مسیح تو آئے اب

29/اگست1965

# غزل

کس سے پوچھیں کون بتائے، صبح کی کب پھوٹے گی کرن
رات کی سرحد مقتل مقتل، باندھ کے نکلو سر سے کفن

لے کر پھر قندیل محبت، اترو دل کے اندھیرے میں
روح کی تاریکی کو روشن کرتی نہیں سورج کی کرن

جشن ستم ہے، ناچ رہے ہیں خنجر، تیغیں گاتی ہیں
خون آلودہ شام گیسو، زخم رسیدہ صبح بدن

کعبۂ دل میں بیٹھے ہیں، اب بھی صدیوں کے فرسودہ بُت
رنگ و نسل و شیخ و برہمن، مذہب و ملت، ملک و وطن

یہ دنیا گمراہ ہے اب تک، پھر بولو اے سنت کبیر
ایک ہی سونے کے سب گہنے، ایک ہی مٹی کے برتن

ایک ہی نور ہے سب شمعوں میں، ایک ہی رس سب میووں میں
اپنے منہ کو میٹھا کر لو، کر لو آنکھوں کو روشن

ایک پرستاں کی سب پریاں، ایک گلستاں کے سب پھول
نیلے نیلے، پیلے پیلے، اودے اودے پیراہن

خون کی نہریں سینچ رہی ہیں انسانی لاشوں کے کھیت
بھوکے پیٹ کے کام نہ آئیں گے یہ زخموں کے خرمن

ہم نے تو روٹی کی خاطر تن کے ٹکڑے بیچے ہیں
تم نے آخر کس کی خاطر بیچ دیا ہے اپنا من

30راگست1965

# جنگ بازوں کا فرمان

خون و بارود کی بو کو بھی معطر سمجھو
حکم اب یہ ہے کہ زخموں کو گلِ تر سمجھو
موت کی گود سے لو لذتِ ہم آغوشی
خمِ تلوار کو محبوب کا پیکر سمجھو
جنگ کو امن کہو، امن کو دو جنگ کا نام
نشترِ خار کو پھولوں کے برابر سمجھو
دولتِ دیدۂ تر چار طرف عام ہوئی
آنسوؤں کو بھی مئے ناب کا ساغر سمجھو
روحِ ابلیس کو دو حضرتِ جبریل کا نام
جھوٹ کو حکمِ خدا، حرفِ پیمبر سمجھو

3/ستمبر 1965

# کون دشمن ہے

یہ ٹینک، توپ، یہ بمبار، آگ بندوقیں
کہاں سے لائے ہو، کس کی طرف ہے رُخ ان کا
دیارِ وارث و اقبال کا یہ تحفہ ہے؟
جگا کے جنگ کے طوفاں زمینِ نانک سے
اُٹھے ہو برق گرانے کبیر کے گھر پر

غلام تم بھی تھے کل تک، غلام ہم بھی تھے
نہا کے خون میں آئی تھی فصلِ آزادی

ابھی تو صبح کی پہلی ہوائیں سنکی ہیں
ابھی شگوفوں نے کھولی نہیں ہے آنکھ اپنی
ابھی بہار کے لب پر ہنسی نہیں آئی
نہ جانے کتنے ستارے بجھی سی آنکھوں کے
نہ جانے کتنے فسردہ ہتھیلیوں کے گلاب
ترس رہے ہیں ابھی رنگ و روشنی کے لیے

ہمارے پاس ہے کیا دردِ مشترک کے سوا

مزا تو جب تھا کہ مل کر علاجِ جاں کرتے
خود اپنے ہاتھ سے تعمیرِ گلستاں کرتے
ہمارے درد میں تم اور تمھارے درد میں ہم
شریک ہوتے تو پھر جشنِ آشیاں کرتے

مگر تمھاری نگاہوں کا طور ہے کچھ اور
یہ بہکے بہکے قدم اُٹھ رہے ہیں کس جانب؟
کدھر چلے ہو یہ شمشیر آزمانے کو؟
سمجھ لیا ہے جسے تم نے ملک کی سرحد
وہ سرحد دل و جاں ہے، ہمارا جسم ہے وہ
حسیں ، بلند، مقدس، جوان، پاکیزہ
ہے اس کا نام خیابانِ جنت کشمیر
ہے اس کا نام گلستانِ دلّی و پنجاب
ہم اس کو پیار سے کہتے ہیں لکھنؤ بھی کبھی

تم اس کو تیغ کے ہونٹوں سے چھو نہیں سکتے
ادب سے آؤ کہ غالب کی سرزمین ہے یہ
ادب سے آؤ کہ ہے میر کا مزار یہاں
نظام و کاکی و چشتی کے آستانے ہیں
جھکا دو تیغوں کے سر بارگاہِ رحمت میں

ہمارے دل میں رفاقت بھی اور پیار بھی ہے
تمھارے واسطے یہ روح بے قرار بھی ہے
اگرچہ کہنے کو جی چاہتا نہیں لیکن
جوابِ اہلِ ہوس، تیغِ آب دار بھی ہے
اُدھر بہن ہے کوئی، کوئی بھائی، کوئی عزیز
گزشتہ بادہ پرستوں کی یادگار کوئی
رفیقِ مجلس و زنداں ، رفیقِ دار کوئی
ہماری طرح سے رُسوائے کوئے یار کوئی
لبوں پہ جن کے تبسم ہے عہدِ رفتہ کا
نظر میں خواب ہیں بیتے ہوئے زمانے کے
دلوں میں نور چراغِ امید فردا کے

وہ سب جو غیر نظر آ رہے ہیں ، اپنے ہیں

ادھر بھی حلقۂ یاراں ، ہجومِ مشتاقاں
اُدھر بھی چاہنے والوں کی کچھ کمی ہی نہیں
ہزاروں سال کی تاریخ ہے ثبوت اس کا
کھڑے ہیں سینوں پہ زخموں کے گل کھلائے ہوئے
دیارِ ہیر کی یادوں سے دل جلائے ہوئے
چناب و جہلم و راوی سے لو لگائے ہوئے
ہمارے بیچ میں حائل ہیں آگ کے دریا

تمھارے اور ہمارے لہو کے ساگر ہیں
بہت بلند سہی نفرتوں کی دیواریں
ہم ان کو ایک نظر میں گرا بھی سکتے ہیں
تمام ظلم کی باتیں بھلا بھی سکتے ہیں
تمھیں پھر اپنے گلے سے لگا بھی سکتے ہیں
مگر یہ شرط ہے تیغوں کو توڑنا ہوگا
لہو بھرا ہوا دامن نچوڑنا ہوگا
پھر اس کے بعد نہ تم غیر ہو نہ غیر ہیں ہم

تم آؤ گلشنِ لاہور سے چمن بردوش
ہم آئیں صبحِ بنارس کی روشنی لے کر
ہمالیہ کی ہواؤں کی تازگی لے کر
اور اُس کے بعد یہ پوچھیں کہ کون دشمن ہے؟

12/ستمبر 1965

# شہرِ تمنّا

(دہلی کے نام)

اے دیارِ دوست، اے شہرِ تمنّا، آج کیوں
آ رہی ہے یاد تیری دلبری کی بار بار
دردِ دل کی کیفیت پہلے کبھی ایسی نہ تھی
روحِ شاعر یوں تو رہتی ہے ہمیشہ بے قرار
جنگ کی تاریک شب ہے اور بلاؤں کا نزول
ہو نہ جائیں یک بہ یک تیری فضائیں شعلہ بار
لُٹ نہ جائے یہ ضیا، یہ رونقِ دیوار و در
راکھ ہو جائے نہ جل کر تیرے کوچوں کی بہار
منتظر ہوں میں بھی اس جشنِ مسرّت کے لیے
جس کی خاطر لمحہ لمحہ ہے سراپا انتظار
تجھ کو لے لے اپنے حلقے میں جوانی کی امنگ
سرنگوں ہونے نہ پائے تیری عظمت کا حصار
تیری دیواروں سے ٹکرائیں بلائیں اپنا سر
تیرے دروازے سے جائے ہو کے آفت شرمسار
مشعلِ رخسار سے روشن ہوں تیرے بام و در
بوئے گیسوئے معنبر سے ہوں گلیاں عطر بار

تیرے دیوانوں پہ برسیں مہرباں نظروں کے تیر
عشق کے سینے پہ ہو زلفوں کی تیغ آب دار
نغمۂ جمہوریت ہو تیرے بازاروں کا شور
کار خانے گا ئیں تیرے گیت جیسے آبشار
پھول سی آغوش میں بچوں کو مائیں بھینچ لیں
پھول سے ہونٹوں سے بچے پھر کریں ماں کو پیار
پھر اڑیں ہر سمت ہاتھوں کی سنہری تتلیاں
دھودے پھر گرد مصیبت کو تبسم کی پھوار
پھر کھلیں در حسن کی محبوب باہوں کی طرح
کھڑکیوں سے ہو طلوع جلوۂ دیدارِ یار
جگمگا اٹھیں ترے بے نور، بے رونق چراغ
تیرے ایوانوں کی گردن میں ہوں پھر شمعوں کے ہار
آرزوئیں پھر کہیں افسانۂ تعمیر نو
کشتیِ دل سے ہو طوفان تمنا ہم کنار
دور ہو کر بھی میں تجھ سے آج ہوں نزدیک تر
اے دیار دوست، اے شہر تمنا، کوئے یار
جل رہی ہے دل میں تیری شمع محبوبی کی لو
روح میں اتری ہوئی ہے حسن کے خنجر کی دھار
تیری پیشانی کو چومے فتح و نصرت کی کرن
تیرے قدموں پر ہو قرباں گردشِ لیل و نہار

13 ستمبر 1965

# دستِ فریاد

چھاؤں ہے جنگ کے میدان میں تلواروں کی
دل ہلا دیتی ہے للکار جگر داروں کی
ایک بھی دشمنِ جاں بچ کے نہ جانے پائے

وہ جو ہتھیار لیے آتے ہیں، سب دشمن ہیں
جس نے ہتھیار دیے وہ بھی تو دشمن ہوگا
آج ہی کل میں مگر آنے کو ہے روزِ حساب
دست فریاد میں کس کس کا نہ دامن ہوگا

15 ستمبر 1965

# اشکِ ندامت

کہاں ہیں اشک ندامت، کہ دھوئیں دامن سے
لہو کا داغ، دلوں سے کدورتوں کا غبار
یہ اشک ہوں تو ابھی روح پر جلا ہو جائے
یہ آدمی کہ جو ہے نفرتوں کے حلقے میں
یہ آدمی جو ہوا و ہوس کے دام میں ہے
شکار اپنی بنائی ہوئی سیاست کا
مقامِ عشق پہ فائز ہو اور خدا ہو جائے

16 ستمبر 1965

# صبحِ فردا

اسی سرحد پہ کل ڈوبا تھا سورج ہو کے دو ٹکڑے
اسی سرحد پہ کل زخمی ہوئی تھی صبحِ آزادی
یہ سرحد خون کی، اشکوں کی، آہوں کی، شراروں کی
جہاں بوئی تھی نفرت اور تلواریں اُگائی تھیں

یہاں محبوب آنکھوں کے ستارے تلملائے تھے
یہاں معشوق چہرے آنسوؤں میں جھلملائے تھے
یہاں بیٹوں سے ماں، پیاری بہن بھائی سے بچھڑی تھی

یہ سرحد جو لہو پیتی ہے اور شعلے اگلتی ہے
ہماری خاک کے سینے پہ ناگن بن کے چلتی ہے
سجا کر جنگ کے ہتھیار میداں میں نکلتی ہے
میں اس سرحد پہ کب سے منتظر ہوں، صبحِ فردا کا

(2)

یہ سرحد پھول کی، خوشبو کی، رنگوں کی، بہاروں کی
دھنک کی طرح ہنستی، ندیوں کی طرح بل کھاتی
وطن کے عارضوں پر زلف کے مانند لہراتی
مہکتی، جگمگاتی، اک دلھن کی مانگ کی صورت
کہ جو بالوں کو دو حصّوں میں تو تقسیم کرتی ہے
مگر سیندور کی تلوار سے، صندل کی انگلی سے

یہ سرحد دلبروں کی، عاشقوں کی، بیقراروں کی
یہ سرحد دوستوں کی، بھائیوں کی، غم گساروں کی
سحر کو آئے خورشیدِ درخشاں پاسباں بن کر
نگہبانی ہو شب کو آسماں کے چاندتاروں کی
زمیں پامال ہو جائے بھرے کھیتوں کی یورش سے
سپاہیں حملہ آور ہوں درختوں کی قطاروں کی
خدا محفوظ رکھے اس کو غیروں کی نگاہوں سے
پڑیں نظریں نہ اس پر خوں کے تاجر تاجداروں کی
کچل دیں اس کو فولادی قدم بھاری مشینوں کے
کرے یلغار اس پر ضرب کاری دستکاروں کی
اڑیں چنگاریوں کے پھول پتھر کے کلیجے سے
جھکے تیشوں کی محرابوں میں گردن کوہساروں کی
لبوں کی پیاس ڈھالے اپنے ساقی اپنے پیمانے
چمک اٹھیں مسرّت سے نگاہیں سوگواروں کی
محبت حکمراں ہو، حسن قاتل، دل مسیحا ہو
چمن میں آگ برسے شعلہ پیکر گل عذاروں کی

وہ دن آئے کہ آنسو ہو کے نفرت دل سے بہہ جائے
وہ دن آئے یہ سرحد بوسۂ لب بن کے رہ جائے

(3)

یہ سرحد من چلوں کی، دل جلوں کی، جاں نثاروں کی
یہ سرحد سرزمین دل کے بانکے شہہ سواروں کی
یہ سرحد کج کلاہوں کی، یہ سرحد کج اداؤں کی
یہ سرحد گلشنِ لاہور و دِلّی کی ہواؤں کی
یہ سرحد امن و آزادی کے دل افروز خوابوں کی
یہ سرحد ڈوبتے تاروں، ابھرتے آفتابوں کی
یہ سرحد خوں میں لتھڑے پیار کے زخمی گلابوں کی

میں اس سرحد پہ کب سے منتظر ہوں صبح فردا کا

25 ستمبر 1965

# ہمارے نام

ستارے آسماں پر نقرئی حرفوں سے لکھتے ہیں
تمھارا نام تاریکی کے سینے پر اُبھرتا ہے
یہی تارے تھے جن کو جوڑ کر مدت ہوئی تم نے
اندھیری رات کے ماتھے پہ میرا نام لکھا تھا
یہ نورانی شتے ناچ اٹھے تھے، مسکرائے تھے
تمھاری ایک انگشتِ حنائی کے اشارے پر
ہمارے جسم گیلی گھاس کی شبنم سے تر ہوکر
فرازِ آسماں سے کہکشاں کو کھینچ لائے تھے
نظر کانپی تھی لب ناآشنا لب تھرتھرائے تھے

زمیں پر میں بھی تنہا ہوں، زمیں پر تم بھی تنہا ہو
ہجومِ بزمِ یاراں میں، ہجومِ غم گساراں میں
ہزاروں فاصلے ہیں منزلوں کے رہگزاروں کے
ہزاروں فاصلے دریاؤں کے اور کوہساروں کے
ہزاروں فاصلے ایسے کہ ناپے جا نہیں سکتے

مگر نیلی فضا میں آسمانوں کی بلندی پر
ہمارے نام ہیں دو دوست، دو معشوق، دو عاشق
جنھوں نے پیار سے بانہوں میں باہیں ڈال رکھی ہیں

یہ روشن دائرے، ہیروں کی محرابوں کے سائے میں
کبھی جا کر ثریا سے، کبھی زہرہ سے ملتے ہیں
کبھی کرتے ہیں باتیں ماہ و مرّیخ و عطارد سے
کبھی یہ تیرتے ہیں کہکشاں کی گہری جھیلوں میں
نہاتے ہیں کبھی رنگِ شفق کے آبشاروں میں

لیے پھرتی ہے ان کو گردشِ شام و سحر لیکن
یہ دامِ گردشِ شام و سحر کو توڑ دیتے ہیں
یہ لافانی ستارے عصرِ حاضر کا مقدّر ہیں
زمیں، رقاصۂ افلاک کے ماتھے کا جھومر ہیں

کبھی دہلی، کبھی شیراز پر یہ جگمگا تے ہیں
کبھی لندن، کبھی نیویارک پر یہ مسکراتے ہیں
کبھی یہ ماسکو کے سر پہ تاجِ نور رکھتے ہیں

کبھی یہ دشمنوں کی سرحدوں کو پار کرتے ہیں
کبھی چشموں، کبھی باغوں کو جھک کر پیار کرتے ہیں
پروتے ہیں کبھی زلفوں میں موتی مہہ جبینوں کی
کھٹکتے ہیں کبھی نظروں میں اپنے نکتہ چینوں کی
کبھی یہ جھانکتے ہیں اِک عروسِ نو کی آنکھوں میں
کبھی مشعل بہ کف، بے آسرا مایوس راتوں میں

کبھی بھٹکے ہوئے رہرو کو یہ رستہ دکھاتے ہیں
کبھی ٹھہرے ہوئے پانی کے اندر ڈوب جاتے ہیں
کبھی یہ کھڑکیوں پر پھول کی صورت برستے ہیں
کبھی اپنی بلندی سے زمیں والوں پہ ہنستے ہیں
کبھی یہ کھیلتے ہیں مہ وشوں سے، ماہ پاروں سے
بلاتے ہیں کبھی بچوں کو آنکھوں کے اشاروں سے

کبھی بڑھتی ہوئی فوجوں کے اوپر سے گزرتے ہیں
جنازوں میں شہیدانِ وفا کے ساتھ چلتے ہیں
ٹھہرتے ہیں کبھی کشمیر کے یہ لالہ زاروں میں
کبھی جمنا کی موجوں میں، کبھی گنگا کے دھاروں میں
کبھی تبدیل ہو جاتے ہیں آتش میں، شراروں میں

جلا سکتی نہیں جنگوں کی آگ ان ماہتابوں کو
بجھا سکتی نہیں بارود روشن آفتابوں کو

ہمارے نام حرفِ خیر و برکت، نور و نزہت ہیں
ہمارے نام امن و دوستی، عشق و شرافت ہیں
ہمارے نام جنگ آلودہ و خونخوار دنیا میں
اشارہ آدمیت کا ہیں، نیکی کی ضمانت ہیں
ہمارے نام طاقت ہیں، لطافت ہیں، صداقت ہیں
ہمارے نام لافانی و روحانی مسرّت ہیں

ہمارے نام تاریکی کے سینے پر ابھرتے ہیں
اندھیری رات کے بے نور ماتھے پر چمکتے ہیں
20/ستمبر 1965

}{}{}{

# غزل

بیٹھے ہیں جہاں ساقی، پیمانۂ زر لے کر
اس بزم سے اٹھ آئے ہم دیدۂ تر لے کر

یادوں سے تری روشن محرابِ شبِ ہجراں
ڈھونڈھیں گے تجھے کب تک قندیلِ قمر لے کر

کیا حسن ہے دنیا میں، کیا لطف ہے جینے میں
دیکھے تو کوئی میرا اندازِ نظر لے کر

ہوتی ہے زمانے میں کس طرح پذیرائی
نکلو تو ذرا گھر سے اِک ذوقِ سفر لے کر

راہیں چمک اٹھیں گی خورشید کی مشعل سے
ہمراہ صبا ہوگی خوشبوئے سحر لے کر

مخمل سی بچھادیں گے قدموں کے تلے ساحل
دریا ابل آئیں گے صد موجِ گہر لے کر

پہنائیں گے تاج اپنا پیڑوں کے گھنے سائے
نکلیں گے شجر اپنے خوش رنگ ثمر لے کر

لپکیں گے گلے ملنے سرو اور صنوبر سب
اٹھیں گے گلستاں بھی شاخِ گلِ تر لے کر

ہنستے ہوئے شہروں کی آواز بلائے گی
لب جام کے چمکیں گے سو شعلۂ تر لے کر
افلاک بجائیں گے ساز اپنے ستاروں کا
گائیں گے بہت لمحے انفاسِ شرر لے کر
یہ عالمِ خاکی اِک سیارۂ روشن ہے
افلاک سے ٹکرا دو تقدیرِ بشر لے کر

30 ستمبر 1965

# جرعہ جرعہ، قطرہ قطرہ

انجم و مہتاب کے سائے میں جب آئے گی رات
نیلگوں زلفوں کے پیچ و خم میں بل کھائے گی رات
مسکرائے گی گریبانوں میں پھولوں کی طرح
آنچلوں کی ریشمی شکنوں میں لہرائے گی رات
مطربِ رنگیں نوا کے ساتھ ہوگی نغمہ سنج
ساقیٔ کافر ادا کے ساتھ اٹھلائے گی رات
شعلہ پیکر قامتوں کے حلقۂ آغوش میں
کہکشاں در کہکشاں پھر رقص میں آئے گی رات
چھیڑ دے گی جنبشِ مژگاں کا سازِ دلبری
عارض و لب کے مہکتے پھول برسائے گی رات
عشق کے ہونٹوں سے پی کر جرعۂ آبِ حیات
حسن کے پیمانۂ سیمیں کو چھلکائے گی رات
گنگنائے گی جواں پیروں کی پازیبوں کے سنگ
ساعدوں کی شمعِ کافوری میں جل جائے گی رات
چشمِ ساقی ہی میں ٹھہرے گی نہ زلفِ بادہ میں
ساغر و مینا کے سینے سے ابل جائے گی رات
جرعہ جرعہ کر کے ذوقِ تشنگی پی جائے گا
قطرہ قطرہ کر کے پیمانوں میں ڈھل جائے گی رات

رنگِ خونِ آرزو بن کر سحر ہو گی طلوع
دردِ دل بن کر مگر سینے میں رہ جائے گی رات
رنگ و بو کے قافلے، غنچوں کی آوازِ جرس
دور بادِ صبح کی صورت نکل جائے گی رات
ہم نہ ہوں گے پر قدح خوارانِ بزم نو کے ساتھ
لے کے صہبائے طرب کے جام پھر آئے گی رات

18/جولائی1965

}{}{}{

# چار شعر

کبھی ملے نہ دلِ غم زدہ کو غم سے نجات
کبھی تمام نہ ہو تشنہ آرزو کا سفر
خیال وخواب کے سینے میں جگمگاتا رہے
جمالِ یار ترے حسن و نور کا نشتر
یوں ہی چھلکتا رہے محفلِ تمنا میں
پیالۂ دلِ خوں گشتہ، جامِ دیدۂ تر
یوں ہی چمکتے رہیں دامن وگریباں میں
ستارۂ سحری بن کے آنسوؤں کے گہر

12اکتوبر1965

}{}{}{

# موسموں کا گیت

(کالی داس کی نظم 'رت سیوں ہار' سے ماخوذ)

کتنے دل کش ہیں مرے ملک کے موسم، ان میں
حسن کی بات کریں، عشق پہ اصرار کریں
نورِ محبوب سے روشن کریں آنکھوں کے چراغ
پھول کی طرح سے ذکرِ لب و رخسار کریں
مصحفِ حق کی طرح کھولیں کتابِ دل کو
جس میں جنگ اور جدل کا کوئی افسانہ نہیں
فصلِ گل فصلِ خزاں، فصلِ زمستاں ہے مگر
موسمِ جنگ نہیں، موسمِ ویرانہ نہیں

(1)

گرمیاں آئی ہیں برساتی ہوئی انگارے
دیکھنا شعلہ بدن دھوپ پہ آیا ہے شباب
لوگ تالابوں میں اترے ہیں نہانے کے لیے
تہہ نشیں ہوتی چلی جاتی ہے ہر چادرِ آب
اِک ذرا دیر کو تھوڑا سا سکوں ملتا ہے
جسم کو چھوتا ہے جس وقت خنک شام کا ہاتھ

اتنی سوزش ہے کہ بس سرد ہوئی گرمیِ عشق
پیار کے منہ سے نکلتی ہی نہیں پیار کی بات

نیند آسکتی نہیں عشق کے بیماروں کو
ان دنوں جاگتے رہنے کے بہانے ہیں بہت
تیرتی رہتی ہیں وینا کی سریلی تانیں
گیت شیریں ہیں بہت، نرم ترانے ہیں بہت
آب صندل میں ڈبوئے ہوئے پنکھوں کی ہوا
اپنے مہکے ہوئے ہاتھوں سے تھپک دیتی ہے
اور دھڑکتے ہوئے سینوں پہ دھڑکتے ہوئے ہار
ہرلڑی موتی کی بس جان ہی لے لیتی ہے

آگ برساتی ہوئی دھوپ کی کرنوں کا جلال
تیز اور تند ہو جس طرح ہون کا شعلہ
دشمنی سانپ کی طاؤس سے بس ختم ہوئی
وہ بھی طاؤس سے دیرینہ عداوت بھولا
اتنی گرمی ہے کہ کھلتی نہیں منقار اس کی
بھوک باقی نہیں، کیا جائے غذا کے پیچھے
دھوپ کی جلتی ہوئی آگ سے بچنے کے لیے
سانپ آبیٹھا ہے رنگین پروں کے نیچے

میری جاں، اے مرے نغموں کی جواں شہزادی
فصلِ گرما سحر و شام تجھے راس آئے
چاندنی رات سجائے تری مہکی ہوئی سیج
جسمِ سیمیں کے لیے پھولوں کے تحفے لائے
تری صبحوں کو رکھیں سرد کنول کی جھیلیں

ٹھنڈے پانی کے اچھلتے ہوئے فواروں سے
تیری شاموں کو ترے چاہنے والے مل جائیں
جو چنیں پھول ترے حسن کے گلزاروں سے
دھوپ بے جان ہو، گیتوں کی گھٹا چھائی ہو
تو ہو، احباب ہوں، اور گوشۂ تنہائی ہو

(2)

دیکھنا میگھ کا وہ شاہسوار آپہنچا
گونج اٹھے کوہ ودمن، گونج اٹھے دشت و جبال
گھن گرج وہ ہے مری جان، کہ شاہی ڈنکے
جس طرح بجتے ہیں میداں میں بہ صد شانِ جلال
بجلی لہراتی ہے شعلوں کا سنہری پرچم
ابر کے فیل پہ بارش کا شہنشاہ سوار
گھر سے سب اس کے سواگت کو نکل آئے ہیں
غول عشاق کے، بدمست حسینوں کی قطار

فوجیں بادل کی چلی آتی ہیں کرتی ہوئی کوچ
چوٹ پڑتی ہے گرجتے ہوئے نقاروں پر
آگ کی ڈور ہے، رنگوں کی کڑکتی ہے کمان
بجلیاں باندھی گئیں اندردھنش پر کس کر
چھینٹا بارش کا ہے یا تیروں کی بوچھاریں ہیں
جو کیے دیتی ہیں متوالوں کے دل کو چھلنی
عشق تو زخم رسیدہ ہے، ستم دیدہ ہے
آج تو حسن پہ بھی ہوتی ہے ناوک فگنی

ایسا لگتا ہے کہ ہنسنے لگا جنگل سارا
اور نیپا کے درختوں میں نئے پھول کھلے
شاخیں بیتاب ہواؤں میں نرت کرنے لگیں
جیسے مدہوشی کے عالم میں کوئی رقص کرے
آئی نورستہ شگوفوں کے لبوں پر ہلکی
دل نوازانہ تبسم کی دل آویز لکیر
درد باقی ہے تپش کا نہ نشاں گرمی کا
نکلی برسات جو پہنے ہوئے پوشاک حریر

تجھ کو اے نور کی تصویر، مبارک ہوں یہ دن
لے کے آئے ہیں جو گھنگھور گھٹاؤں کا پیام
آتشِ شوق میں جل جائے جوانی تیری
نو عروسی کو تری عیش و مسرت کا سلام
زندگی جس سے تر و تازہ ہے اس بارش سے
سبز بیلوں کی طرح تو بھی تر و تازہ رہے
میری محبوبہ پہ ہو رحمتِ حق کی بارش
جگمگاتا ہوا رخسار رہے غازہ رہے

(3)

لو وہ آتی ہے خزاں، گاؤں کی کنواری جیسے
ناز و انداز کی جاں، حسن کی نازک مورت
بالیاں دھان کی بالوں میں سجا رکھی ہیں
دونوں رخسار دمکتے ہیں کنول کی صورت
جسم پر گھاس کے پھولوں کا مہکتا ملبوس
اپنی رفتار سے ہنسوں کو بھی شرماتی ہوئی

اس کے سواگت میں چہک اٹھتی ہیں چڑیاں جیسے
کسی معشوقہ کی پایل کی صدا آتی ہوئی

رات کی مانگ میں تاروں کی سنہری افشاں
تاجِ مہتاب سے کچھ اور بھی روشن ہے جبیں
پیرہن، چاند کی کرنوں کا چمکتا ریشم
اتنا شفاف کہ بادل کا کہیں نام نہیں
ہنستی ہے دیکھ کے منہ چاند کے آئینے میں
پڑتی ہے سانولے مکھڑے پہ تبسم کی پھوار
ایسا لگتا ہے کہ نوعمر ہے، دوشیزہ ہے
ابھی آنے کو ہے بھر پور جوانی کی بہار

دھان کے کھیت، وہ اِستادہ ثمربار درخت
جھوم اٹھتے ہیں جب آتے ہیں ہوا کے جھونکے
لے کے آغوش میں جب ناچتی ہے بادِ خزاں
پھول ہی پھول برس جاتے ہیں پیڑوں کے تلے
جھر جھری لیتی ہیں آہستہ کنول کی جھیلیں
کلیاں منہ چوم کے کلیوں کا جھجک جاتی ہیں
عشق کے ماروں کو آتا ہے محبت کا خیال
خواہشیں دل کے کٹوروں سے چھلک جاتی ہیں

اس خزاں میں بھی مگر تو ہے بہاروں کی بہار
نوجواں جسم سے گل رنگ شگوفے پھوٹیں
پیار کے ہاتھ محبت سے سنواریں تجھ کو
کبھی ہونٹوں، کبھی مشتاق نگاہوں سے چھوئیں
مسکرائے ترے پیروں کی حنا، اور مہکے

زعفراں جسم کی، سینے کا سنہرا صندل
دل پہ عشاق کے زلفوں کی گھٹائیں برسیں
ڈھونڈھیں خود بھونروں کو ہنستی ہوئی آنکھوں کے کنول

(4)

جا چکی فصل خزاں، فصل زمستاں آئی
کوئی تنہا سی کلی شاخ پہ نم دیدہ ہے
اپنے دامن میں لیے اپنے سنہرے موتی
خوشۂ گندم نو کھیت میں بالیدہ ہے
غم نہ کر جانِ جہاں، لٹ گئی گر دولتِ گل
سخت جاں پھول کوئی اب بھی نظر آتا ہے
برف و باراں سے بھی بجھتا نہیں شعلہ اُس کا
سرد اور تیز ہواؤں میں بھی لہراتا ہے

برف آلودہ ہواؤں میں لرزتی بیلیں
یاد آتی ہے انھیں موسمِ تابستاں کی
کچھ تو مل جاتی ہے یادوں سے حرارت دل کو
جستجو درد کو ہے کھوئے ہوئے درماں کی
زندگی کی وہ تڑپ ہے کہ ابھی زندہ ہیں
پھر بھی پیلی سی نظر آتی ہیں کمھلائی ہوئی
جس طرح ہجر کی ماری ہو سہاگن کوئی
جیسے دوشیزہ کوئی عشق کی ترسائی ہوئی

کاش! یہ فصل زمستاں ہو تری فصلِ امید
ہر گھڑی آئے مسرت کے فسانے لے کر

منتظر رہتی ہیں جس کے لیے دوشیزائیں
روز و شب آئیں وہ راحت کے خزانے لے کر
گاؤں میں شور ہے، ہنگامہ ہے، آوازیں ہیں
پک چلے کھیت تو کھلیان میں آتا ہے اناج
دور آکاش پہ اڑتے ہوئے بگلوں کی قطار
حسن کو تیرے ملے عشق و محبت کا خراج

(5)

اے مری جاں، مجھے اذن سخن آرائی دے
نو بہار آئی ہے، نغموں پہ بہار آجائے
نو بہاران گل اندام کے دل ہنسنے لگے
ان کی بے تاب تمنا کو قرار آ جائے
بھر گئی ناج کے ڈھیروں سے زمیں کی گودی
بڑھ گئی اور بھی ہر سینے کی شوق انگیزی
دور سے آتی ہے سارس کے کلیجے کی پکار
خوابوں میں ہوتی ہے، جذبات کی رنگ آمیزی

فصل یہ وہ ہے کہ خوش ہوتے ہیں سب مل جل کر
جمع ہو جاتے ہیں جب جلتی ہوئی آگ کے پاس
گھر سے باہر جو نکلتے ہیں تو سورج کے لیے
سردی جسم بڑھا دیتی ہے کچھ دھوپ کی پیاس
زیب تن اطلس و پشمینہ و سنجاب و سمور
اب جو چلتی ہیں چلیں سرد ہوائیں ہر سو
کھڑکیاں بند ہیں اور لپٹی ہوئی ہے تن سے
بھینی بھینی کسی دوشیزہ بدن کی خوشبو

نو بہاروں کے یہ دن تجھ کو کریں آسودہ
رنگ عارض سے ترے حسن کی ہو گل پوشی
خوش کرے عشق کی گستاخ نگاہی تجھ کو
تجھ کو سرشار کرے لذتِ ہم آغوشی
نیشکر رس کی لطافت سے دہن کو بھر دے
لب شیریں میں ہو چاول کے نوالوں کی مٹھاس
تیری ہستی سے رہے دور بہت درد فراق
تیری قسمت میں نہ ہو ہجر کی راتوں کا ہراس

(6)

آخرش موسم گل، ویروسنت آ ہی گیا
اپنے ہاتھوں میں لیے عشق کی رنگین کمان
کالے بھونروں کی قطاروں کی لچکتی ڈوری
آم کے بور کے تیر آتے ہیں یا پریم کے بان
چھیدتے ہیں یہ مرے دل کو، ترے سینے کو
ہم تو اے چند روزن عشق کے متوالے ہیں
ہم نے کب عشق کے دیوتا سے کیا ہے انکار
ہم نے کیا شوق کے پیغام کبھی ٹالے ہیں
جوشِ گل یہ ہے کہ شاخوں کی جھکی ہے گردن
اور ہوا چلتی ہے مہکی ہوئی اترائی ہوئی
جھیلیں ہیں سرخ کٹوروں سے کنول کے روشن
عورتیں عشق کی کرنوں سے ہیں گدرائی ہوئی
ان سب، نرم، رواں، شام حسین و شاداب
دل کے لے لینے کا انداز انھیں آتا ہے

جو بھی اس فصل میں بالیدہ و روئیدہ ہے
بوئے گل، رنگِ بہاراں میں بدل جاتا ہے

بیلا پھولا ہے کہ جلتے ہیں خیاباں میں چراغ
نور کا کنج نظر آتا ہے مدھ بن جیسے
جس طرح عشق میں ہنستی ہے حسینہ کوئی
جگمگا اٹھتے ہیں رخساروں کے گلشن جیسے
زاہد خشک کی بھی خبر نہیں ہے کہ رواں
ہر طرف حسن کی اور عشق کی تنویریں ہیں
نوجواں سینوں میں جذبات ہیں یا آویزاں
وصل کے خوابوں کی ہنستی ہوئی تصویریں ہیں
فصلِ گل آئی ہے یا فصلِ وصال آئی ہے
ایک معشوقۂ خورشید جمال آئی ہے

کتنے دل کش ہیں مرے ملک کے موسم، ان میں
حسن کی بات کریں عشق پہ اصرار کریں
نورِ محبوب سے روشن کریں آنکھوں کے چراغ
پھول کی طرح سے ذکرِ لب و رخسار کریں
مصحفِ حق کی طرح کھولیں کتابِ دل کو
جس میں جنگ اور جدل کا کوئی افسانہ نہیں
فصلِ گل، فصلِ خزاں، فصلِ زمستاں ہے مگر
موسمِ جنگ نہیں، موسمِ ویرانہ نہیں

12/اکتوبر 1965

# حرفِ آخر

مرگِ مجنوں پہ عقل گم ہے میر
کیا دِوانے نے موت پائی ہے

یہ کتاب آخر اکتوبر 65 میں تیار تھی اور میری خواہش تھی کہ وسط نومبر تک شائع ہو جائے۔ لیکن کسی وجہ سے تاخیر ہوگئی۔ اب ایسا معلوم ہوتا ہے کہ یہ تاخیر اس حرف آخر کے لیے ہوئی تھی جس کے بغیر شاید یہ کتاب نامکمل رہ جاتی۔

جب میں نے 2 رجنوری 66 کو شام کے سات بجے شاستری جی کو اپنی نظم 'کون دشمن ہے' دوسری بار سنائی تو مجھے یہ گمان بھی نہ تھا کہ یہ ان کی زندگی کی آخری نظم ہوگی۔ اس وقت میرے دل سے تاشقند ملاقات کی کامیابی کے لیے دعائیں نکل رہی تھیں اور 10 رجنوری کی رات کو امید وبیم کی بہت سی منزلوں سے گزرنے کے بعد میں نے دلّی کے بہت سے ادیبوں اور شاعروں کے ساتھ معاہدۂ تاشقند کا جشن منایا۔ لیکن 11 رجنوری کی صبح یہ معلوم ہوا کہ پردہ گرنے سے پہلے اس المیے کا آخری سین باقی تھا جس نے پاک ہند جنگ کی شکل اختیار کی تھی اور معاہدۂ تاشقند پر ختم ہو رہا تھا۔ شاستری جی نے جان دے کر اس معاہدے پر اپنے خون کی مہر لگادی ہے۔

بنا کردند خوش رسمے بہ خاک وخون غلطیدن
خدا رحمت کند ایں عاشقان پاک طینت را

# تاشقند کی شام

مناؤ جشن محبت کہ خوں کی بو نہ رہی
برس کے کھل گئے بارود کے سیہ بادل
بجھی بجھی سی ہے جنگوں کی آخری بجلی
مہک رہی ہے گلابوں سے تاشقند کی شام

جگاؤ گیسوئے جاناں کی عنبریں راتیں
جلاؤ ساعدِ سیمیں کی شمع کافوری
طویل بوسوں کے گل رنگ جام چھلکاؤ

یہ سرخ جام ہے خوبانِ تاشقند کے نام
یہ سبز جام ہے لاہور کے حسینوں کا
سفید جام ہے دلّی کے دلبروں کے لیے
گھلا ہے جس میں محبت کے آفتاب کا رنگ

کھلی ہوئی ہے اُفق پر شفق تبسّم کی
نسیم شوق چلی مہرباں تکلّم کی
لبوں کی شعلہ فشانی ہے شبنم افشانی
اسی میں صبح تمنا نہا کے نکھرے گی

کسی کی زلف نہ اب شام غم میں بکھرے گی
جوان خوف کی وادی سے اب نہ گزریں گے
جیالے موت کے ساحل پہ اب نہ اتریں گے
بھری نہ جائے گی اب خاک خوں سے مانگ کبھی
ملے گی ماں کو نہ مرگ پسر کی 'خوش خبری'
کوئی نہ دے گا یتیموں کو اب 'مبارک باد'

کھلیں گے پھول بہت سرحد تمنا پر
خبر نہ ہوگی یہ نرگس ہے کس کی آنکھوں کی
یہ گل ہے کس کی جبیں، کس کا لب ہے یہ لالہ
یہ شاخ کس کے جواں بازوؤں کی انگڑائی

بس اتنا ہوگا، یہ دھرتی ہے شہہ سواروں کی
جہان حسن کے گم نام تاجداروں کی
یہ سرزمیں ہے محبت کے خواستگاروں کی
جو گل پہ مرتے تھے شبنم سے پیار کرتے تھے

خدا کرے کہ یہ شبنم یوں ہی برستی رہے
زمیں ہمیشہ لہو کے لیے ترستی رہے

نئی دلّی
10/جنوری1966

# اُسے نہ ڈھونڈھو

اسے نہ ڈھونڈھو
اسے نہ ڈھونڈھو کہ وہ کہیں بھی نہیں ملے گا
ابھی یہاں تھا، ابھی وہاں ہے
وہاں جہاں سے کبھی کسی کی
خبر ملی ہے نہ مل سکے گی
وہ ایک تازہ ہوا کا جھونکا تھا، ایک تازہ ہوا کا جھونکا
جو زیست کے گلشنِ تمنا
کو رنگ و بوئے بہار دے کر
گزر گیا ہے
کبھی نہ کہنا وہ مر گیا ہے

نئی دہلی — 11رجنوری1966

❊❊❊❊❊❊❊

# امانتِ غم

وہ جب تلک تھا افق پر، ہمیں خیال نہ تھا
کہ روشنی کی کرن بھی ہے اس اندھیرے میں
یہ نفرتوں کا اندھیرا جو دل کا دشمن ہے

ہزاروں لاکھوں ستارے طلوع ہوتے ہیں
سیاہ رات کے سینے پہ تیرنے کے لیے
اور اس کے بعد وہ سیلابِ صبح میں جاکر
جو ڈوبتے ہیں تو ان کا پتہ نہیں چلتا
مگر یہ ننھا ستارہ، یہ نور کا نقطہ
جو دل نگار بھی تھا اور بے قرار بھی تھا
غروب ہوکے جو چمکا تو آفتاب بنا
غریب و عاجز و مسکین و بے زر و نادار
وہ انکسار میں ڈوبا خلوص کا پیکر
جسے ملی تھی شرافت دکھے ہوئے دل کی
نہ جاہ و حشمتِ حاکم نہ دولتِ دنیا
عطا ہوا تھا اُسے صرف مفلسی کا غرور
وہ ایک اشک کا قطرہ تھا، اس کا سرمایہ
بس ایک دردِ محبت، بس ایک دولتِ غم

مگر اس کا آخری تحفہ امانتِ غم ہے
یہ بار اٹھے گا اسی عجز و انکسار کے ساتھ

امانتِ غمِ انساں، امانتِ غمِ دل
یہ اک چراغ ہے قندیلِ مہ و مہر کی طرح
جو یہ نہ ہو تو زمانے میں روشنی کیوں ہو

یہ ایک پھول ہے جو زخم کے گلستاں میں
کھلا، نہایا، شہیدوں کے خوں کی بارش میں
پلا خواہشِ امن و اماں کی شبنم میں

یہ تاشقند کے سینے کا سرخ پھول بھی ہے
اسی کو کہتے ہیں لاہور کی جبیں کا گلاب
مہک رہا ہے جو دلّی کے اب گریباں میں

اٹھو کہ جشنِ دل و جاں منایا جائے گا
ہر اک چمن میں یہی گل کھلایا جائے گا
یہ گل جو دردِ محبت، امانتِ غم ہے
یہ گل جو شوخ بھی، خوں گشتہ بھی، ملول بھی ہے
خدائے عشق بھی ہے، امن کا رسول بھی ہے

12 جنوری 966

☆☆☆☆☆☆☆☆

کم ظرفیِ گفتار ہے دُشنام طرازی
تہذیب تو شائستگیِ دیدۂ تر ہے

# لہو پکارتا ہے

## 1968

* اس مجموعہ کا آخری ایڈیشن 1995 میں شائع ہوا۔ جس میں بعد کی تخلیقات بھی شامل کر لی گئیں۔

یہ وہ صدا ہے جسے قتل کر نہیں سکتے

" Cry aloud ,spare not. lift up thy voice like a trumpet.. . "

[ ISAIAH I viii : i ]

# حرف اول

دستور حکومت کے بنتے ہیں بگڑتے ہیں
شاعر کا مگر نغمہ، ہے نغمۂ لافانی
اس نغمے سے روشن ہے مستقبلِ انسانی
اس نغمے میں پنہاں ہے جمہور کی سلطانی

# ایک شعر

سینے میں حرارت ہے افسونِ تمنا سے
امروز مرا روشن رنگِ رخِ فردا سے

# لہو پکارتا ہے

لہو پکارتا ہے
ہر طرف پکارتا ہے
سحر ہو، شام ہو، خاموشی ہو کہ ہنگامہ
جلوسِ غم ہو کہ بزمِ نشاط آرائی
لہو پکارتا ہے

لہو پکارتا ہے جیسے خشک صحرا میں
پکارا کرتے تھے پیغمبرانِ اسرائیل

زمیں کے سینے سے اور آستین قاتل سے
گلوئے کشتہ سے بے حس زبانِ خنجر سے
صدا لپکتی ہے ہر سمت حرفِ حق کی طرح
مگر وہ کان جو بہرے ہیں سن نہیں سکتے
مگر وہ قلب جو سنگیں ہیں ہل نہیں سکتے
کہ ان میں اہلِ ہوس کی صدا کا سیسہ ہے
وہ جھکتے رہتے ہیں پائے اقتدار کی سمت

وہ سنتے رہتے ہیں بس حکمِ حاکمانِ جہاں
طواف کرتے ہیں اربابِ گیرودار کے گرد

مگر لہو تو ہے بیباک و سرکش و چالاک
یہ شعلہ مے کے پیالے میں جاگ اٹھتا ہے
لباسِ اطلس و دیبا میں سرسراتا ہے
یہ دامنوں کو پکڑتا ہے شاہراہوں میں
کھڑا ہوا نظر آتا ہے دادگاہوں میں
زمیں سمیٹ نہ پائے گی اس کو بانہوں میں
چھلک رہے ہیں سمندر سرک رہے ہیں پہاڑ
لہو پکار رہا ہے، لہو پکارے گا
یہ وہ صدا ہے جسے قتل کر نہیں سکتے

مارچ 1967

# گفتگو

(ہند پاک دوستی کے نام)

گفتگو بند نہ ہو
بات سے بات چلے
صبح تک شامِ ملاقات چلے
ہم پہ ہنستی ہوئی تاروں بھری یہ رات چلے

ہوں جو الفاظ کے ہاتھوں میں ہیں سنگِ دشنام
طنز چھلکائے تو چھلکایا کرے زہر کے جام
تیکھی نظریں ہوں ترش ابروئے خمدار رہیں
بن پڑے جیسے بھی دل سینوں میں بیدار رہیں
بے بسی حرف کو زنجیر بہ پا کر نہ سکے
کوئی قاتل ہو مگر قتلِ نوا کر نہ سکے

صبح تک ڈھل کے کوئی حرفِ وفا آئے گا
عشق آئے گا بصد لغزشِ پا آئے گا
نظریں جھک جائیں گی، دل دھڑکیں گے لب کانپیں گے

خامشی بوسۂ لب بن کے مہک جائے گی
صرف غنچوں کے چٹکنے کی صدا آئے گی

اور پھر حرف ونوا کی نہ ضرورت ہوگی
چشم وابرو کے اشاروں میں محبت ہوگی
نفرت اٹھ جائے گی، مہمان مروّت ہوگی

ہاتھ میں ہاتھ لیے سارا جہاں ساتھ لیے
تحفۂ درد لیے پیار کی سوغات لیے
ریگزاروں سے عداوت کے گزر جائیں گے
خوں کے دریاؤں سے ہم پار اتر جائیں گے

گفتگو بند نہ ہو
بات سے بات چلے
صبح تک شامِ ملاقات چلے
ہم پہ ہنستی ہوئی تاروں بھری یہ رات چلے

اگست 1966

# نظم

انگلیاں بادِ صبا کی بھی لہو سے تر ہیں
چاک ہوتے ہوئے دیکھا ہے چمن کا سینہ
تارِ پیراہنِ گل اڑتے ہوئے دیکھا ہے

اب نہ صیاد سے شکوہ ہے نہ گل چیں سے گلہ
بلبلیں خود ہی رجز خواں ہیں گلستاں کے خلاف
قمریاں شاخِ صنوبر کی ہوئی ہیں دشمن
اب طرفدارِ چمن کوئی نہیں ہے شاید

کوئی بتلاؤ کہ اس دورِ سیہ وحشت میں
حسنِ معصوم و دل آرا کی ادا کیا ہوگی
عشق برباد کے آدابِ جنوں کیا ہوں گے

1966

# نظم

وہ شاخِ غم جسے کہتے ہیں دل اسی پہ کہیں
کھلا ہے میری محبت تری بہار کا پھول
کبھی یہ زخم بنا ہے کبھی تبسم لب
جو زخم ہے وہ امانت ہے میرے سینے میں
یہ لعل ناب کسی کو دکھا نہیں سکتا
مگر تبسمِ لب صبح کی کرن کی طرح
چھپانا لاکھ میں چاہوں چھپا نہیں سکتا
جہاں میں بانٹ رہا ہوں یہ دولت بیدار
مری بہار کا غنچہ تری بہار کا پھول

1966

# قطعہ

اب کسی کو بھی نہیں حوصلۂ تلخیِ جام
خاک پر بکھرے ہیں ٹوٹے ہوئے شیشوں کے نجوم
واعظِ شہر کو مے خواروں نے مانا ہے امام
خانقاہوں میں ہے رندانِ بلاکش کا ہجوم

1966

# آرزوئے تشنہ لبی

خشکیِ لب ہے نہ اب دیدۂ تر باقی ہے
جانے کیا ہو گئے وہ عہدِ گزشتہ کے رفیق
وقت نے چھین لیا بھوک کا فاقوں کا غرور

وہ جو اٹھے تھے زمانے کو بدلنے کے لیے
ایسے بدلے ہیں کہ حیراں ہیں نگاہیں سب کی
زیرِ پا مخملِ آسودہ خرامی کا ہے فرش
زیبِ تن خلعتِ پشمینۂ دریوزہ گری
دل ہے یا تمغۂ خوں گشتۂ آوازِ ضمیر

جن میں تلوار تھی ان ہاتھوں میں اب ساغر ہیں
جن میں شفقت تھی ان آنکھوں میں رعونت اب ہے
اور ان سوکھے ہوئے ہونٹوں کو تر رکھتے ہیں
چند خیرات میں بخشی ہوئی مے کے جرعے
چند مانگے ہوئے، چھلکے ہوئے ٹوٹے ہوئے جام

دوستو جرأتِ شعلہ طلبی لے کے اٹھو
آج پھر آرزوئے تشنہ لبی لے کے اٹھو

1966

}{}{}{}{

# چار شعر

یہ بزمِ غیر ہے یاں دل کا ماجرا نہ کہو
سمجھنے والے نہیں، حرفِ آشنا نہ کہو

خوشی سے کب ہیں گرفتارِ الفتِ صیّاد
خدا کے واسطے اس جبر کو وفا نہ کہو

اٹھی ہے آتش و آہن کے گرم سینے سے
سمومِ دشتِ بلا ہے اسے صبا نہ کہو

بہت سیاہ ہیں راتیں، بہت اندھیرا ہے
کوئی بھی حرف بجز شعلۂ نوا نہ کہو

1966

}{}{}{}{

# دو شعر

شب ہجر صبح وصال ہے، ترا عکس جب بھی جگا لیا
تری یاد دل کا چراغ ہے، سر شام ہی سے جلا لیا

غم زندگانی تھا تلخ تر، غم عشق اس کو بنا لیا
یہ امانتِ غم دوست ہے اسے طاقِ دل میں سجا لیا

1966

}{}{}{}{

# غزل

فصلِ گل، فصلِ خزاں، جو بھی ہو خوش دل رہیے
کوئی موسم ہو، ہر اک رنگ میں کامل رہیے

موج و گرداب و تلاطم کا تقاضا ہے کچھ اور
رہیے محتاط تو بس تالبِ ساحل رہیے

دیکھتے رہیے کہ ہو جائے نہ کم شانِ جنوں
آئینہ بن کے خود اپنے ہی مقابل رہیے

ان کی نظروں کے سوا سب کی نگاہیں اٹھیں
محفلِ یار میں بھی زینتِ محفل رہیے

دل پہ ہر حال میں ہے صحبتِ ناجنس حرام
حیف صد حیف کہ ناجنسوں میں شامل رہیے

داغ سینے کا دہکتا رہے، جلتا رہے دل
رات باقی ہے جہاں تک مہِ کامل رہیے

جانیے دولتِ کونین کو بھی جنسِ حقیر
اور درِ یار پہ اک بوسے کے سائل رہیے

عاشقی شیوۂ رندانِ بلا کش ہے میاں
وجہِ شائستگیِ خنجرِ قاتل رہیے

1966

# تمھارا شہر

تمھارا شہر تمھارے بدن کی خوشبو سے
مہک رہا تھا، ہر اک بام تم سے روشن تھا
ہوا تمھاری طرح ہر روش پہ چلتی تھی
تمھارے ہونٹوں سے ہنستی تھیں نرم لب کلیاں
عطا ہوئی تھی سحر کو تمھاری سیم تنی
ملی تھی شام و شفق کو تمھاری گل بدنی

تمھارا نام تصور بھی تھا، تخیل بھی
یقیں بھی، شوق بھی، امید بھی، تمنا بھی
سجی تھی زلف جواں آرزو کے پھولوں سے
امیدوار تھے ہر سمت عاشقوں کے گروہ

مگر یہ کیا ہے کہ ہر کوچہ آج ویراں ہے
گلی گلی میں ہیں فولاد پا سیہ عفریت
چمن چمن میں سڑی لاش کا تعفن ہے
ہوائیں گرم ہیں، بارود کا اندھیرا ہے
خبر نہیں کہ یہاں سے کدھر کو جانا ہے

تمھارا شہر تمھارے بدن کی خوشبو کو
ترس رہا ہے، ہر اک بام تیرہ ساماں ہے
نہ روشنی ہے، نہ نکہت، نہ نغمہ ہے، نہ نوا
ہر اک روش پہ ہوا چل رہی ہے نوحہ کناں
سحر کی کل بدنی ہے لہو کا پیراہن
نہ شام ہے، نہ سحر، صرف اک سیاہ کفن
تمھارے شہر کی عریانیوں کو ڈھانپتا ہے

خبر نہیں کہ یہاں سے کدھر کو جانا ہے

وہ اک جلوس سا اک موڑ پر نظر آیا
کوئی عظیم جنازہ گزرنے والا ہے
ہوا میں نالہ و فریاد کی ہے کیفیت
ہر ایک آنکھ میں آنسو، ہر ایک ہونٹ پہ آہ
دلوں کا نوحۂ غم سسکیوں میں ڈھلتا ہے
وہ درد ہے کہ کوئی کھل کے رو نہیں سکتا

مگر جنازہ کہیں بھی نظر نہیں آتا
کفن فروش بھی ہیں، گورکن بھی ہیں لیکن
کوئی بتا نہیں سکتا کہ کس کی میت ہے
کوئی بتا نہیں سکتا کدھر گیا تابوت
کوئی بتا نہیں سکتا کہاں ہے قبرستان

چلو قریب سے دیکھیں یہ بدنصیب ہیں کون
کلرک ہیں جو ابھی دفتروں سے نکلے ہیں
تمام ایک سی شکلیں ہیں ہندسوں کی طرح
کسان ہیں جو ابھی کھیتیوں سے پلٹے ہیں
نکل کے آئے ہیں مزدور کارخانوں سے
اور ان کی پشت پہ افسردہ کھولیوں کی قطار
سروں پہ اڑتے دھوئیں کے سیاہ رنگ ملم
برہنہ بچوں کے رونے کی دردناک صدا

جلوسِ غم ہے جنازہ بدوش چلتا ہے
مگر جنازہ کدھر ہے نظر نہیں آتا
خبر نہیں کہ یہاں سے کدھر کو جانا ہے

1966

# پھول، چاند، پرچم

یہی ہے منزل
جہاں پہ ہم تھک کے آ گئے ہیں
اور ایک بے برگ و بار نخلِ مراد کے نیچے بیٹھے بیٹھے
تمازتِ آفتاب سے اپنا سر چھپانے کی آرزو میں
بہشت کی بات کر رہے ہیں
نہ موجِ کوثر، نہ شاخِ طوبیٰ
یہی ہے منزل جہاں سے ہر قافلہ بڑھے گا
نشاط کا، درد کا، جنوں کا
نشاط زخموں کا پھول ہے
درد چاند سینے کا، اور جنوں
دھجیوں کا پرچم

انھیں سے ہر قافلہ بنا ہے
انھیں سے ہر قافلہ بنے گا
یہ قافلہ ہو بہم تو انساں
نجات کے خواب دیکھ لے گا
بشارتِ زندگی سنے گا
صداقتِ دائمی کے چہرے کا حسن نظروں سے پی سکے گا
نہیں تو حیران اور پریشاں
کسی کے رحم و کرم پہ زندہ

فریبِ وعدہ کا زہر کھائے
وفائے وعدہ سے لو لگائے
بدن چرائے، جبیں جھکائے
حقیر کیڑوں کی طرح
انجانے اور بے رحم راستوں میں
زمیں کے سفاک دل درندوں
کے زیرِ پا رینگتا رہے گا

حکومتوں کا جلال، اہلِ حکم کی صولت
سیاہ کاروں کا زور، اہلِ ہوس کی دولت
خبیث روحوں، خبیث اعمال کی سیاست
وہ گندگی جس کا ظاہری روپ ہے نفاست
سبھی ہیں اس قافلے سے لرزاں
یہ قافلہ پھول، چاند، پرچم اٹھائے صدیوں سے چل رہا ہے
ہوس کے صحرا
جلال و صولت کے ریگزاروں سے
پابرہنہ گزر رہا ہے
سبھی کو اس قافلے میں ملنا ہے
(کوئی اس سے نہ بچ سکے گا)
کسی کو بانگِ درا کے مانند
کسی کو گردِ سفر کی صورت
کوئی نہیں ہے مفر کی صورت

1967

# لِدی تسے

(لدی تسے چیکوسلواکیہ کے ایک باغ امن کا نام ہے۔ جس میں ساری دنیا کے گلاب ہیں۔ وہاں پہلے اسی نام کا ایک گاؤں تھا جسے جرمن نازیوں نے جلا کر خاک کر دیا تھا۔ 1955ء میں یہ باغ بنا تھا۔)

گلاب کے پھول

خونِ ناحق کے ان گنت بے شمار قطرے
جسموں کی بجھی ہوئی آگ کے شرارے
گواہ ہیں ان سیہ دنوں کے
کہ جب جہاں میں
جوان ماؤں کی لوریاں قتل ہو رہی تھیں
کہ جب زمین پر
سیاہ فولاد جسم عفریت چل رہے تھے
ہوا میں بارود بن چکی تھیں
بجائے بلبل نغمہ خوانی کے گولیاں سنسنا رہی تھیں

یہاں

جہاں چاند بجھ چکے ہیں
ستارے راتوں کی نیلی آنکھوں سے
اشک بن کر ٹپک چکے ہیں
زمیں کی کوکھ جل چکی ہے

یہاں

نئے چاند اگ رہے ہیں
نئے ستارے زمین کی کوکھ سے نکل کر
گلاب بن کر مہک رہے ہیں

(2)

گلاب کے پھول۔

خون دل کے چراغ روشن
یہ ہند کی آرزو، یہ امریکہ کی تمنا
یہ روس کی خواہشوں کے رنگین خواب
تعبیر خواب انساں
یہ گل نئے عہد کی بشارت
یہ ننھے بچوں کی مسکراہٹ
زمین کے سینے میں کروٹیں لیتی کونپلوں کے پیام بر ہیں
یہ کارخانوں میں خون فولاد کی روانی
یہ امن عالم کے پاسباں ہیں
تمام رنگوں کے پیرہن ہیں
تمام خوشبو کی تتلیاں ہیں
مگر یہی پھول

ویت نامی مجاہدوں کے
جوان سینے پہ زخم بن کر دہک رہے ہیں
وہ زخم جو آفتاب تازہ کا نور لے کر
سیاہ بارود کے اندھیرے میں
بجلیاں بن کے گر رہے ہیں
گلاب کے پھول ہنس رہے ہیں

1967

٥ ٥ ٥ ٥ ٥ ٥ ٥ ٥

# ایک پرانی داستان

نگاہیں اٹھتی ہیں جس طرح تیر چلتے ہیں
فضا میں زہر ہے، جنبش لبوں کی قاتل ہے
سوال یہ ہے کہ یہ شخص بے قصور ہے کیوں
اسے ہجوم سے کاں میں نکال کر لاؤ
اسے ابھی سر بازار سنگسار کرو

یہ ظلم و جبر بھی ایک پیاس ہے جو صدیوں سے
بجھائی جاتی ہے انساں کے خون ناحق سے
کوئی حسین ہو، کوئی مسیح، یا سقراط
لہو کی پیاس انھیں ڈھونڈتی ہی رہتی ہے
زباں نکالے ہوئے، تیوریاں چڑھائے ہوئے

تمام اہلِ ہوس پارسا ہیں، منصف ہیں
جو بے قصور ہیں وہ عدل کے کٹہرے میں
گلیلیو کی طرح سے بلائے جاتے ہیں
بس اس خطا پہ کہ ہیں محرمِ رموزِ حیات

ہزار بار زمانے میں آئے ہیں یوسف
ہزار بار بکے ہیں وہ مصرِ عالم میں
برادروں نے شرافت کا بھیس بدلا ہے
خریدنے کو نکل آئی ہیں زلیخائیں
اور اس کے بعد وہی ان کی چاک دامانی
وہی فریبِ عدالت
وہی سلاسلِ زنداں
اور اس کے بعد وہی داستان طرازیِ شوق
حسنِ یوسف
عشقِ زلیخا
پاکیِ داماں
چاکِ گریباں

1967

# اب بھی روشن ہیں

اب بھی روشن ہیں وہی دستِ حنا آلودہ

ریگِ صحرا ہے نہ قدموں کے نشاں باقی ہیں
خشک اشکوں کی ندی، خون کی ٹھہری ہوئی دھار
بھولے بسرے ہوئے لمحات کے سوکھے ہوئے خار
ہاتھ اٹھائے ہوئے افلاک کی جانب اشجار
کامرانی ہی کی گنتی نہ ہزیمت کا شمار
صرف اک درد کا جنگل ہے فقط ہو کا دیار
جب گزرتی ہے مگر خوابوں سے ویرانے سے
اشک آلودہ تبسم کے چراغوں کی قطار
جگمگا اٹھتے ہیں گیسوئے صبا آلودہ

ٹولیاں آتی ہیں نوعمر تمناؤں کی
دشت بے رنگ خموشی میں مچاتی ہوئی شور
پھول ماتھے سے برستے ہیں نظر سے تارے
ایک اک گام پہ جادو کے محل بنتے ہیں
ندیاں بہتی ہیں آنچل سے ہوا چلتی ہے
پتیاں ہنستی ہیں اُڑتا ہے کرن کا سونا
ایسا لگتا ہے کہ بے رحم نہیں ہے دنیا
ایسا لگتا ہے کہ بے ظلم زمانے کے ہیں ہاتھ

بیوفائی بھی ہو جس طرح وفا آلودہ

اور پھر شاخوں سے تلواریں برس پڑتی ہیں
جبر جاگ اٹھتا ہے سفّا کی جواں ہوتی ہے
سائے جو سبز تھے پڑ جاتے ہیں پل بھر میں سیاہ
اور ہر موڑ پہ عفریتوں کا ہوتا ہے گماں
کوئی بھی راہ ہو مقتل کی طرف مڑتی ہے
دل میں خنجر کے اترنے کی صدا آتی ہے
تیرگی خوں کے اجالے میں نہا جاتی ہے
شامِ غم ہوتی ہے نمناک وضیا آلودہ

یہی مظلوموں کی جیت اور یہی ظالم کی شکست
کہ تمنائیں صلیبوں سے اتر آتی ہیں
اپنی قبروں سے نکلتی ہیں مسیحا بن کر
قتل گاہوں سے وہ اٹھتی ہیں دعاؤں کی طرح
دشت و دریا سے گزرتی ہیں ہواؤں کی طرح
مُہر جب لگتی ہے ہونٹوں پہ زباں پر تالے
قید جب ہوتی ہے سینے میں دلوں کی دھڑکن
روح چیخ اٹھتی ہے، ہلتے ہیں شجر اور حجر
خامشی ہوتی ہے کچھ اور نوا آلودہ

سرکشی ڈھونڈھتی ہے ذوق گنہگاری کو
خود سے شرمندہ نہیں اوروں سے شرمندہ نہیں
یہ مرا دل ہے کہ معصوم و خطا آلودہ

اپریل 1967

# شعور

مری رگوں میں چھلکتے ہوئے لہو کو سنو
ہزاروں لاکھوں ستاروں نے ساز چھیڑا ہے
ہر ایک بوند میں آفاق گنگناتے ہیں

یہ شرق و غرب، شمال و جنوب، پست و بلند
لہو میں غرق ہیں، اور شش جہات کا آہنگ
زمیں کی پینگ، طلوعِ نجوم، شمس و قمر
غروبِ شام، زوالِ شب و نمودِ سحر
تمام عالمِ رعنائی، بزمِ برنائی
کنول کی طرح کھلے ہیں لہو کی جھیلوں میں

ہے کائنات مرے دل کی دھڑکنوں میں اسیر
میں ایک ذرہ بساطِ نظامِ شمسی پر
میں ایک نقطہ سرِ کائنات علم و شعور
میں ایک قطرہ، انا البحر ہے صدا میری
میں کائنات میں تنہا ہوں آفتاب کی طرح
مرے لہو میں رواں وید بھی ہے قرآں بھی
شجر حجر بھی ہیں، صحرا بھی ہیں گلستاں بھی
کہ میں ہوں وارثِ تاریخ عصرِ انسانی

قدم قدم پہ جہنم، قدم قدم پہ بہشت

1967

# برہنہ فقیر

مری زندگی، تری زندگی
یہ جو ایک کہنہ لبادہ ہے
ہیں کشیدہ اس پہ ہزار گل
کوئی خون سے کوئی شعلے سے
کوئی اشک سے، کوئی آہ سے
کوئی خوف اور گناہ سے
کوئی اک تبسم زیرِ لب
کوئی حرف نیم نگاہ سے
کوئی کم ہے یاں نہ زیادہ ہے
مری زندگی، تری زندگی
یہ جو ایک کہنہ لبادہ ہے

عدم ایک برہنہ فقیر ہے
کہ لباس جس کا ہوائیں ہیں
کہ لباس جس کا دشائیں[1] ہیں
کبھی چاند کو وہ پہنتا ہے

---

1. دشائیں : سمتیں

کبھی ڈھانپتا ہے بدن کو وہ
نئے آفتاب کے نور سے
کبھی رنگ گل کے حریر سے
کبھی بوئے گل کے کتاں سے
مگر اس کے بعد بھی وہ فقیہ
یوں ہی گھومتا ہے برہنہ تن
کہ قبائے ظلمت و نور میں
کبھی چھپ سکا نہ وہ بے بدن

مری زندگی، تری زندگی
اسے دیتی ہے یا پیرہن
یہ وجود حامت سادہ ہے
جو برہنگی عدم کو روز
نیا اک لباس پہناتا ہے

19/اپریل 1967

# نفرتوں کی سپر

وہ نفرتوں کی سپر دل پہ رکھ کے آتے ہیں
وہ بدنصیب، وہ محرومِ دردِ انسانی
انھیں ملی ہی نہیں چشمِ تر کی تابانی
نہ ان کی بات میں لکنت نہ آنکھ میں نم ہے
نہ ذوقِ چاکِ گریباں نہ چاکِ دامانی
لبوں پہ نعرۂ وحشت، نگاہ برہم ہے
قلم ہے ہاتھ میں، تلوار دستِ قاتل میں
بس اپنا جوہرِ تیغِ زباں دکھاتے ہیں
بیانِ خون و کفن کر کے مسکراتے ہیں
انھیں خبر نہیں اک چیز زخمِ دل بھی ہے
کہ جس سے ہوتی ہے تہذیبِ نفسِ انسانی

1967

# قطعہ

(ویت نام)

سرفروشانِ محبت کے جنوں کے آگے
سرِ قاتل بھی، سرِ دار بھی خم ہوتا ہے
دستِ جلاد سے گر جاتی ہے شمشیرِ ستم
حرفِ حق سینۂ باطل پہ رقم ہوتا ہے

1968

٭٭٭٭٭

# دو شعر

مری جرعہ نوشیِ شوق ہے ترے لعلِ لب کے فشار سے
ترا حسن بادۂ ناب ہے جو کھنچا ہے رنگِ بہار سے

تجھے اے شبِ غمِ زندگی، وہ طلوعِ صبح نصیب ہو
جو دمک اٹھے رخِ دوست سے، جو مہک اٹھے لبِ یار سے

1969

٭٭٭٭٭

# غزل

شمع کا، مے کا، شفق زار کا، گلزار کا رنگ
سب میں اور سب سے جدا ہے لبِ دلدار کا رنگ

تہہ عارض جو فروزاں ہیں ہزاروں شمعیں
لطفِ اقرار ہے یا شوخیِ انکار کا رنگ

آئی مہکی ہوئی پھر جشنِ ملاقات کی رات
جام میں ڈھلنے لگا شام کے رخسار کا رنگ

عکسِ ساقی سے دمک اٹھی ہے ساغر کی جبیں
اور کچھ شوخ ہوا بادۂ گلنار کا رنگ

ان کے آنے کو چھپاؤں تو چھپاؤں کیسے
بدلا بدلا سا ہے میرے در و دیوار کا رنگ

اور ہے عشق کی نظروں کا نکھارا ہوا روپ
یوں تو شائستہ تھا پہلے بھی رخِ یار کا رنگ

موجِ طوفاں بھی ہے اور جوشِ بہاراں بھی ہے
کون سا دیکھو گے تم دیدۂ خوں بار کا رنگ

شفقِ صبح شہادت سے ہے تابندہ جبیں
ورنہ آلودۂ خوں تھا افقِ دار کا رنگ

آفتابوں کی طرح جاگی ہے انساں کی جوت
جگمگاتا ہے مرا پردۂ اسرار کا رنگ

وقت کی روح منور ہے نوائے میری
عصرِ نو میں ہے مری شوخیِ گفتار کا رنگ

24-25 فروری 1971

# جشنِ دلداری

**(love in)**

وقت ہے فرمان عشق و عاشقی جاری کریں
حسن والوں سے کہو سامانِ دلداری کریں
موجِ نے آنکھوں میں لہرائے بدن میں موجِ نور
عارضوں سے چاند سورج پر ضیا باری کریں
کھول کر بندِ قبا، بکھرا کے زلفِ عنبریں
عشقِ رسوا کی پذیرائی کی تیاری کریں
رہگزاروں میں جلائیں عشق و مستی کے چراغ
روح کے یخ بستہ گوشوں میں شرر باری کریں
آبنوسی، صندلی، سیمیں تنوں کے رقص سے
ساری دنیا پر جنوں کی کیفیت طاری کریں
جشنِ بیزاری منائیں ظلم و نخوت کے خلاف
قریہ قریہ شہر شہر آوارہ رفتاری کریں
لذتِ شہد و شکر ہو خوش بیانی میں مگر
اہلکارانِ ستم سے تلخ گفتاری کریں
تاجدارانِ جہاں کے سامنے سر خم نہ ہوں

نازنینانِ جہاں کی ناز برداری کریں
کج کلاہانِ جنوں کو دیں خراجِ تہنیت
بوسہ ہائے لب سے روح و دل پہ گلکاری کریں
دوسرا عقل و خرد ہے جب ریاکاری کا نام
کیوں نہ اس کو غرقِ سرمستی و سرشاری کریں
ساری دنیا جل رہی ہے نفرتوں کی آگ میں
عشق والے آئیں اب دنیا کی سرداری کریں
مشرق و مغرب میں جا کر خونِ انساں کیوں بہائیں
اس سے بہتر ہے کہ مہ خوانوں میں مے خواری کریں
فخر سے پہنیں گلے میں تمغۂ[1] آوارگی
اور یوں انسانیت کا جشنِ بیداری کریں

28/فروری 1971

1. صحیح لفظ تمغا ہے لیکن میں نے ضرورت شعری سے تمغہ لکھا ہے۔

# غزل

شاخ گل ہے کہ یہ تلوار کھنچی ہے یارو
باغ میں کیسی ہوا آج چلی ہے یارو

کون ہے خوف زدہ جشنِ سحر سے پوچھو
رات کی نبض تو اب چھوٹ چلی ہے یارو

تاک کے دل سے دلِ شیشہ و پیمانہ تک
ایک اک بوند میں سو شمع جلی ہے یارو

چوم لینا لب لعلیں کا ہے رندوں کو روا
رسم یہ بادۂ گلگوں سے چلی ہے یارو

صرف اک غنچہ سے شرمندہ ہے عالم کی بہار
دلِ خوں کشتہ کے ہونٹوں پہ ہنسی ہے یارو

وہ جو انگور کے خوشوں میں تھی مانندِ نجوم
ڈھل کے اب جام میں خورشید بنی ہے یارو

بوئے خوں آتی ہے، ملتا ہے بہاروں کا سراغ
جانے کس شوخ ستمگر کی گلی ہے یارو

یہ زمیں جس سے ہے ہم خاک نشینوں کا عروج
یہ زمیں چاند ستاروں میں گھری ہے یارو

جرعۂ تلخ بھی ہے، جام گوارا بھی ہے
زندگی جشنِ گہہ بادہ کشی ہے یارو

نئی دہلی۔ مارچ 1971

# دلنواز لہو

بہت حسین بہت دلنواز ہے یہ لہو
کشید تم نے کیا ہے جو قلبِ انساں سے
جو عارضوں سے چرایا، لبوں سے چھینا ہے
تمھارے جام میں ڈھلتا ہے موجِ مے بن کر
لطیف و نرم ہے ٹیگور کی زباں جیسے
جوان و شوخ، لچکتی ہیں بجلیاں جیسے
یہ ندیوں کی طرح سے زمیں پہ بہتا ہے
تمھارے پاؤں کے نیچے ہمیشہ رہتا ہے
خموش، جیسے یہ منہ میں زباں نہیں رکھتا

بہت حسین بہت دلنواز ہے یہ لہو
مگر اب اس سے ڈرو، انقلاب ہے یہ لہو
ہر ایک ظلم و ستم کا جواب ہے یہ لہو

نومبر 1971

# قطعہ

دورِ مے ختم ہوا، ختم ہوئی صحبتِ شب
ہو چکی صبح مگر رات ابھی باقی ہے
ایسا لگتا ہے کہ بچھڑی ہے ابھی مل کے نگاہ
ایسا لگتا ہے ملاقات ابھی باقی ہے

نومبر 1971

# کون سچ بولے گا

کون اس عہد میں سچ بولے گا
حرف آتے ہیں قطاروں میں سپاہی کی طرح
حکمِ شاہی کی طرح
اور پھر آتے ہیں کچھ اور بھی حرف
صف بہ صف دستِ جنوں باندھے ہوئے
ایک بھی حرف نہیں جو دل و جاں بن جائے
عہدِ حاضر کی زباں بن جائے
سچ تو اک درد ہے، اک زخم ہے، اک جرأت ہے
قید و زنداں بھی ہے سچ اور رسن و دار بھی ہے
لذتِ شوق بھی ہے اور ندرتِ اظہار بھی ہے
'کون ہوتا ہے حریفِ مے مردافگنِ عشق'

20 ستمبر 1972

# تین شعر

میری آنکھوں کی بہار، اے شہِ شمشاد قداں
میرے شعروں کی زباں، خسروِ شیریں دہناں
لب پہ روشن ہو کوئی حرفِ مروّت کی کرن
منہ سے بولو بھی تو اے بادشہِ کم سخناں
خاک سے روز نکلتا ہے شہیدوں کا جلوس
صورتِ لالہ و گل لشکرِ خونیں کفناں

1972

# دو شعر

اگر ہے ساقیِ میخانہ کو غرور بہت
ہمیں بھی اپنی جگہ ہے غرورِ تشنہ لبی
ہر ایک برگِ گل و لالہ مستِ جامِ بہار
ہر ایک قطرۂ شبنم ہے شیشۂ حلبی

مارچ 1973

## قطعہ

میری آنکھوں کو تیرے حسن نے ٹھنڈک بخشی
زندگی جلتی رہی دھوپ کی صورت جن میں
اب کبھی کھلتے ہیں فردوسِ بریں کے غنچے
اتر آتے ہیں کبھی چاند ستارے ان میں

13 اکتوبر 1973

}{}{}{}{

## دو شعر

اہلِ دل جب تری زلفوں کے جنوں تک آئے
ساحلِ درد سے اٹھے تو سکوں تک آئے

ایک بھی ان میں نہ تھا اس رخِ روشن کا جواب
کتنے خورشید میری تابشِ خوں تک آئے

مارچ 1973

}{}{}{}{

# دو شعر

زمانہ زیبِ تن پیراہنِ گل کرنے والا ہے
ہوائے صبحِ مشرق پھر نشاط انگیز ہے ساقی
وہ ساغر دے کہ دنیا شعلہ رنگ بن کے جاگ اٹھے
جہاں کی تیرگی کب سے شرر انگیز ہے ساقی

مارچ 1973

}{}{}{

# خون کا اجالا

## (چلی کے شہیدوں کی یاد میں)

چلی کے سرخ شہیدو سلام لو میرا
مرے عزیز نرودا[1] کے ہم وطن یارو
تمھارے خون کی سرخی میں وہ اجالا ہے
کہ قاتل اپنے اندھیرے میں چھپ نہیں سکتے
ہزار قتل کی سازش ہزار جنگ کے وار
تمھارا خون مگر رائیگاں نہ جائے گا
زمانہ جسم سے ملبوس زخم اتارے گا
حیات پیرہنِ گل کے انتظار میں ہے

12/ستمبر 1973

}{}{}{

---

1. پابلو نرودا چلی کا عظیم انقلابی شاعر

# سجاد ظہیر

اے صبا اک گل مری جانب سے اس دل کے لیے
جس کی دھڑکن میں چھپا تھا نغمہ عالم کا دل
دشمنوں کے واسطے جو آہن و فولاد تھا
دوستوں کے واسطے تھا قطرۂ شبنم کا دل

15 ستمبر 1973

# صلیب

اپنی زنجیروں کی جھنکار پہ میں اڑتا ہوں
اپنی ناکامی سے بڑھ جاتی ہے رفتار مری
آنسوؤں کے میں اجالے میں سفر کرتا ہوں
پاؤں کے چھالوں سے ہو جاتی ہیں راہیں روشن
دل میں انسانوں کے آتا ہوں اٹھائے ہوئے میں اپنی صلیب
اور پاتا ہوں عروج
اے خدا میری صلیب اور بلند اور بلند
میرے دکھ اور سوا اور سوا اور سوا

(ماخوذ)

اکتوبر 1973

# چار شعر

ہر طرف ہے ریگِ صحرا، ہر طرف ہے خارزار
خونِ دل دیجے تو شاید ہے کہ آ جائے بہار

رہبری میں جس کے سارے کارواں کو سونپ دیں
ہے کہاں، کوئی تو بتلاؤ، وہ مردِ اعتبار

یوں تو کہنے کے لیے آتی ہیں صبحیں روز روز
جانے کیوں کٹتی نہیں ہے پھر بھی شامِ انتظار

عارضِ گل ہے کہ محرومِ تجلی اب بھی ہے
کب سے رکھی ہے خزاں کے دل پہ تیغِ نو بہار

دسمبر 1973

# غزل

خرد والو، جنوں والوں کے ویرانوں میں آجاؤ
دلوں کے باغ ،زخموں کے گلستانوں میں آ جاؤ

یہ دامان و گریباں اب سلامت رہ نہیں سکتے
ابھی تک کچھ نہیں بگڑا ہے ،دیوانوں میں آ جاؤ

ستم کی تیغ خود دست ستم کو کاٹ دیتی ہے
ستم رانو تم اب اپنے عزا خانوں میں آجاؤ

یہ کب تک سرد لاشیں بے حسی کے برف خانوں میں
چراغِ درد سے روشن شبستانوں میں آجاؤ

یہ کب تک سیم و زر کے جنگلوں میں مشقِ خونخواری
یہ انسانوں کی بستی ہے اب انسانوں میں آجاؤ

کبھی شبنم کا قطرہ بن کے چمکو لالہ و گل پر
کبھی دریاؤں کی صورت بیابانوں میں آجاؤ

ہوا ہے سخت ،اب اشکوں کے پرچم اڑ نہیں سکتے
لہو کے سرخ پرچم لے کے میدانوں میں آ جاؤ

جراحت خانۂ دل ہے تلاش رنگ و نکہت میں
کہاں ہو اے گلستانو! گریبانوں میں آ جاؤ

زمانہ کر رہا ہے اہتمامِ جشنِ بیداری
گریباں چاک کر کے شعلہ دامانوں میں آ جاؤ

12 فروری 1974

❀❀❀❀❀❀❀❀

# نظم

بمبئی ہم پی رہے ہیں آج لے کر تیرا نام
لکھنؤ کی مے کے ساغر، بادۂ دہلی کے جام
صبح کی آنکھوں میں ہے صبحِ بنارس کا سرور
زلفِ شب میں خم بہ خم شامِ اودھ کا اہتمام
ہے ہوا میں وادیِ گنگا کی خوشبوئے بہار
ساحلِ موجِ عرب کو موجِ جمنا کا سلام
لے کے آئے ہیں مراٹھی کی زمیں کے واسطے
آسمانِ شوق سے اردو نوازوں کا پیام
مختلف ہوں سب کی طرزیں مختلف ہوں سب کے رنگ
پھر بھی سارے ہم نوا یانِ چمن ہوں ہم کلام

(یکم مئی 1974 آل انڈیا ریڈیو، بمبئی بزم اردو کا افتتاح)

# غزل

(نذرِ جوش)

وہ صبحِ گل، وہ جوشِ شامِ بادہ ہے کہاں ساقی
نہ جشنِ دل، نہ فصلِ روئے سادہ ہے یہاں ساقی

حیاتِ نو گریباں چاک پیراہن دریدہ ہے
سحر کی روشنی پہ خونِ دل کا ہے گماں ساقی

مذاقِ عاشقی اک جرم ہے ان کی سیاست میں
متاعِ دلبری ہے تیغ و شمشیر و سناں ساقی

تماشا بن گئی انساں کی خواری اس زمانے میں
جہاں سے اٹھ گیا رسمِ مروت کا نشاں ساقی

خبر ہے زخم کا ہے نام تمغائے وفا داری
سنا ہے تیغ ہے پیغمبرِ امن و اماں ساقی

یہ محفل ہے کہ مقتل گاہ ہے اہلِ تمنا کی
یہاں تو بات کرنے پر بھی کٹتی ہے زباں ساقی

اب ان کے ہاتھ میں ہے اہتمامِ بزمِ انسانی
جو کانٹوں کو اڑھاتے ہیں حریر و پرنیاں ساقی

جہاں فریاد ہے اہلِ ستم کا جی بہلتا ہے

وہاں پر کون سمجھے گا زبانِ بے زباں ساقی
ہوئی ہے تربیت دل کی جلالِ خاکساری سے
مری نظروں میں کیا ٹھہرے شکوہِ خسرواں ساقی
کوئی دیوانہ کوئی رند کیوں بڑھتا نہیں آگے
کہ خالی دیر سے ہے مسندِ پیرِ مغاں ساقی
یہ مانا گر زباں کھولی تو جاں سے ہاتھ دھونا ہے
یہ خاموشی تو لیکن روح و دل کا ہے زیاں ساقی
کہیں سے ڈھونڈھ لے انداز اگلی بیقراری کا
کہیں سے لے کے آ پہلا سا وہ قلبِ تپاں ساقی

7 مئی 1974

# دو شعر

درد دریا ہے ایک بہتا ہوا
جس کے ساحل بدلتے رہتے ہیں

وہی تلوار اور وہی مقتل
صرف قاتل بدلتے رہتے ہیں

1974

# غزل

اک صبح ہے جو ہوئی نہیں ہے
اک رات ہے جو کٹی نہیں ہے
مقتولوں کا قحط پڑ نہ جائے
قاتل کی کہیں کمی نہیں ہے
ویرانوں سے آ رہی ہے آواز
تخلیقِ جنوں رکی نہیں ہے
ہے اور ہی کاروبارِ مستی
جی لینا تو زندگی نہیں ہے
ساقی سے جو جام لے نہ بڑھ کر
وہ تشنگی تشنگی نہیں ہے
عاشق کشی و فریب کاری
یہ شیوۂ دلبری نہیں ہے
بھوکوں کی نگاہ میں ہے بجلی
یہ برق ابھی گری نہیں ہے
دل میں جو جلائی تھی کسی نے
وہ شمعِ طرب بجھی نہیں ہے
اک دھوپ سی ہے جو زیرِ مژگاں
وہ آنکھ ابھی اٹھی نہیں ہے
ہیں کام بہت ابھی کہ دنیا
شائستۂ آدمی نہیں ہے
ہر رنگ کے آ چکے ہیں فرعون
لیکن یہ جبیں جھکی نہیں ہے

ستمبر 1974

# شاعر

میں کہ ہوں اشک کا ایک موتی
درد کے نیلے رخسار پر
خونِ ناحق کی اک بوند
سفاک تلوار کی دھار پر
ایک بیتاب بوسہ
اُن لبوں پر جو بوسوں سے محروم ہیں
اک تبسم کی بیباک و روشن کرن
خنجروں کی چمک کے مقابل
ایک نعرہ ہوں میں
ایک پرچم ہوں میں
ایک سمندر کا بیساختہ قہقہہ
اور ان کے سوا
یعنی کچھ اور بھی
جس کو اک لفظ 'شاعر' نئی معنویت عطا کر رہا ہے
گیت کا روپ
نغمے کا پیکر

25/اکتوبر 1974

# غزل

صبح کے اجالے پر رات کا گماں کیوں ہے
جل رہی ہے کیا دنیا، چرخ پہ دھواں کیوں ہے

قطرہ ہائے شبنم ہیں یا لہو کی بوندیں ہیں
رنگ و نور کا دامن آج خونچکاں کیوں ہے

خم بھرے ہیں یا خالی کچھ پتا نہیں چلتا
آج وقت کا ساقی اتنا سرگراں کیوں ہے

خنجروں کی سازش پر کب تلک یہ خاموشی
روح کیوں ہے یخ بستہ، نغمہ بے زباں کیوں ہے

قافلے بھٹکتے ہیں منزل تمنا پر
عشق کیوں ہے سرگرداں، حسن بے نشاں کیوں ہے

راستہ نہیں چلتے صرف خاک اڑاتے ہیں
کارواں سے بھی آگے گرد کارواں کیوں ہے

کچھ کمی نہیں لیکن کوئی کچھ تو بتلاؤ
عشق اس ستم گر کا شوق کا زیاں کیوں ہے

تم تو گھر سے نکلے تھے جیتنے کو دل سب کا
تیغ ہاتھ میں کیوں ہے دوش پہ کماں کیوں ہے

اک جہاں میں شہرت ہے تم بڑے مسیحا ہو
پھر یہ شاہراہوں پر درد کی دکاں کیوں ہے

قتل کر کے آئے ہیں اور تن کے بیٹھے ہیں
پوچھتے ہیں حیرت سے، نالہ و فغاں کیوں ہے

فرش ہو کہ عرش اے دل یہ جبیں نہیں جھکتی
راہِ سرفروشی میں سنگِ آستاں کیوں ہے

یہ ہے بزمِ مے نوشی اس میں سب برابر ہیں
پھر حسابِ ساقی میں سود کیوں زیاں کیوں ہے

13/ فروری 1974

# غزل

سرد ہیں دل، آتشِ روئے نگاراں چاہیے
شعلہ رنگ بہار گل عذاراں چاہیے

منزلِ عشق و جنوں سے فاصلے ہیں سربکف
ان کٹھن راہوں میں لطفِ دستِ یاراں چاہیے

لٹ رہی ہے اور اٹھتی نہیں فصل خزاں
تیز تر اک اور تیغ نو بہاراں چاہیے

آج مے خانے میں سحرِ چشمِ ساقی کے لیے
التفاتِ چشمِ مستِ میگساراں چاہیے

اس دلِ وحشی کی آزادی کا کیا کیجئے علاج
اک کمند گیسوئے یزداں شکاراں چاہیے

نغمہ بن جاتا ہے نالہ ان کی بزمِ ناز میں
ان کو خوش رکھنے کو شورِ سوگواراں چاہیے

آسمانوں سے برستے ہیں زمیں پر ریگزار
آج پھر سردار رقصِ برق و باراں چاہیے

1974

٭٭٭٭٭

## نظم

تیرگی پھر خونِ انساں کی قبا پہنے ہوئے
دے رہی ہے صبحِ نو کا کم نگاہوں کو فریب

جنوری 1974

## نظم

درد کو روح کا آزار بتانے والو
یہ شرارہ ہے جو شعلے میں بدل سکتا ہے
اور چمکتی ہوئی تلوار میں ڈھل سکتا ہے

فروری 1974

## نظم

زندگانی ہے کہ شمشیرِ برہنہ جس کی
دھار پر چلتے ہیں ہم
اور ہر قطرۂ خوں کے دل میں
اپنے قدموں کے نشاں چھوڑتے ہیں
دور تک جاتا ہے قطروں کا جلوس
خوابِ گلرنگِ بہاراں کی ردا اوڑھے ہوئے

اکتوبر 1974

# غزل

جلا کے لحن کی قندیل نور بار چلو
لٹاتے دولتِ گل صورتِ بہار چلو

وصال و ہجر کی راہوں میں روشنی ہوگی
دلوں میں لے کے چراغِ جمالِ یار چلو

انھیں سے پھول کھلیں گے لہولہان ہیں پاؤں
ابھی تو دشتِ طلب میں بہت ہیں خار چلو

کہاں ہو میرے رفیقانِ حرف و صوت و صدا
سکوتِ شب ہے سیہ رنگ شعلہ بار چلو

امیدِ حور میں جنت پہ ریجھنے والو
بلا رہے ہیں حسینانِ روز گار چلو

عدو کے تیغِ ستم سے مقابلہ ہے ابھی
بھلا کے ظلم رفیقانِ کم عیار چلو

سوادِ منزلِ جاناں قریب ہے شاید
مثالِ بادِ صبا ہو کے بے قرار چلو

فروری 1975

# غزل

ستاروں کے پیام آئے، بہاروں کے سلام آئے
ہزاروں نامہ ہائے شوق اہلِ دل کے کام آئے

نہ جانے کتنی نظریں اس دلِ وحشی پہ پڑتی ہیں
ہر اک کو فکر ہے اس کی، یہ شاہیں زیرِ دام آئے

اسی امید میں بیتابیٔ جاں بڑھتی جاتی ہے
سکونِ دل جہاں ممکن ہو شاید وہ مقام آئے

ہماری تشنگی بجھتی نہیں شبنم کے قطروں سے
جسے ساقی گری کی شرم ہو آتش بجام آئے

کوئی شاید ہمارے داغِ دل کی طرح روشن ہو
ہزاروں آفتاب اس شوق میں بالائے بام آئے

انھیں راہوں میں شیخ و محتسب حائل رہے اکثر
انھیں راہوں میں حورانِ بہشتی کے خیام آئے

نگاہیں منتظر ہیں ایک خورشیدِ تمنا کی
ابھی تک جتنے مہرو ماہ آئے نا تمام آئے

یہ عالم لذتِ تخلیق کا ہے رقصِ لافانی
تصور خانۂ حیرت میں لاکھوں صبح و شام آئے

کوئی سردار کب تھا اس سے پہلے تیری محفل میں
بہت اہلِ سخن اٹھے، بہت اہلِ کلام آئے

فروری 1975

# غزل

آج کی شام تمنا کی ہے شام اے ساقی
چاند کی طرح چھلکتا ہوا جام اے ساقی
تیز تر گردشِ مے، تیز تر آہنگ نشاط
وقت کس درجہ ہے آہستہ خرام اے ساقی
زندگی کیا ہے بس اک گردش پیمانۂ رنگ
صبح بھی آئے گی آئی ہے جو شام اے ساقی
شاہراہوں پہ ہے پھر رقص میں رندوں کا ہجوم
آج مے خانے میں پینا ہے حرام اے ساقی
کیسے سمجھائیں کہ مے روح کو تر کرتی ہے
زاہد خشک تو ہے خام کا خام اے ساقی
جس میں شوخی بھی، شرارت بھی، رفاقت بھی ہو
ایک بار اور وہی طرزِ کلام اے ساقی

4/اگست1975

# صبحِ نوا

اگرچہ دشتِ خموشی بہت ہے تیرہ و تار
لباسِ نور میں صبحِ نوا بھی آئے گی
فرازِ شوق سے اترے گی آبجوئے کلام
لبوں پہ پہنے ہوئے رنگِ آرزو مندی
نہ جانے کتنے خداوند گانِ دورِ سیاہ
پناہ مانگیں گے لفظوں کی تیز کرنوں سے
سحر کی زد میں ہے شانِ شبِ خداوندی

یکم دسمبر 1975

# کارل مارکس

'نیست پیغمبر ولیکن در بغل دارد کتاب'
اقبال

وہ آگ مارکس کے سینے میں جو ہوئی روشن
وہ آگ سینۂ انساں میں آفتاب ہے آج
وہ آگ جنبشِ لب جنبشِ قلم بھی بنی
ہر ایک حرف نئے عہد کی کتاب ہے آج
زمانہ گیر و خود آگاہ و سرکش و بیباک
سرورِ نغمہ و سرمستیٔ شباب ہے آج
ہر ایک آنکھ میں رقصاں ہے کوئی منظر نو
ہر ایک دل میں کوئی دلنواز خواب ہے آج
وہ جلوہ جس کی تمنا تھی چشم آدم کو
وہ جلوہ چشم تمنا میں بے نقاب ہے آج

4 دسمبر 1975

# غزل

چشمِ بد مست کو پھر شیوۂ دلداری دے
دلِ آوارہ کو پیغامِ گرفتاری دے

عشق ہے سادہ و معصوم اسے اپنی طرح
جوہرِ تیغِ ادا، خنجرِ عیّاری دے

جو دُکھے دل ہیں انھیں دولتِ درماں ہو عطا
درد کے ہاتھ میں مت کاسۂ ناداری دے

کتنی فرسودہ ہے یہ جرم و سزا کی دنیا
سرکشی دل کو نیا ذوقِ گنہگاری دے

شاخِ گل کب سے ہے سینے میں چھپائے ہوئے گل
دیکھیں کب بادِ صبا حکمِ چمن کاری دے

اے مرے شعلۂ دل، شعلۂ شعر و دانش
رات آخر ہے اسے جشنِ شرر باری دے

چمن افسردہ ہے اے جانِ چمن روحِ بہار
گل کو بھی اپنے تبسم کی فسوں کاری دے

26 ستمبر 1976

# غزل

موسم رنگ بھی ہے، فصلِ خزاں بھی طاری
دیکھنا خون کے دھبے ہیں کہ ہے گلکاری

اس سے ہر طرح سے تذلیلِ بشر ہوتی ہے
باعثِ فخر نہیں مفلسی و ناداری

انقلابی ہو تو ہے فقر بھی توقیرِ حیات
ورنہ ہے عاجزی و بے کسی و عیّاری

شعلۂ گل کی بڑھا دیتی ہے لو بادِ بہار
تہہِ شبنم بھی دہک اٹھتی ہے اک چنگاری

لمحہ لمحہ ہے کہ ہے قافلۂ منزلِ نور
سرحدِ شب میں بھی فرمانِ سحر ہے جاری

تیغ و خنجر کو عطا کرتے ہیں لفظوں کی نیام
ظلم کی کرتے ہیں جب اہلِ ستم تیاری

حرفِ سردار میں پوشیدہ ہیں اسرارِ حیات
شعرِ سردار میں ہے سرکشی و سرشاری

شعرِ سردار میں ہے شعلۂ بیباک کا رنگ
حرفِ سردار میں حق گوئی و خوش گفتاری

دسمبر 1976

٭٭٭٭٭٭٭

# خاموشی

خامشی خواب بھی ہے
درد کا احساس بھی ہے
شمع بھی دل کے اندھیرے کے لیے
حرف
جو لب سے تراشے نہ گئے
ذائقہ جن کا زباں نے کبھی چکھا ہی نہیں
بلبلیں ہیں، جو تمنا کے چمن زاروں میں
رنگ آئے گا تو مصروف ترنم ہوں گی
آج وہ حرف ہیں بس حرف ہی حرف
ناتراشیدہ و نافرمودہ
روح کے تار پہ مضراب کا رقص
شوق کا نغمۂ بے صوت و صدا

4/دسمبر 1976

# چھوٹا سا دل

میں بازارِ مہر و وفا میں
چھوٹا سا دل بیچ رہا ہوں
اس کی قیمت سیم و زر میں
لعل و گہر میں ناممکن ہے
تاج شاہی، تخت رعونت
سب سستے ہیں، دل مہنگا ہے

کیا کوئی ایسا ہے جو ہونٹوں کی افسردہ شاموں کو
صبح تبسم عطا کرے
پیاس کے پیلے برگِ خزاں کو
فصلِ گل کی مے میں ڈبو دے
کیا کوئی ایسا ہے جو بھیگی آنکھوں سے
آنسو کے قطرے چُن لے
اور موتی کر کے واپس دے دے
جو خالی بے بس ہاتھوں کو
کام کی دولت عطا کرے
مایوسی کو کوئے تمنا میں لے جائے

شاہدِ فردا کے جلووں سے دل کی جوت جگائے
جو دھرتی کی بھوک مٹائے
اس کا آنچل گیہوں کے خوشوں سے بھر دے
انساں کی تفریق مٹا کر
انساں کی تخلیق کرے

کیا کوئی ایسا ہے جس کی پلکوں پر
میرے خوابوں کا یہ عکس ملے
میں اس کے قدموں میں اپنا قیمتی دل
چھوٹا سا دل
پھول کی صورت رکھ دوں گا

جنوری 1977

## تین شعر

مژدۂ شوق ابھی بادِ صبا لائی ہے
ارضِ مشرق میں نئے جشن کی تیاری ہے
لالہ و گل سے فروزاں ہے گزرگاہِ خیال
ہر طرف خونِ تمنا کی جو گلکاری ہے
قریہ و شہر میں جھنکاریں ہیں زنجیروں کی
اور ویرانوں میں تخلیقِ جنوں طاری ہے

1976

# غزل

بوئے گُل لائی ہے گلشن کی ہوا سے خوش ہیں
ہم اسیرانِ قفس بادِ صبا سے خوش ہیں

کل کو دیکھیں گے ترے حسنِ جفا کا انداز
آج کے دن تو ترے عہدِ وفا سے خوش ہیں

حکم تھا ان کی نگاہوں کا تقاضا دل کا
ہم خطا کر کے بہت اپنی خطا سے خوش ہیں

کاش صدیوں کی غلاظت کو بہا لے جائے
عصرِ نو ہم ترے سیلابِ بلا سے خوش ہیں

اپنی بے باک نگاہوں میں سمایا نہ کوئی
اور وہ ہیں کہ ہر اک تازہ خدا سے خوش ہیں

ہم کو آتا نہیں خوش رنگ بغاوت کا جلال
ورنہ سردار کے اندازِ نوا سے خوش ہیں

جولائی 1977

# غزل

وہی حسن یار میں ہے، وہی لالہ زار میں ہے
وہ جو کیفیت نشے کی ہے خوش گوار میں ہے

یہ چمن کی آرزو ہے کوئی لوٹ لے چمن کو
یہ تمام رنگ و نکہت ترے اختیار میں ہے

ترے ہاتھ کی بلندی میں فروغ کہکشاں ہے
یہ ہجومِ ماہ و انجم ترے انتظار میں ہے

بس اسی کو توڑنا ہے یہ جنونِ نفع خوری
یہی ایک سرد خنجر دلِ روزگار میں ہے

ابھی زندگی حسیں ہے ابھی ذکرِ موت کیسا
ابھی پھول کھل رہے ہیں ابھی تو کنار میں ہے

ابھی میکدہ جواں ہے ابھی موج میں ہے ساقی
ابھی جام رقص میں ہے ابھی مے بہار میں ہے

یہی میرا شعر و نغمہ یہی میری فکر و حکمت
جو سرور و دردمندی دلِ بے قرار میں ہے

اگست 1977

# اشعار

اس کی یاد میں دل سے آنکھ تک جو خوں آیا
تشنگی بجھانے کو جامِ لالہ گوں آیا
دشت جاگ اٹھے ہیں، رقص کرتے ہیں صحرا
موسم بہاراں ہے، جوش میں جنوں آیا
حرف شوق سنتے ہی حسن پر بہار آئی
لب سے اک کرن پھوٹی آنکھ میں فسوں آیا
کیا اسی کو کہتے ہیں کاروبار جمہوری
تیغ سر بلند آئی، صید سرنگوں آیا

اگست 1977

# تین شعر

مثالِ ماہ ردتِ نو پہن کر ہم نکلتے ہیں
مگر روشن ہیں اپنے دل کے سورج کے اجالے سے
یہ اپنا جام ہے، جامِ سفالیں ہو کہ چلو ہو
کبھی پیتے نہیں مانگے ہوئے زرّیں پیالے سے
نہیں اہل ہوس کی بھوک میں کوئی کمی ممکن
کبھی بھرتا نہیں ہے پیٹ سونے کے نوالے سے

1977

# ہندستان کے بھوکے اساتذہ

وہاں زمین کی سب نعمتیں میسر ہیں
یہاں پہ نجمِ مقدر کی ایک ضو بھی نہیں
ہمارے پاس ہے حرف وسخن کی دانائی
مگر نصیب میں چھوٹی سی نانِ جَو بھی نہیں

1977

# اشعار

ریگزاروں کو بہاروں کی بشارت دے کر
نغمۂ طائر نو بخش دیں خاموشی کو
زندگی تہنیت لالہ و گل سے ہو جواں
ایک پیغام ترو تازہ ہو مدہوشی کو
توڑ کر ظلم کے خنجر کو زمیں پر پھینکیں
کر دیں محروم ستم دستِ ستم کوشی کو
محتسب سیلِ مے ناب میں گم ہو جائے
اس طرح عام کریں ذوقِ قدح نوشی کو
آرزو سینۂ مایوس میں پھر پیدا ہو
رنگ خورشید ملے شب کی سیہ پوشی کو

یکم فروری 1978

# نظم

اب بھی ہے اسی جسم برہنہ کی نمائش
زخموں سے جسے پیرہنِ درد ملا ہے
ہونٹوں پہ وہی خشکیِ افلاس کے دھبے
چہروں پہ وہی بھوک کی ٹھہری ہوئی شامیں
بیگانہ ہیں جو روشنیِ رنگِ سحر سے
آنکھیں ہیں وہ انگارے جو اشکوں نے بجھائے
اور ہاتھ جو بیکاری و افلاس سے شل ہیں
ہے کوئی جو سوئے ہوئے شعلے کو جگا دے
ہے کوئی جو ہنگامہ فردا کو صدا دے

مارچ 1978

# اقبال کی آواز

فرعون و مسولینی و ہٹلر ہیں تہہِ خاک
اے اہلِ نظر نشۂ قوت ہے خطرناک
تاریخ کا یہ حرفِ صداقت ہے ازل سے
مظلوم بہت جلد ہی ہو جاتے ہیں بیباک
مجبور ہیں جو ہاتھ وہ مجبور نہیں ہیں
کر دیتے ہیں چنگیز و ہلاکو کی قبا چاک
یہ دیکھ کہ کس طرح بدلتا ہے زمانہ
ہو تو بھی اگر میری طرح صاحب ادراک
اقبال کا آہنگ ہے آہنگ بغاوت
جاگ اٹھتے ہیں آفاق دہل جاتے ہیں افلاک

مارچ 1978

# تین شعر

انقلاب کا پرچم جو اٹھا نہیں سکتے
کاسۂ گدائی ہے دست بے ہنر اُن کا
آرزو سے محرومی جان و دل کا نقصاں ہے
آہ نارسا ان کی نالہ بے اثر اُن کا
آسماں پہ اڑنے کا حوصلہ نہیں جن کو
نا مراد رہتا ہے ذوقِ بال و پر ان کا

28مارچ 1978

# غزل

فروغِ دیدہ و دل، لالۂ سحر کی طرح
اجالا بن کے رہو شمعِ رہگذر کی طرح

پیمبروں کی طرح سے جیو زمانے میں
پیامِ شوق بنو دولتِ ہنر کی طرح

یہ زندگی بھی کوئی زندگی ہے ہم نفسو
ستارہ بن کے جلے، بجھ گئے شرر کی طرح

ڈرا سکی نہ مجھے تیرگی زمانے کی
اندھیری رات سے گزرا ہوں میں قمر کی طرح

سمندروں کے تلاطم نے مجھ کو پالا ہے
چمک رہا ہوں اسی واسطے گہر کی طرح

تمام کوہ و تل و بحر و بر ہیں زیرِ نگیں
کھلا ہوا ہوں میں شاہیں کے بال و پر کی طرح

تمام دولتِ کونین ہے خراج اس کا
یہ دل نہیں کسی لوٹے ہوئے نگر کی طرح

گزر کے خار سے، غنچہ سے، گل سے، شبنم سے
میں شاخ وقت میں آیا ہوں اک ثمر کی طرح

میں دل میں تلخیٔ زہرابِ غم بھی رکھتا ہوں
نہ مثل شہد ہوں شیریں نہ میں شکر کی طرح

خزاں کے دستِ ستم نے مجھے چھوا ہے مگر
تمام شعلہ و شبنم ہوں کاشمر کی طرح

مری نوا میں ہے لطف و سرور صبحِ نشاط
ہر ایک شعر ہے رندوں کی شامِ تر کی طرح

یہ فاتحانہ غزل عصرِ نو کا ہے آہنگ
بلند و پست کو دیکھا ہے دیدہ ور کی طرح

یکم مئی 1978

# تہنیت

(اقبال نے 1930ء کے آس پاس افغانستان کو انقلاب کی دعوت دی تھی ۔

رومی بدلے، شامی بدلے ، بدلا ہندستان

تو بھی اے فرزند کہستاں، اپنی خودی پہچان

اپنی خودی پہچان

اے غافل افغان

میری یہ تہنیتی نظم اقبال کی زمیں میں ہے )

## نظم

تو جاگا اور جاگ اٹھے ہیں تیرے کوہستان
تیری خودی کی بیداری سے اونچی ہو گئی شان
اے بانکے افغان
ناچ اٹھا چشموں کے دل میں چاندی جیسا پانی
سخت چٹانیں پہنیں گی مخمل کی قبائیں دھانی
رقص کرے گا مست ہوا میں چشموں کا طوفان
اے بانکے افغان

گرم ہے سورج، کرنیں شعلہ اور ہوائیں تیز
موسم اچھا، پانی وافر، مٹی بھی زرخیز
وقت یہی ہے سینچ لیں اپنے کھیتوں کو دہقان
اے بانکے افغان
مشرق و مغرب حیرت میں ہیں، کیسے کایا پلٹی
پتھر کے سوکھے پیالوں سے کیسے صہبا چھلکی
دیکھ رہے ہیں پیار سے تجھ کو ہند اور پاکستان
اے بانکے افغان
تیرے کھیتوں تیرے باغوں پر ہے تیرا راج
تیرے سر پر تیری اپنی محنت کا ہے تاج
تیرے اس دہقانی پن پر سلطانی قربان
اے بانکے افغان
تو اقبال کے دل کی دعا ہے، میرے دل کا گیت
تیرے دیس کی جیت ہے سارے پورب دیس کی جیت
تیرا نغمہ سرکش و شیریں اونچی تیری تان
اے بانکے افغان

14 جون 1978

# غزل

گلشن کہو تم یا چمن، ہے اہلِ دل کی انجمن
صد بلبلِ شوریدہ سر، صد لالۂ خونی کفن
اس باغ میں آئی ہے اک محبوبۂ گل پیرہن
شیریں نوا، شیریں ادا، شیریں سخن، شیریں دہن
وہ گل بھی ہے، سورج بھی ہے، بجلی بھی ہے، بادل بھی ہے
دیکھا نہ تھا پہلے کبھی، ایسا حسیں بانکا سجن
پیکر کو اس کے، شعر کے پیکر میں، کیونکر ڈھالیے
خاموش ہیں حیران ہیں، سب شہر یارانِ سخن
پیشانیِ سیمیں ہے، یا صبحِ تخیل کی چمک
شائستگیِ فکر و فن، اس کے تبسم کی کرن
حور و پری شرمندہ ہے، وہ اس قدر تابندہ ہے
دیکھے سے نکھرے رنگ رخ، چھونے سے میلا ہو بدن
بس دور سے دیکھا کرو، اس شمعِ بزمِ ناز کو
وہ رونقِ کاشانۂ دل، حیرتِ صد انجمن
آؤ چلیں دیکھیں ذرا وہ جانِ عالم کون ہے
سردار کے شعروں میں ہے زلفِ معنبر کی شکن

23/جون 1978

# قطعہ

نئی کوہِ الوند کی ہوا میں
دماوند سے آرہی ہیں صدائیں
کہ ہر چیز فانی ہے، ہر چیز فانی
وہ ہو تاجِ کسریٰ کہ تختِ کیانی

ستمبر 1978

☆☆☆☆☆☆☆☆

# تین شعر

(کشمیر میں موسم سرما کی ایک شام)

موسم زمستاں پھر دولت بہاراں دے
خشک کوہساروں کو ذوق آبشاراں دے
حسن خزاں کو پھر حکم شعلہ باری ہو
سرد برف زاروں کو آتش چناراں دے
تہنیت گل تر کو حسن و رنگ و نکہت کی
خار و خس گلشن کے مرگ کم عیاراں دے

اکتوبر 1978

☆☆☆☆☆☆☆☆

---

(نوٹ: الوند اور دماوند ایران کے دو پہاڑ ہیں۔)

# کاسۂ سر

(تضمین بر اشعار خواجہ حافظ شیرازی)

جہانِ نالہ و فریاد ہو گیا برباد
کریں گے اہلِ جنوں تازہ بستیاں آباد
لرز رہے ہیں در و بام قصرِ پرویزی
جواں ہے ضربتِ پیہم سے تیشۂ فرہاد
نہ اس کا خوف ہی باقی ہے نہ طاب اُس کی
حقیر آتشِ نمرود و جنتِ شداد
تڑپ سے مرغِ چمن کی شکستہ حلقۂ دام
نہ زورِ پنجۂ گلچیں نہ بازوئے صیاد
بدل رہی ہے فضا نرم ہو گئی ہے ہوا
دلوں کے باغ میں چلنے لگی ہے بادِ مراد
ز انقلابِ زمانہ عجب مدار کہ چرخ
ازیں فسانہ ہزاراں ہزار دارد یاد
قدح بشرطِ ادب گیر زاں کہ ترکیبش
ز کاسۂ سرِ جمشید و بہمن ست و قباد

ستمبر 1978

# لمحۂ آفتاب

ہر طرف گولیوں کی بارش ہے
ہر طرف ہیں جلوس نعروں کے
خون آلودہ ہے فضا ساری
اڑ رہے ہیں بغاوتوں کے عقاب
پیاس سڑکوں پہ ہے برہنہ سر
بھوک آمادہ انتقام پہ ہے
شب کے حلقوں میں انتشار سا ہے
صبح کا نور بیقرار سا ہے
وقت کروٹ بدلنے والا ہے

لمحۂ آفتاب ہے اے دل
کیا کوئی سرفروش ہے ایسا
شعلۂ دل کو جو بلند کرے
اور پھر آفتاب کر کے اسے
ابنِ آدم کو تاج پہنا دے
زندگی نور میں نہا جائے

ستمبر 1978

# غزل

(ایرانی طلبہ کے نام)

خونِ ناحق سے ہوا رنگیں گلستانِ عجم
مشعلوں کی طرح روشن ہیں جوانانِ عجم

دل کی ٹھنڈک، روح کی گرمی، نگاہوں کا سرور
شعلہ و شبنم کے پیکر ہیں حسینانِ عجم

آندھیوں کا زمزمہ، بیتاب طوفانوں کا گیت
ہیں قیامت کے مغنّی نغمہ سنجانِ عجم

نوجواں سینوں پہ زخموں کے سنہری آفتاب
آخرش ظاہر ہوئے افکارِ پنہانِ عجم

سعدی و فردوسی و حافظ کی آتی ہے صدا
خود عجم کے درد میں پنہاں ہے درمانِ عجم

جبر کر سکتا ہے کب تک عزم و ہمت کو اسیر
کھلکھلا کر ہنس پڑی دیوارِ زندانِ عجم

خرمنِ ظلم وستم کا آخری لمحہ ہے یہ
بن چکی ہے برقِ زنجیرِ غلامانِ عجم

صاحبِ سرمایہ ہوں گے اب تہی دستانِ شرق
ہر شکستہ دل ہے اک لعلِ بدخشانِ عجم

سرد جن سینوں میں ہے احساسِ انسانی کی آگ
ہاں اُدھر بھی ایک شعلہ، شعلہ دستانِ عجم

مٹ رہا ہے فرقِ سلطان وگدا، میر وفقیر
نامۂ اعمال ہے اور محشرستانِ عجم

اے گلِ خونیں جگر چاکِ گریبانم نگر
چوں چراغِ لالہ سوزم در خیابانِ عجم

5رنومبر 1978

# افریقی لڑکی

اسے خبر نہیں خود
کس قدر حسین ہے وہ
اسے خبر نہیں کتنا حسین جسم ہے وہ
وہ آبنوس کا جسم
اسے خبر نہیں وہ کس طرح چمکتا ہے

اگر وہ رقص کرے ناریل کے سایوں میں
برہنہ رقص کرے سبز رنگ سایوں میں
اور اپنے عکس کو دریا میں ضوفگن دیکھے
تو اس کے ننھے سے دل کو یقین آجائے

مگر یہاں تو سڑک پر کوئی درخت نہیں
کہ اس زمین پہ پتھر کے پیڑ اُگتے ہیں
رکابیوں میں لرزتے غلیظ پانی میں
نہ آئینہ ہے، نہ عکس جبیں، نہ عکسِ بدن
نہ رخ کا نور، نہ سینے کا نوجوان چمن
بس اس میں ڈوب کے بجھ جاتی ہے ہر ایک کرن

27/اکتوبر 1978

* * * * * * * *

# حبشی میرا بھائی

ہاتھی دانت کے اس جنگل میں
اس کا کالا جسم
کالا بادل جو منڈلائے
کالی بجلی جو لہرائے
کالے اعضا کا دریا
جو سمٹے سکڑے اور بل کھائے
آگ برستی دھوپ میں چمکے
اور نیزہ بن جائے
طبل و ڈھل کی تال پہ ناچے
دشمن سے ٹکرائے
حبشی میرا بھائی
جنگل جنگل پھول چنے
بھائی کے پاؤں لال گلاب

27/اکتوبر 1978

(ماخوذ)

# یارانِ میکدہ

## 1954-55 کی نظمیں جو کسی کتاب میں شامل نہ ہوسکیں

# لوئی آراگوں

(فرانس کا عظیم شاعر اور ناول نگار جس نے گزشتہ جنگ عظیم
میں جرمن حملہ آوروں کے خلاف فرانسیسی ادیبوں کو منظم کیا۔)

اک تبسم شعلہ ہائے گل کو شرماتا ہوا
ایک شعلہ مسکراتا ، ناچتا گاتا ہوا

ایک نغمہ تیغ کی جھنکار میں ڈوبا ہوا
ایک نعرہ لوریوں کے راگ برساتا ہوا

ایک طوفاں بجلیوں کے بادباں کھولے ہوئے
ایک ساحل اپنے طوفانوں سے ٹکراتا ہوا

نو عروسِ رنگ و نکہت دل میں مانند گلاب
ارضِ پیرس کی طرح لیکن سراپا انقلاب

(پیرس)

}{}{}{}{

# پابلونرودا

(چلی، جنوبی امریکہ کا عظیم اور نہایت حسین شعروں کا شاعر جو ہسپانوی زبان کا سب سے بڑا شاعر سمجھا جاتا ہے اور وہ برسوں جلاوطن رہا اور موت اس کا پیچھا کرتی رہی۔ امریکہ کی نئی نسل کو اس نے بہت متاثر کیا۔ 1950 میں ہندستان آیا تھا۔ 1951 میں اس کو لینن انعام ملا۔ 1971 میں نوبل انعام۔ 1973 میں انتقال ہوا۔)

ارضِ مشرق کا کنول وادیِ مغرب کا گلاب
سوز میں ڈوبا ہوا تارِ رگِ جاں کا رباب

دشت و کہسار کا شہزادہ گلستاں کا امیر
محفلِ انجم و مہتاب میں انساں کا سفیر

شب تاریک کے سینے سے ابھرنے والا
چاند کی طرح سے تابندہ گزرنے والا

اس کو معلوم ہے دریا کی روانی کیا ہے
عشق کیا چیز ہے مے کیا ہے جوانی کیا ہے

آسماں پر کبھی بادل ہے کبھی تارا ہے
سطح گیتی پہ نئی صبح کا نظارا ہے

ایک شمشیر بھی، اک جام بھی، اک ساز بھی ہے
اور پرستانوں میں کھوئی ہوئی آواز بھی ہے

بارِ غم سب کا اٹھاتا ہے سفینے کی طرح
دلِ انساں میں دمکتا ہے نگینے کی طرح

دوست روٹی کا، چمکتے ہوئے پانی کا رفیق
اپنی نفرت میں عمیق، اپنی محبت میں شفیق

لرزہ گلچیوں پہ طاری ہے وہ گلشن ہے یہی
بجلیوں سے جو بنا ہے وہ نشیمن ہے یہی

(اسٹاک ہوم)

# جولیو کیوری

(فرانس کا مشہور عالم ایمی سائنس داں جو اپنی موت کے وقت
تک عالمی امن کانفرنس کا صدر تھا، نوبل انعام یافتہ)

جان کر راز ستاروں کی گزر گاہوں کا
آرزو خاک پہ مصروف سفر ہوتی ہے

فکرِ چالاک میں سورج کی شعائیں ہیں اسیر
زندگی کی شب تاریک سحر ہوتی ہے

وہ تجلی کہ جو ذرّوں میں نہاں تھی اب تک
صرف تعمیرِ گلستانِ ہنر ہوتی ہے

مے دانش کا نشہ رند کی اوقات پہ ہے
خیر ہوتی ہے حقیقت میں نہ شر ہوتی ہے

اپنا سر شر کے قدم پر نہ جھکایا تو نے
علم کو خیر کی تفسیر بنایا تو نے

(پیرس)

# پال روبسن (1)

(امریکہ کا مشہور عالم حبشی موسیقار جس کے نغموں نے
دوستوں اور دشمنوں سب سے خراجِ تحسین وصول کیا۔)

یہ پوچھا میں نے اک دن بلبلِ شاہینِ سطوت سے
تری آواز سے صیّاد پر کیوں خوف طاری ہے

محبت تیرا نغمہ، حسن انسانی نوا تیری
مگر سرمایہ داری کے جگر سے خون جاری ہے

جوابِ روبسن میں کیا کہوں کتنی بلاغت تھی
مرا صیاد ساری نوعِ انساں کا شکاری ہے

محبت ہو، حسیں نغمہ ہو، بچّوں کا تبسّم ہو
یہ جنگی دیوتاؤں کے لیے اک ضربِ کاری ہے

کلی کھلتی ہے جس دم خون ہو جاتا ہے کانٹوں کا
خزاں کے دل کو پیغامِ فنا بادِ بہاری ہے

(لندن)

# پال روبسن (2)

اپنے نغمے پہ کوئی ناز تجھے ہو کہ نہ ہو
نغمہ اس بات پہ نازاں ہے کہ ہے فن تیرا
دیس ہیں دور بہت دل تو بہت دور نہیں
میرے گلشن ہی کے پہلو میں ہے گلشن تیرا
تیرے نغمے نے لیا دہلی و شیراز کا دل
ماسکو تیرا ہے غرناطہ و لندن تیرا
اپنی پلکوں سے چُنا خونِ شہیدانِ حبش
کتنے گلزاروں سے گلرنگ ہے دامن تیرا
تیری آواز بلالِ حبشی کی ہے نوا
نور سے دل کے ترے حرف ہے روشن تیرا
بوئے گل رہ نہ سکی قیدِ گلستاں میں اسیر
سرحدیں توڑ کے سب پھیل گیا فن تیرا
کرشن کا گیت ہے، گوکل کی حسیں شام ہے تو
آ کلیجے سے لگا لیں کہ سیہ فام ہے تو

(ماسکو میں روبسن سے ملاقات اور اس کا نغمہ سننے کے بعد جنوری 1960)

# ایلیا اہرن برگ

(سوویت یونین کا بزرگ ادیب اور صحافی۔ بین الاقوامی امن تحریک کا رہنما)

جنگ کی بے یقین دنیا میں
امن کا اک یقینِ محکم ہے
اک ضعیف و نحیف پیکر میں
ساری انسانیت مجسم ہے
ایک محشر جلو میں ہے اس کی
انجمن ایک اس کی ذات میں ہے
اور ہر شخص یہ سمجھتا ہے
میری ہی بات اس کی بات میں ہے

(ماسکو)

# فیض احمد فیض

سوز ہے دل میں نگاہوں میں محبت کا گداز
ایک بجلی ہے کہ جو شعلہ فشاں ساز میں ہے
کاٹ تلوار کی شعروں کو عطا کرتی ہے
وہ کسک درد کی جو فیض کی آواز میں ہے

# کرشن چندر

کتنا خوش رنگ ہے یہ وادیِ کشمیر کا پھول
اپنے سینے میں لیے سارے جہاں کی خوشبو

بالِ جبریل کی جنبش ہے قلم کی رفتار
حرف ہے شعر ترا، حرف ترا ہے جادو

تتلیاں لفظوں کی صفحات پہ اڑتی دیکھیں
دوڑتے دیکھے تخیل کے سنہری آہو

سطریں اس طرح سے کرتی ہیں ترنم ریزی
عالمِ نغمہ میں جس طرح مغنّی کا گلو

ظلم وافلاس میں جاگا ہوا انساں کا ضمیر
تیرہ و تار فضاؤں میں ستاروں کا نمو

کبھی للکار کے سانچے میں ڈھلی ہے فریاد
بن کے شعلہ کبھی چمکا ہے غریبوں کا لہو

درد کو دل کے لیے شمع بنایا تو نے
روحِ انساں کو نیا خواب دکھایا تو نے

(بمبئی)

# بعد کی چند نظمیں و غزلیں

# کربلا

## (ایک رجز)

پھر العطش کی ہے صدا
جیسے رجز کا زمزمہ
پھر ریگِ صحرا پر رواں
یہ اہلِ دل کا کارواں
نہرِ فرات آتش بجاں
راوی و گنگا خونچکاں
کوئی یزیدِ وقت ہو
یا شمر ہو یا حُرملہ
اس کو خبر ہو یا نہ ہو
روزِ حساب آنے کو ہے
نزدیک ہے روزِ جزا
اے کربلا! اے کربلا!

(2)

گونگی نہیں ہے یہ زمیں
گونگا نہیں ہے آسماں
گونگے نہیں حرف و بیاں
گونگی اگر ہے مصلحت
زخموں کو ملتی ہے زباں

وہ خود جو رزقِ خاک تھا
تابندہ ہے پائندہ ہے
صدیوں کی سفاکی سہی
انسان اب بھی زندہ ہے
یہ جہل کی پرچھائیاں
لیتی ہوئی انگڑائیاں
زندہ ہے اعجازِ فغاں
ہر ذرّۂ پامال میں
دل کے دھڑکنے کی صدا
اے کربلا! اے کربلا!

(3)

عرشِ رعونت کے خدا
ارضِ ستم کے دیوتا
یہ ٹین اور لوہے کے بُت
یہ سیم و زر کے کبریا
بارود ہے جن کی قبا
راکٹ کی لے جن کی صدا
طوفانِ غم سے بے خبر
یہ کم سواد و کم ہنر
نکلے ہیں لے کر اسلحہ
لیکن جل اٹھا زیرِ پا
ریگِ نواحِ کاظمہ
ریگِ نواحِ نینویٰ
اندھی ہے مشرق کی ہوا
شعلہ فلسطیں کی فضا
اے کربلا! اے کربلا!

(4)

یہ مدرسے دانش کدے
علم و ہنر کے میکدے
ان میں کہاں سے آ گئے ؟
دانش وران بے یقیں
غیروں کے دفتر کے امیں
الفاظ کے خواجہ سرا
ان کے تصرف میں نہیں
خون بہارِ زندگی
ان کے تصرف میں نہیں
برہم ہے ان سے رنگِ گُل
آزردہ ہے بادِ صبا
اے کربلا! اے کربلا!

(5)

لیکن یہی دانش کدے
ہیں عشق کے آتش کدے
ہیں حسن کے تابش کدے
پلتے ہیں جن کی گود میں
لے کر انوکھا بانکپن
عصرِ رواں کے کوہکن
میرے جوانانِ چمن
بلبل نوا، شاہیں ادا
اے کربلا! اے کربلا!

(6)

اے غم کے فرزندو اٹھو
اے آرزو مندو اٹھو
دل کی نسیم جانفزا

ہونٹوں کی کلیوں میں جواں
یہ کرگسوں کے گھونسلے
زلفوں کی کلیوں میں رواں
بوئے گل و بوئے فنا
آنکھوں میں تاروں کی چمک
ہاتھوں میں سورج کی دمک
دل میں جمالِ شامِ غم
رُخ پر جلالِ بے نوا
گونجی ہوئی زیرِ قدم
تاریخ کی آوازِ پا
شمشیر ہیں دستِ دعا
اے کربلا! اے کربلا!

(7)

پیاسوں کے آگے آئیں گے
آئیں گے لائے جائیں گے
آسودگانِ جامِ جم
سب صاحبانِ بے کرم
کھل جائے گا سارا بھرم
جھک جائیں گے تیغ و علم
پیشِ سفیرانِ قلم
رخشندہ ہے روحِ حرم
تابندہ ہے روئے صنم
سردار کے شعروں میں ہے
خونِ شہیداں کی ضیا
اے کربلا! اے کربلا!

# آبلہ پا

(1)

سائے میں درختوں کے
بیٹھے ہوئے انسانو!
اے وقت کے مہمانو!
کس دیس سے آئے ہو
کس دیس کو جانا ہے
اے سوختہ سامانو!

یہ وسعتِ میداں ہے
یا درد کا صحرا ہے
اک دھوپ کا جنگل ہے
یا پیاس کا دریا ہے
دریا کے پرے کیا ہے
پتھر ہے کہ چشمہ ہے
نغمہ ہے کہ نالہ ہے
شبنم ہے کہ شعلہ ہے
شاید کوئی ساحر ہے
جو ڈوبتے سورج کے
دروازے پہ بیٹھا ہے
افسون تماشا ہے

(2)

ہے رات کی راہوں میں
تاروں کا سفر جاری
اور بادِ بیابانی
سر دست غزل خواں ہے
ہر ذرّے کے سینے میں
اک شمع فروزاں ہے
ہر خار کے نیزے پر
خوابوں کا گلستاں ہے

(3)

اے عشقِ جنوں پیشہ
اس سمت میں چلنا ہے
ڈوبا ہے جہاں سورج
نکلا ہے جہاں سورج
واں ریت کے ٹیلے پر
یا ناقۂ لیلیٰ ہے
یا محمل سلمیٰ ہے

(4)

صد قافلہ پنہا ہے
صد قافلہ پیدا ہے
آوازِ جرس لیکن
اس دشت میں تنہا ہے

صدیوں سے اسی صورت
ہے حکم سفر جاری
فرمان ستم جاری
اعلان کرم جاری

(5)

پھولوں کے کٹوروں میں
شبنم کی گلابی ہے
اور بادِ سحر گاہی
بدمست شرابی ہے
کل صبح کے دامن میں
تم ہو گے نہ ہم ہوں گے
بس ریت کے سینے پر
کچھ نقش قدم ہوں گے
سائے میں درختوں کے
پھر لوگ بہم ہوں گے
کس دیس سے آئے ہو
کس دیس کو جانا ہے
اے وقت کے مہمانو
اے شمع تمنا پر
جلتے ہوئے پروانو
اے سوختہ سامانو

# غزل

آئے ہم غالب و اقبال کے نغمات کے بعد
مصحفِ عشق و جنوں حسن کی آیات کے بعد

اے وطن، خاکِ وطن وہ بھی تجھے دے دیں گے
بچ گیا ہے جو لہو اب کے فسادات کے بعد

نارِ نمرود یہی اور یہی گلزارِ خلیل
کوئی آتش نہیں آتش کدۂ ذات کے بعد

رام و گوتم کی زمیں حرمتِ انساں کی امیں
بانجھ ہو جائے گی کیا خون کی برسات کے بعد

تشنگی ہے کہ بجھائے نہیں بجھتی سردار
بڑھ گئی کوثر و تسنیم کی سوغات کے بعد

# غزل

عقیدے بجھ رہے ہیں شمعِ جاں گل ہوتی جاتی ہے
مگر ذوقِ جنوں کی شعلہ سامانی نہیں جاتی

خدا معلوم کس کس کے لہو کی لالہ کاری ہے
زمینِ کوئے جاناں آج پہچانی نہیں جاتی

اگر یوں ہے تو کیوں ہے یوں نہیں تو کیوں نہیں آخر
یقیں محکم ہے لیکن دل کی حیرانی نہیں جاتی

لہو جتنا تھا سارا صرفِ مقتل ہو گیا لیکن
شہیدانِ وفا کے رُخ کی تابانی نہیں جاتی

پریشاں روزگار، آشفتہ حالاں کا مقدر ہے
کہ اُس زلفِ پریشاں کی پریشانی نہیں جاتی

ہر اِک شے اور مہنگی اور مہنگی ہوتی جاتی ہے
بس اِک خونِ بشر ہے جس کی ارزانی نہیں جاتی

نئے خوابوں کے دل میں شعلۂ خورشیدِ محشر ہے
ضمیرِ حضرتِ انساں کی سلطانی نہیں جاتی

لگاتے ہیں لبوں پر مہر اربابِ زباں بندی
علی سردار کی شانِ غزل خوانی نہیں جاتی

# غزل

یہ بے کس و بے قرار چہرے
صدیوں کے یہ سوگوار چہرے

مٹی میں پڑے دمک رہے ہیں
ہیروں کی طرح ہزار چہرے

لے جا کے انھیں کہاں سجائیں
یہ بھوک کے شکار چہرے

افریقہ و ایشیا کی زینت
یہ نادر روزگار چہرے

کھوئی ہوئی عظمتوں کے وارث
کل رات کے یادگار چہرے

غازے سے سفیدے سے رنگیں
اس دور کے داغ دار چہرے

گزرے ہیں نگاہ و دل سے ہو کر
ہر طرح کے بے شمار چہرے

مغرور انا کے گھونسلے میں
بیٹھے ہوئے کم عیار چہرے

قابلِ التفات آنکھیں
نا قابلِ اعتبار چہرے

ان سب سے حسین تر ہیں لیکن
رندوں کے گناہ گار چہرے

# سیلِ وقت (رقصِ خزاں)

(شمالی امریکہ کے موسم خزاں کے استعارے میں          اکتوبر 1994)

خزاں رسیدہ نگارِ بہار رقص میں ہے
عجیب عالمِ بے اختیار رقص میں ہے

برس رہے ہیں درختوں سے رنگ صورتِ برگ
طلسم خانۂ لیل و نہار رقص میں ہے

گذر رہا ہے زمانہ، بہار ہے نہ خزاں
بس اک تبسمِ برق و شرار رقص میں ہے

نہ جانے کون ہے معشوق کون ہے عاشق
نہ جانے کس کا دلِ بیقرار رقص میں ہے

جنوں نے پیرہنِ برگ و بار اتار دیا
برہنگی ہے کہ دیوانہ وار رقص میں ہے

یہ کائنات کا حیرت کدہ طلسمِ وجود
ازل کے روز سے بے اختیار رقص میں ہے

********

# خوابِ پریشاں

میرے دشمن کی بیٹی تھی وہ
اس کی راہوں میں بارود تھی
فرشِ مخمل نہ تھا
آگ کے پیڑ تھے
اور شاخوں میں انگاروں کے پھول تھے
سر پہ میرے وطن کے جہاز
اور دشمن کے طیارے معروفِ پیکار تھے
آسماں سے قیامت برسنے لگی تھی

اس کو معلوم تھا اس کے دشمن کا بیٹا ہوں میں
مجھ کو معلوم تھا میرے دشمن کی بیٹی ہے وہ
اس کی آنکھوں میں معصومیت، خوف اور بے بسی تھی
میری آنکھوں میں بھی شاید ایسا ہی ایک خوف تھا
اور اس خوف کے گہرے غاروں میں
ہر چیز گم ہو چکی تھی
رہنماؤں کی تقریریں
اہلِ سیاست کے دیوانے پن کے بیانات

اخباروں کے اقتباسات
ہتھیاروں کے تاجروں کے جنوں خیز اعلان
راکٹوں کی صدا اور طیاروں کی گھن گرج
کچھ نہ تھا
صرف اک دل دھڑکنے کی آواز تھی
دو دلوں کی وہ آواز جو ایک دل بن گئے تھے
ہاتھ سے ہاتھ مس ہونے کی
جسم سے جسم چھونے کی آواز
اور ہم دونوں
بیتاب سانسوں کے بے ربط سے سائباں کے تلے
خوف کے غار میں
سب بلاؤں سے محفوظ تھے
اس کا سارا بدن پیار ہی پیار تھا
میرا سارا بدن حسن ہی حسن تھا
اک ندی تھی جو خاموشی سے بہہ رہی تھی
کونپلیں ہنس رہی تھیں
پھول خاموشی سے کھل رہے تھے
اور دشمن کے سرحد کی ٹھنڈی ہوائیں
اور میرے وطن کی مہکتی ہوائیں
گلے مل رہی تھیں
ان کو پروانہ راہداری کی کوئی ضرورت نہ تھی

}{}{}{

# رقصِ ابلیس

اور اتنے میں ذرّات پھٹنے لگے
اور ہر ذرّہ کے دل سے خورشید کا خوں اُبلنے لگا
نور نے نار کی شکل میں
سارے جنّات، سارے شیاطین کے پاؤں کی
بیڑیاں کاٹ دیں
اور فضاؤں میں زہریلے سورج برسنے لگے
پھر خلاؤں میں سورج برستے رہے
ایک سورج میں لاکھوں جہنّم
ہر طرف رقصِ ابلیس تھا
رقصِ ابلیس کا دیکھنے والا کوئی نہ تھا
ہر طرف اس کی آواز تھی
جیسے اک آتشیں قہقہہ
کوئی بھی سننے والا نہ تھا
بس خدا....اک خدا
وحدہٗ، لاشریک

}{}{}{

# رقصِ ابلیس کے بعد

عمارتیں اُڑ گئیں فضا میں
پہاڑ دھنکی ہوئی روئی کے دہکتے گالے
جو اپنے شعلوں سے آسمانوں کو چاٹتے ہیں
خلاؤں کی آتشیں ہوائیں [1]
جو قلبِ خورشید میں پلی ہیں
غرور سے رقص کر رہی ہیں

زمیں ویرانہ ہو چکی ہے
تو تلے حرف ہیں نہ ماؤں کی انگلیاں ہیں
نہ ننھے منے حسین کپڑے
نہ بُلبُلے ہیں نہ کونپلیں ہیں
زمیں اک آگ کا ہے کمرہ
درخت ہیں آگ کے
ہوا آگ کی
اور آگ کے سمندر

---

1. آتشیں ہوائیں Solar winds

نہ کوئی سرمایہ دار باقی
نہ کوئی مزدور رہ گیا ہے
نہ اب کوئی انقلاب ہوگا
نہ کوئی تعبیر اور نہ کوئی
حسین، دیوانہ خواب ہوگا
نہ شام ہوگی نہ جام ہوگا
نہ دل کے صحنِ حسیں میں کوئی
حسین محوِ خرام ہوگا
ہر ایک شے آگ بن چکی ہے
چیخوں میں بدل چکی ہے
جو اسلحے بیچتے تھے
وہ سب ہیں نذرِ آتش
جنھیں تھی ہتھیاروں سے محبت
وہ نذرِ آتش
جنھیں تھی ہتھیاروں سے عداوت
وہ نذرِ آتش
جو قتل کرتے تھے نذرِ آتش
جو قتل ہوتے تھے نذرِ آتش
ہزار ہا سال بعد اگر پھر زمیں بنے گی
نجانے کیسا نظام ہوگا
خبر نہیں کیا وہاں بشر کا بھی نام ہوگا
سنو اک آواز، آسمانوں سے آ رہی ہے
نظامِ شمسی اداس ہے
اس کا ایک سیارہ کھو گیا ہے

جو وسعتِ کائنات کا شوخ و شنگ نیلم تھا[1]
اشک بن کر ٹپک گیا ہے
یہ خطۂ زمہریر جس پر
کروڑوں صدیاں گذر چکی ہیں
کروڑوں نوری برس جہاں اپنا سارا مفہوم کھو چکے ہیں[2]

بساطِ رقاصۂ فلک تھا
زمیں کی نیلم پری کا مسکن
اور اس کے اطراف کہکشاؤں کے سلسلے تھے
تمام سیاروں سے مقدس
پیمبروں کی زمیں
آیاتِ آسمانی کی جو امیں تھی
وہ نفع خوروں کی شیطنت سے
شکست کھا کر خلا میں روپوش ہو گئی ہے

یہ خواب خوابِ پریشاں تھا اور کچھ بھی نہ تھا
بشر نے روک دیا دستِ ظلم و ظلمت کا
زمین اب بھی درخشاں ہے اب بھی رقصاں ہے
پھر آرزو کے چراغوں سے دل فروزاں ہے
وہ خوف و درد کے غاروں سے آفتاب اُگے
وہ حسن و عشق کے رنگین ماہتاب اُگے
وہ بوسہ بوسہ چمن در چمن گلاب اُگے

---

1 آسمانی پروازوں کا بیان ہے کہ خلا سے زمین ایک نیلے رنگ کے ستارے کی طرح دکھائی دیتی ہے۔
2 آسمانوں میں وقت کا حساب سورج کے گرد زمین کی گردش سے نہیں ہوتا بلکہ روشنی کے سفر کی رفتار سے ہوتا ہے۔ یہ رفتار کائنات میں سب سے زیادہ تیز ہے۔ نوری برس یا نوری سال کو انگریزی میں Light year کہتے ہیں۔

# دعائے مغفرت

برائے رباب جعفری
ہمشیرہ علی سردار جعفری

رباب درد ہے خاموش دل کے تاروں میں
نہ کوئی نغمۂ جانکاہ ہے نہ شعلۂ آہ
بس ایک اشک کا قطرہ ہے بھیگی پلکوں پر
تمھارے کربِ مسلسل کے خاتمے کا گواہ
سکون کہتا ہے چہرے کا باغِ جنت سے
جنابِ فاطمہ زہرا کی پڑ رہی ہے نگاہ
تمھارا زادِ سفر عشقِ اہل بیتِ رسول
تمھاری دولتِ ایمان تمھارا توشۂ راہ
جوارِ رحمتِ حق میں ملے جگہ تم کو
بحق اشہد ان لا الٰہ الاّ اللہ

ولادت 30/جولائی 1918ء بلرامپور
وفات 29/جولائی 1997ء بمبئی

# ایک شعر

ہر شخص اپنے بارِ نشاط و الم کے ساتھ
اک کاروانِ شوق ہے جو رہگذر میں ہے

# نومبر، میرا گہوارہ

## (آپ بیتی اور جگ بیتی)

### رقصِ تخلیق

جب کہیں پھول ہنسے
جب کوئی طفل سرِ راہ ملے
رات کی شاخِ سیہ رنگ پہ جب رات کھلے
دل یہ کہتا ہے حسیں ہے دنیا
چیتھڑوں میں ہی سہی ماہ جبیں ہے دنیا
دستِ صیاد بھی ہے بازوئے جلاد بھی ہے
رقصِ تخلیقِ جہانِ گزراں جاری ہے

### کھول آنکھ، زمیں دیکھ، فلک دیکھ، فضا دیکھ

نومبر، میرا گہوارہ ہے، یہ میرا مہینہ ہے
اسی ماہِ منور میں
مری آنکھوں نے پہلی بار سورج کی سنہری روشنی دیکھی
مرے کانوں میں پہلی بار انسانی صدا آئی
مرے تارِ نفس میں جنبشِ بادِ صبا آئی
مشامِ روح میں
مٹی کی خوشبو پھول بن کر مسکرا اٹھی
لہو نے گیت گایا
شمعِ ہستی جگمگا اٹھی
یہ لمحہ، میلادِ آدم تھا
میں ستر سال پہلے اس تماشا گاہِ عالم میں

اک آفاقی کھلونا تھا

ہوا کے ہاتھ سہلاتے تھے میرے نرم بالوں کو
مری آنکھوں میں راتیں نیند کا کاجل لگاتی تھیں
سحر کی پہلی کرنیں چومتی تھیں میری پلکوں کو
مجھے چاند اور تارے مسکرا کر دیکھتے تھے
موسموں کی گردشیں جھولا جھلاتی تھیں
بھری برسات میں بارش کے چھینٹے
گرمیوں میں لُو کے جھونکے
مجھ سے ملنے کے لیے آتے
وہ کہتے تھے ہمارے ساتھ آؤ
چل کے کھیلیں باغ و صحرا
مری ماں اپنے آنچل میں چھپا لیتی تھی ننھے سے کھلونے کو
مری حیرت کی آنکھیں
اس محبت سے بھرے چہرے کو تکتی تھیں
جس آئینے میں پہلی بار میں نے
اپنا چہرہ آپ دیکھا تھا

وہ چہرہ کیا تھا
سورج تھا، خدا تھا یا پیمبر تھا
وہ چہرہ جس سے بڑھ کر خوبصورت
کوئی چہرہ ہو نہیں سکتا
کہ وہ اک ماں کا چہرہ تھا
جو اپنے دل کے خوابوں، پیار کی کرنوں سے روشن تھا

وہ پاکیزہ مقدس سینۂ زرّیں
وہ اس میں دودھ کی نہریں

وہ موجِ کوثر و تسنیم تھیں
یا شہد و شبنم تھیں
انھیں کی چند بوندیں آج اعجازِ سخن بن کر
انھیں کی چند بوندیں سحرِ حرف و جادوئے لفظ و بیاں بن کر
مرے ہونٹوں سے خوشبوئے زباں بن کر
سرِ لوح و قلم آتی ہیں تو شمشیر کی صورت چمکتی ہیں
حسینوں کے لیے وہ غازۂ رخسار و عارض ہیں
کھنکتی چوڑیاں، بجتی ہوئی پائل کو اک آہنگ دیتی ہیں
زمیں کی گردشوں، تاریخ کی آوازِ پا میں ڈھلتی جاتی ہیں
جواب میری زباں ہے
مرے بچپن میں وہ میری ماں کی لوری تھی
یہ لوری اک امانت ہے
مرا ہر شعر اب اس کی حفاظت کی ضمانت ہے

## اقراء علّم بالقلم

مرا پہلا سبق اقراء
ہے تحسینِ قلم جس میں
ہے تکریمِ قلم جس میں
قلم تحریکِ ربانی
قلم تخلیقِ انسانی
قلم تہذیبِ روحانی
قلم ہی شاخِ طوبیٰ بھی ہے انگشتِ حنائی بھی
مرے ہاتھوں میں آکر رقص کرتی ہے
ہزاروں دائروں میں چاند اور سورج کی محرابیں
درخشاں علم اور حکمت کی قندیلیں

ہلالِ نو کا سینہ ماہِ کامل کا خزانہ ہے

مری انگلی نے پہلے خاک کے سینے پہ حرفِ اوّلیں لکھا
پھر اس کے بعد تختی پر قلم کا نقشِ ثانی تھا
قلم انگشتِ انسانی کا جلوہ ہے
عروجِ آدمِ خاکی کا دلکش استعارہ ہے

## فطرت کی فیاضیاں

مجھے سورج نے پالا
چاندنی کرنوں نے نہلایا
ہر اک شے مجھ سے تھی مانوس
مجھ سے بات کرتی تھی
درختوں کی زباں
چڑیوں کے نغمے میں سمجھتا تھا
ہوا میں تتلیاں پرواز کرتی تھیں
میں ان کے ساتھ اڑتا تھا
مری مٹھی میں جگنو جگمگاتے تھے
میں پریوں کے پرستانوں میں جاتا تھا
اندھیرا کانپتا تھا بجلیوں کے تازیانوں سے
میں اس پر مسکراتا تھا
گرجتے بادلوں سے دوستی تھی
خاک پر چلتے ہوئے کیڑوں پہ بےحد پیار آتا تھا
ہر اک شے جیسے میری ذات تھی، میری حقیقت تھی
انا الحق ہی صداقت تھی
ہرے نیلے سنہری سرخ انڈے

آشیانوں میں پرندوں کے
وہ میرے سب کھلونے تھے
میں آفاقی کھلونا تھا
میں خود فطرت تھا فطرت میری ہستی تھی
اسی فطرت نے میرے خوں میں لاکھوں بجلیاں بھر دیں
مسیں بھیگیں رگ و پے میں جنوں کا بانکپن آیا
مرے آگے نئے رنگوں میں دنیا کا چمن آیا
ہر اک شمشاد پیکر لے کے فردوسِ بدن آیا

جدھر دیکھو ادھر برنائیاں ہیں
جدھر دیکھو ادھر رعنائیاں ہیں
شفق کے رنگ میں بھیگی ہوئی پرچھائیاں ہیں

مرے لغزیدہ لغزیدہ قلم نے
اک رنگیں اور خوشبودار کاغذ پر
بڑی مشکل سے رکتے رکتے حرفِ عشق لکھا
اور کسی کی بارگاہِ حسن میں بھیجا
حیا کی شمع جل اٹھی حریمِ دلربائی میں
گھمایا سر جھکا کر دیر تک کنگن کلائی میں

## ذکر اس پری وش کا اور پھر بیاں اپنا

کہاں سے آئی ہو
کون ہو تم
نہ گل نہ خوشبو
مگر تمہارا وجود خود روحِ گلستاں ہے
وہ کائنات سرور جس کا

خود اپنا سورج ہے چاند اپنا
میں کائنات سرور میں سانس لے رہا ہوں
شکنتلا ہے یہاں نہ ہیلن
نہ ہیر ہے اور نہ جولیٹ ہے
فقط تمھارے بدن کا موسم
جو میری نظروں کی نرم بارش میں
رنگ اور نور بن گیا ہے
کوئی نہیں تم سے بڑھ کے دنیائے دلبری میں
کوئی نہیں تم سے بڑھ کے دنیائے عاشقی میں
ہر ایک سے تم حسین تر ہو
ہر ایک سے میں عظیم تر ہوں

تمھارے ہونٹوں کے خم میں جو لفظ بن رہے ہیں
وہ میرے سینے میں پھول کی طرح کھل رہے ہیں
تمھاری 'ہاں' اک گلاب ہے تازہ و شگفتہ
کہ جس سے ایوانِ جاں معطر
'نہیں' بھی ننھی سی اک کلی ہے
جو دل کی نازک سی شاخ میں سو رہی ہے
خوابِ بہار بن کر
یہ خواب تعبیر کے گلستاں کا منتظر ہے
تمھارے دلکش بدن کے رنگوں میں مضطرب ہے
تمھاری آنکھوں سے جھانکتا ہے
تمھاری سانسوں میں کانپتا ہے
مجھے 'نہیں' کی کلی عطا ہو
کہ جس سے 'ہاں' کا گلاب مہکے

تمھارے شہر جمال میں
مرے دل کا کاسہ
بھٹک رہا ہے
تم اپنے ہونٹوں کا شہد
آنکھوں سے چھو لو
ہاتھوں کا چاند دے دو
یہ مفلسی کی سیاہ راتیں وجود پہ طنز کر رہی ہیں

زمین کا رنگ تم زمیں کا جمال تم ہو
زمیں کی دولت
زمیں کی بیٹی
تم اپسراؤں سے اور حوروں سے پاک تر ہو
کہ وہ تصور کے آسمانوں کی پتلیاں ہیں
تمام حسن گماں کا پیکر
مگر تم اس خاک کی چمک ہو
کہ جس کی نس نس میں
سیب انگور اور گیہوں کی فصل کا خوں رواں دواں ہے
سحر کا سورج تمھارے ماتھے کو چومتا ہے
بدن میں شبنم کی روشنی ہے

ہوائیں جو میری راز داں ہیں
وہ میرے ہونٹوں سے لفظ لے کر
تمھارے کانوں کی سیپیوں میں
گہر کے مانند ڈالتی ہیں
میں مسکراتا ہوں
تم بھی ہنستی ہو

اور دونوں
نئی تمناؤں کے جزیروں میں گھومتے ہیں
نہ کوئی محکوم ہے نہ حاکم
نہ کوئی قانون ہے نہ سختی
بس ایک زنجیرِ لطف، شمشیرِ دلربائی

## ورقِ ناخواندہ

میں اک ورق ہوں
لکھا ہے کس نے
پڑھا ہے کس نے
ہر اک درخت اک قلم ہے ہر شاخ اک قلم ہے
سمندروں کی دوات
ندیوں میں پگھلی چاندی کی روشنائی
فضا کے سیال نیلگوں سے
ہواؤں کے ہاتھ لکھ رہے ہیں
ستاروں کا نور لکھ رہا ہے
زمین کا رقص لکھ رہا ہے
زمین کی پشت سے نکلتا گلابی سورج
سنہری کرنوں سے لکھ رہا ہے
گذرتے لمحات اپنی تیروں سے لکھ رہے ہیں
گذرتی تاریخ اپنے نیزوں سے لکھ رہی ہے
تمام احباب لکھ رہے ہیں
تمام اغیار لکھ رہے ہیں
حریفوں کے خنجروں پہ خوں ہے
سیاستِ مکروفن کی تلوار لکھ رہی ہے

مہکتے زخموں کے پھول الفاظ بن گئے ہیں
تبسمِ لفظِ یار کا حرف حرف ہے غنچۂ شگفتہ
حدث کے خاروں کی نوک میں جنبشِ قلم ہے
زبانِ دشنام لکھ رہی ہے
زبانِ بدنام لکھ رہی ہے
زبانِ ناکام لکھ رہی ہے
مگر مرا دل، مرا جنوں بھی تو لکھ رہا ہے
میں اک ورق ہوں
تمام احساسِ ناتمامی
مگر مکمل کتاب جیسے
جو پڑھ سکو تو مجھے بتانا کہ اس صحیفے میں کیا لکھا ہے

## صحیفۂ کائنات

یہ دو ورق ہیں
زمین اور آسمان جن پر
صحیفۂ کائنات تحریر ہو رہا ہے
فسانۂ ہستی کا نیستی کا
فسانہ نیکی کا اور بدی کا
فسانہ ظلمت کا روشنی کا
صحیفۂ کائنات تحریر ہو رہا ہے
جو کل کلی تھی
وہ آج گل ہے
جو آج گل ہے
وہ کل ثمر ہے

ہر ایک شے وقت کی ہواؤں کی زد پہ
اک شمعِ رہگذر ہے
جو بجھ رہی ہے
جو جل رہی ہے
وجود پر ناز کر رہی ہے

ہواؤں کے تند و تیز جھونکے
جب آندھیوں کا لباس پہنے
اترتے ہیں غارتِ چمن پر
تو شاخِ گل اپنا سر جھکا کر سلام کرتی ہے
اور پھر سر اٹھا کے ہنستی ہے
اور کہتی ہے مجھ کو دیکھو
میں فطرتِ لازوال کا رنگِ شاعری ہوں
وجود کا رقصِ دلبری ہوں
جسے مٹانے کی کوششیں ہیں
وہ مٹ سکا ہے نہ مٹ سکے گا
یہ رنگ صحنِ چمن سے ابلے گا
مقتلوں سے طلوع ہوگا

## حرفِ بد

مرے خلاف اٹھایا قلم حریفوں نے
مرا غرور بڑھا اور سر بلند ہوا
یہی سلیقہ ہے بس حرفِ بد سے بچنے کا
کہ اپنی ذات کو اتنی بلندیاں دے دو
کسی کا سنگِ ملامت وہاں تک آ نہ سکے

صدائے کوئے ملامت تلاش کرتی رہے
مگر نوائے بہار آشنا کو پا نہ سکے
چراغ علم و ہنر کو کوئی بجھا نہ سکے

جیو تو اپنے دل و جاں کے میکدے میں جیو
خود اپنے خونِ جگر کی شراب ناب پیو
جہاں کے سامنے جب آؤ تازہ رو آؤ
حضور محتسب و شیخ میں سبو لاؤ
دلِ شکستہ میں بڑھنے دو روشنی غم کی
یہ روشنی ہے تو میراثِ ابنِ آدم کی
یہ روشنی کہ جو تلوار بھی سپر بھی ہے
مری نگاہ میں پیمانۂ ہنر بھی ہے

## حسد

حسد کی آنکھوں میں رنگ دیکھو
جو دل کے اندر بھرے ہوئے ہیں
وہ زہر آلودہ سنگ دیکھو
جو ہاتھ میں ہیں وہ پھول دیکھو
جو روح میں ہیں ببول دیکھو
لبوں پہ جو ہے وہ حرف دیکھو
حقیر کتنا ہے ظرف دیکھو
کہ دوست ہے
اور دوست کے منہ پہ بات کہنے سے ڈر رہا ہے
وجود ظاہر میں ہے مکمل
مگر وہ اندر بکھر رہا ہے

وہ اپنی نفرت کا زہر لے کر
خود اپنے خوں میں اتر رہا ہے
وہ تنگ دل بھی ہے تنگ جاں بھی
تُنک ضمیر اور تُنک زباں بھی
خبر نہیں اس کو وہ کہاں ہے
کہ ہر طرف اک شخص ایسا نظر کے اندر بسا ہوا ہے
کہ جس کے سایے سے کانپتا ہے
جب اپنا قد اس سے ناپتا ہے
تو اپنے خنجر کو تولتا ہے
حسد کا مارا ہوا یہ بندہ غریبِ شہرِ دیارِ خود ہے
شرافتِ نفس مر چکی ہے بے چارہ خویش آشنا نہیں ہے

مگر اسی دوست کی بدولت
میں خود کو پہچاننے لگا ہوں
میں اس کا احسان مانتا ہوں
خدا کرے اس کا دل کہیں سے
سکوں کی دولت تلاش کر لے

## قاتل کی شکست

اس کمیں گاہ میں ہیں کتنے کماں دار بتاؤ
تیر کتنے ہیں سیہ ترکش میں
گن کے دیکھو تو ذرا
کون سا تیر ہے مخصوص مرے دل کے لیے

ابن مریم کو کیا تم نے سرِ دار بلند
اور وہ زندہ ہے

تشنگی تم نے محمد کے نواسے کو دی
چشمۂ فیضِ حسین ابن علی جاری ہے

ابن مریم نہ حسین ابن علی ہوں لیکن
خوں میں ہے خونِ شہادت کی حرارت پنہا
وہ جو صدیوں سے دہکتا ہوا انگارہ ہے
اور سینے میں مرے
ایک نہیں سیکڑوں لاکھوں دل ہیں
وہ کسی دیس کا دل ہو کہ کسی قوم کا دل
وہ کسی فردِ بشر کا دل ہو
زخم خوردہ ہو کہ نغموں سے بھرا
میرے سینے میں دھڑکتا ہے مرا دل بن کر
کتنے دل قتل کرو گے آخر
کتنے جلتے ہوئے تاروں کو بجھا سکتے ہو
کتنے خورشیدوں کو نیزوں پہ اٹھا سکتے ہو
قتل کرتے کرتے خود تم کو نہ خوں ہو جانا

(نامکمل زیرِ تحقیق)

# دل اور شکستِ دل

وفا پیکر تھی وہ لیکن وفا نا آشنا نکلی
وہ نغمہ تھی شکستِ شیشۂ دل کی صدا نکلی

چراغِ لالۂ صحرا کی صورت دل میں روشن تھی
مگر پل بھر میں صحراؤں کی بے پروا ہوا نکلی

بہت بے باک آتا تھا، بہت دُزدانہ جاتا تھا
یہ میرے دل کی دھڑکن بھی وہی آوازِ پا نکلی

وفا کیسی، کہاں کی بے وفائی، عشق کی منزل
تھی مقتل گاہ جس میں حسن کی تیغِ ادا نکلی

یہ سارا کھیل تھا جو وقت کے شاطر نے کھیلا تھا
نہ کچھ اس کی خطا نکلی نہ کچھ اپنی خطا نکلی

کوئی منزل نہیں آوارۂ کوئے تمنا کی
نئی خوشبوئے پیراہن لیے بادِ صبا نکلی

نگارِ آتشیں رخ اور کوئی آنے والا ہے
دلِ ویراں کی تاریکی میں ہلکا سا اجالا ہے

کوئی تو زخمِ دل پر مرہمِ مہر و وفا رکھے
کوئی تو درد کے رخسار پر دستِ شفا رکھے

پھر وہی مہر و مروت پھر وہی شوقِ فضول
پھر وہی صحرائے درد اور درد کے صحرا کا پھول

نہ کوئی اس کی طرح ہے نہ وہ کسی کی طرح
کرشمہ حسن کا حافظ کی شاعری کی طرح

تمام شہدِ وصال و تمام زہرِ فراق
وہ نو بہارِ تمنا ہے زندگی کی طرح

یہ میرا عشق کہ اس کے بدن کا شعلہ ہے
یہ اس کا حسن کہ ہے میری تشنگی کی طرح

ملے تو ایسے ملے جیسے دوست برسوں کے
چھٹے تو ایسے کہ لگتے ہیں اجنبی کی طرح

چرایا جس نے کوئی صاحب نظر ہو گا
چمک رہی تھی وہ ہیرے کی روشنی کی طرح

چمن میں روح کے تتلی کی طرح آئی تھی
اور اب گئی ہے تو ساون کی چاندنی کی طرح

تمام کیفیتِ جسم و جاں تمام ہوئی
کسی کا پیار نہیں اس کی دلبری کی طرح

چمک رہا تھا مژہ پر ستارۂ سحری
اداس وہ بھی تھی سردار جعفری کی طرح

}{}{}{

# اے شہ سوارو

پھیلا ہوا ہے دشتِ جگر تاب
پیاسے ہیں چشمے پیاسے ہیں گرداب
کچھ اور ہوں گے جینے کے آداب
خونِ جگر ہی اب ہے مے ناب
اے شہ سوارو
اے شہ سوارو

اٹھتے بگولے عفریت پیکر
سورج کی کرنیں سفاک خنجر
گرتے ہیں کٹ کر شاہیں کے شہ پر
شوقِ سفر ہی اپنا ہے رہبر
اے شہ سوارو
اے شہ سوارو

وادی بہ وادی منزل بہ منزل
صحرا بہ صحرا ساحل بہ ساحل

قاتل ہی قاتل، قاتل ہی قاتل
دل سا سپاہی سے، کے مقابل
اے شہ سوارو
اے شہ سوارو

آئی کہاں سے بوئے بہاراں
جادو بھری ہے صوتِ ہزاراں
شاید یہیں ہے شہرِ نگاراں
کچھ اور ہمت اے ذوقِ یاراں
اے شہ سوارو
اے شہ سوارو

جانا ہے آگے حدِ نظر تک
عزمِ سفر سے ختمِ سفر تک
موجِ بلا سے موجِ گہر تک
خشکیٔ لب سے دامنِ تر تک
اے شہ سوارو
اے شہ سوارو

# العطش

العطش، العطش، العطش
ہم نفس گرم لُو، ہم قدم خار و خس
زیرِ پا بجلیاں، آندھیاں پیش و پس
ساریاں اور کچھ تیز بانگِ جرس
العطش
العطش
العطش

رہگذر، رہگذر، کارواں، کارواں
پیاس کی سرزمیں پیاس کا آسماں
خواب در خواب رقصاں ہے جوئے رواں
ساریاں اور کچھ تیز بانگِ جرس
العطش
العطش
العطش

محملوں میں یہ سب بے ردا کون ہیں
پا بہ زنجیر یہ بے نوا کون ہیں
یہ شہیدانِ راہِ وفا کون ہیں
سارباں اور کچھ تیز بانگِ جرس
العطش
العطش
العطش

خون سے سرخ سورج ہیں نیزوں پہ سر
سرخ ہیں شہرِ مظلوم کے بام و در
شب کے سینے میں خنجر ہے رنگِ سحر
سارباں اور کچھ تیز بانگِ جرس
العطش
العطش
العطش

حق و باطل کی ہر عہد میں جنگ ہے
ہر زمانہ شہادت سے گلرنگ ہے
ہر رجز شعلۂ نور و آہنگ ہے
سارباں اور کچھ تیز بانگِ جرس
العطش
العطش
العطش

# پسِ دیوارِ زنداں

پسِ دیوارِ زنداں کیا ہے
آنسو ہیں کہ تارے ہیں
بجھی مغموم آنکھیں ہیں
کہ انگارے دہکتے ہیں
تمناؤں کا سیلِ نغمہ ہے
یا جوشِ گریہ ہے
محافظ کچھ نہیں کہتے
مگر زنجیر کی آواز یہ مژدہ سناتی ہے
کہ حلقے ٹوٹ جائیں گے
بہ فیضِ عشق سب آوارہ میکش لوٹ آئیں گے
اگرچہ جام و ساقی قید ہیں
اور محتسب تختِ عدالت پر
ریاکاروں کے حلقے میں
سیہ کاروں کے پہرے میں
مگر کب تک
کہ زنجیروں کی جھنکاروں کا نغمہ بڑھتا جاتا ہے
کہ زندانوں کی دیواروں کا قامت گھٹتا جاتا ہے
صلیبوں پر بھی
پیغمبروں کی حکمرانی ہے

# چار شعر

جب سے انسان کی عظمت پہ زوال آیا ہے
ہے ہر اک بت کو یہ دعویٰ کہ خدا ہو جیسے
ایک آواز سی ہے وقت کے سناٹے میں
دلِ گیتی کے دھڑکنے کی صدا ہو جیسے
ہے افق تا بہ افق خونِ شہیداں کی شفق
کسی شعلے کے لپکنے کی ادا ہو جیسے
دل کو اس طرح سے چھوتی ہے کسی حسن کی یاد
عارضِ گل پہ لبِ بادِ صبا ہو جیسے

# ہوسِ دل

(ہوس کو ہے نشاطِ کار کیا کیا)

غالب

ہوسِ دل ہے کہ رقصِ مہ و سال اور ابھی
لطفِ معشوقۂ خورشید جمال اور ابھی
در ابھی بند نہ ہو شوق کے میخانے کا
جامِ جم اور ابھی جامِ سفال اور ابھی
اک غزل اور کسی دشمنِ جاں کی خاطر
وہی آتش کدۂ ہجر و وصال اور ابھی
بس نکھرنے ہی کو ہے درد کے شعلے کا جمال
چشمِ مظلوم میں تھوڑا سا جمال اور ابھی

# دو شعر

یہ کون آیا شبِ وصل کا جمال لیے
تمام عمرِ گزشتہ کے ماہ و سال لیے

ہزار رنگِ خزاں کا بدن پہ پیراہن
زوالِ حسن میں بھی حسنِ لازوال لیے

# نئی نسل کے نام

مجھ سے نظریں چرا کر کہاں جاؤ گے
اے مرے آفتابو
راہ میں رات کی بے کراں جھیل ہے
اور اونچی ہیں لہریں
آسمانِ سخن کے نئے ماہتابو
تیرگی ڈھونڈتی پھر رہی ہے تمھارا پتہ
اور وہ صرف میں جانتا ہوں
درد کی شاہراہ سے گذر کر
آنسوؤں کی ندی کے کنارے
غم کی بستی میں جو نور کا جھونپڑا ہے
اس میں رہتے ہو تم
میری ہی طرح خانہ خرابو

سازشیں کرگسوں کی طرح اڑ رہی ہیں
ان کے پر تھک کے گر جائیں گے
اور تمھاری بلندی نہ چھو پائیں گے
تم اسی طرح پرواز کرتے رہو گے
اور تمھارے پروں کی چمک
کہکشاں کہکشاں گیت گاتی رہے گی
اے مرے شعلہ پیکر عقابو

اپنے لوح و قلم تو دکھاؤ ذرا
سچ کہو کیا تمھارے تراشے ہوئے لفظ میں
میری آواز کا شائبہ بھی نہیں
میری آواز جو پہلے غالب کی آواز تھی
اور پھر روحِ اقبال کا زمزمہ بن گئی
آج کے نغمۂ شوق میں ڈھل گئی
صبحِ فردا کی وادی میں جوئے رواں
میری آواز
پتھر میں شعلہ ہے
شعلہ میں شبنم
اور طوفاں میں طوفاں
اور تمھارے بھی سینے میں اس کی چبھن ہے
سچ کہو
آنے والے زمانے کی روشن کتابو

مجھ سے نظروں چرا کر کہاں جاؤ گے؟

}{}{}{}{

# غزل

کوئی ہو موسم تھم نہیں سکتا رقصِ جنوں دیوانوں کا
زنجیروں کی جھنکاروں میں شورِ بہاراں باقی ہے

عشق کے مجرم نے یہ منظر اوجِ دار سے دیکھا ہے
زنداں زنداں مجلس مجلس حلقۂ یاراں باقی ہے

برگِ زرد کے سایے میں بھی جوئے ترنم جاری ہے
یہ تو شکستِ فصلِ خزاں ہے صوتِ ہزاراں باقی ہے

محتسبوں کی خشکیٔ دل پر ایک زمانہ ہنستا ہے
تر ہے دامن اور وقارِ بادہ گساراں باقی ہے

پھول سے چہرے، چاند سے مکھڑے نظروں سے روپوش ہوئے
عارضِ دل پر رنگِ حنا ہے دستِ نگاراں باقی ہے

}{}{}{

# ایک شعر

آستیں خون میں تر پیار جتاتے ہو مگر
کیا غضب کرتے ہو خنجر تو چھپاؤ صاحب

# راج نراج

(ممبئی کے فسادات کے زمانے میں لکھے گئے)

سنا ہے بندوبست اب سب بہ اندازِ دگر ہوں گے
ستم ہو گا، محافظِ شہر بے دیوارودر ہوں گے

سزائیں بے گناہوں کو ملیں گی بے گناہی کی
کہ فردِ جرم سے مجرم کی منصف بے خبر ہوں گے

فقط مخبر شہادت دیں گے ایوانِ عدالت میں
فقط تیر وسناں شمشیر و خنجر معتبر ہوں گے

سجائی جائے گی بزمِ عزا ایزا رسانوں سے
کفن پہنائیں گے جلاّد، قاتل نوحہ گر ہوں گے

فلک تھرا اٹھے گا جھوٹے ماتم کی صداؤں سے
یتیموں اور بیواؤں کے آنسو بے اثر ہوں گے

رَن میں ماؤں اور بہنوں کے بازو باندھے جائیں گے
شہیدانِ وفا کے خوں بھرے نیزوں پہ سر ہوں گے

منایا جائے گا جشنِ مسرت سونے کھنڈر میں
اندھیری رات میں روشن چراغِ چشمِ تر ہوں گے

جو یہ تعبیر ہو گی ہند کے دیرینہ خوابوں کی
تو پھر ہندوستاں ہو گا نہ اس کے دیدہ ور ہوں گے

# غزل

کبھی خنداں، کبھی گریاں، کبھی رقصاں چلیے
دور تک ساتھ ترے عمرِ گریزاں چلیے

ذوقِ آرائش و گل کاریٔ اشکِ خوں سے
کوئی بھی فصل ہو فردوس بداماں چلیے

رسمِ دیرینۂ عالم کو بدلنے کے لیے
رسمِ دیرینۂ عالم سے گریزاں چلیے

آسمانوں سے برستا ہے اندھیرا کیسا
اپنی پلکوں پہ لیے جشنِ چراغاں چلیے

شعلۂ جاں کو ہوا دیتی ہے خود بادِ سموم
شعلۂ جاں کی طرح چاک گریباں چلیے

عقل کے نور سے دل کیجئے اپنا روشن
دل کی راہوں سے سوئے منزلِ انساں چلیے

غم نئی صبح کے تارے کا بہت ہے لیکن
لے کے جب پرچمِ خورشید زر افشاں چلیے

سر بکف چلنے کی عادت میں نہ فرق آ جائے
کوچۂ دار میں سرمست و غزلخواں چلیے

# غزل

لُو کے موسم میں بہاروں کی ہوا مانگتے ہیں
ہم کفِ دستِ خزاں پر بھی حنا باندھتے ہیں

ہم نشیں سادہ دلی ہائے تمنا مت پوچھ
بے وفاؤں سے وفاؤں کا صلہ مانگتے ہیں

کاش کر لیتے کبھی کعبۂ دل کا بھی طواف
وہ جو پتھر کے مکانوں سے خدا مانگتے ہیں

جس میں ہو سطوتِ شاہین کی پرواز کا رنگ
لبِ شاعر سے وہ بلبل کی نوا مانگتے ہیں

تاکہ دنیا پہ کھلے ان کا فریبِ انصاف
بے خطا ہو کے خطاؤں کی سزا مانگتے ہیں

تیرگی جتنی بڑھے حسن ہو افزوں تیرا
کہکشاں مانگ میں ماتھے پہ ضیاء مانگتے ہیں

یہ ہے وارفتگیٔ شوق کا عالم سردار
بارشِ سنگ ہے اور بادِ صبا مانگتے ہیں

# غزل

جس پہ نازل ہو رہا ہے اب مشینوں کا عذاب
نغمۂ شائستگیِ دست کاراں تھا یہ شہر

خاکِ دل اڑتی ہے اب جس طرح پروانوں کی خاک
صبحِ گل، روزِ طرب، شامِ بہاراں تھا یہ شہر

کون ہے فریاد رس، مانگیں گے کس سے خوں بہا
زیرِ پائے نخوتِ آدم شکاراں تھا یہ شہر

طوقِ زریں گردنِ خر میں نظر آتا ہے آج
کل تلک جولانگہِ چابک سواراں تھا یہ شہر

# ایک شعر

خدا حسین و جمیل ہے اور تمھاری آنکھوں میں جلوہ گر ہے
وہ موجِ رنگِ بہار تم جس سے گلفشاں ہو مری نظر ہے

# ایک شعر

مصحفِ رخ پہ جو زلفوں نے لکھا بسم اللہ
آئی زنجیر کے حلقوں کی صدا بسم اللہ

# ایک نظم

جو آسماں پہ چمکتا ہے وہ قمر ہے کچھ اور
جسے ہم اپنا کہیں وہ قمر زمیں پہ ہے
وہ جس کے حسن سے روشن جبیں ستاروں کی
وہ جس کے حسن سے رنگینیاں بہاروں کی
وہ حسن پھول میں، ذرے میں، آفتاب میں ہے
وہ حسن حرف میں، نغمے میں ہے، کتاب میں ہے
وہ حسن شعلے میں، شبنم میں ہے شراب میں ہے
وہ حسن جس سے ہے تصویرِ کائنات میں رنگ

# سمندر کی بیٹی

(ہمیں حسن کا معیار بدلنا ہے)

پریم چند

جب وہ بوجھ اٹھاتی ہے
اور ٹوکری سر پر رکھتی ہے
دو ہاتھوں کی قوس قزح میں
اس کی گردن اور بھی اونچی ہو جاتی ہے
اک تلوار سی کھنچ جاتی ہے
یہ گردن جو کبھی نہیں جھک پاتی ہے
(ہاں شرما کر جھک جانے کی بات الگ ہے)
یہ گردن
جو جسم کے اوپر
چہرے کے گلدستے کو
اور ہونٹوں کے برگِ گل کو
آراستہ کرنا جانتی ہے
جیسے کوئی دستِ حنائی
ناز و ادا سے عشق و جنوں کو
حسن کا تحفہ پیش کرے

دریاؤں کی کمسنی چاندنی
سونے جیسی دھوپ میں جگمگ، جگمگ کرتی
سڑکوں اور گلیوں سے ایسے گذرتی ہے

جیسے کوئی مغرور جوانی
اپنے بدن پر، اپنے بدن کی کرنوں کا پیراہن پہنے
بہک رہی ہو
اس کی چال میں پھرتی لوچ ہواؤں کا
پانی کی لہروں کی روانی
اس کا سینہ بوجھ کے نیچے
اور ابھر کر
چاند اور سورج پر ہنستا ہے
اس کی بھوؤں کی شوخ کمانیں
تن جاتی ہیں
کولہے اور کمر کی جنبش
رانوں سے پیروں کے تلوؤں تک بل کھاتی چلی جاتی ہیں
اس میں ہے رفتارِ زمانہ کی بے باکی
جو صدیوں سے تاج و تخت کو ٹھکراتی
اور محلوں کو قبروں میں سلاتی
رواں دواں ہے

اونچی ایڑی
ہرن کھری کی جوتیاں پہنے
اچک اچک کر چلنے والی دوشیزائیں
گھبرا کر پیچھے ہٹ جاتی ہیں
اور مچھیرن اپنی چاندی اپنا سونا
سر پہ اٹھائے
آگے بڑھ جاتی ہے
اس کے بالوں اور بالوں میں سجے ہوئے پھولوں کی خوشبو

چاروں سمت بکھر جاتی ہے
دور سے ایک آواز آتی ہے
مچھلی لے لو
مچھلی لے لو

روز سحر کو
نیلے ساحل کی یہ نیلم پیکر بیٹی
رنگِ شفق سے ظاہر ہو کر
شام تلک
پھر رنگِ شفق کے پردے میں چھپ جاتی ہے
اور سمندر گیت سناتا رہتا ہے
میں نے اجنتا کی آنکھوں میں
اس کو فروزاں دیکھا ہے

## دو شعر

تصور اپنا، اپنی آرزو، شوقِ فضول اپنا
لب اس کے، عارض اس کے، نکہتِ زلفِ دراز اس کی

خموشی ایک گل بانگ بہارِ عاشقانہ ہے
تبسم اس کی غزلیں روئے روشن ہے بیاض اس کی

# دولتِ دنیا کا حساب

تم کہ ہو محتسب سیم و زر و لالہ و گہر
ہم سے کیا مانگتے ہو دولتِ دنیا کا حساب
چند تصویرِ بتاں، چند حسینوں کے خطوط
چند ناکردہ گناہوں کے سلگتے ہوئے خواب

ہاں مگر اپنی فقیری میں غنی ہیں ہم لوگ
دولتِ دردِ دل و دردِ جگر رکھتے ہیں
خشکئ لب ہے تو کیا دیدۂ تر رکھتے ہیں
اپنے قبضے میں نہیں اطلس و سنجاب و سمور
جسم پہ پیرہنِ شمس و قمر رکھتے ہیں
گھر تو روشن نہیں الماس کے فانوسوں سے
قصر و ایواں پہ جو برسے وہ شرر رکھتے ہیں
جو زمانے کو بدل دے وہ نظر رکھتے ہیں

اس خزانے میں سے جو چاہو اٹھا لے جاؤ
اور بڑھ جاتا ہے یہ مال جو کم ہوتا ہے
ہم پہ تو روز زمانے کا کرم ہوتا ہے
شاخِ گل بنتا ہے جب ہاتھ قلم ہوتا ہے

# کرشمہ

مرے لہو میں جو توریت کا ترنم ہے
مری رگوں میں جو یہ زمزمہ زبور کا ہے
یہ سب یہود و نصارا کے خوں کی لہریں ہیں
مچل رہی ہے جو میرے لہو کی گنگا میں

میں سانس لیتا ہوں جن پھیپھڑوں کی جنبش سے
کسی مغنّیِ آتش نفس نے بخشے ہیں
جواں ہے مصحفِ یزداں کا لحنِ داؤدی

کسی کی نرگسی آنکھوں کا نرگسی پردہ
مری نظر کو عطا کر رہا ہے بینائی
نگاہِ شوق کی ہیں بے قراریاں کیا کیا
طلوعِ مہر کی ہیں نقش کاریاں کیا کیا
مہ و نجوم کی ہیں جلوہ باریاں کیا کیا
زمیں سے تا بہ فلک رقص میں ہیں لیلائیں
شگفتہ صورتِ گل، ہر طرف تمنائیں

خدا کا شکر ادا جب زبان کرتی ہے
تو دل تڑپتا ہے اک ایسی کافرہ کے لیے
خدا بھی میری طرح جس کو پیار کرتا ہے
وہ جسمِ ناز محب الجمال کا نغمہ

وہ سر سے پاؤں تلک ماہ و سال کا نغمہ
جلالِ ہجر و شکوہِ وصال کا نغمہ
جہانِ عشق میں تفریقِ اسم و ذات نہیں
جہانِ حسن میں تقسیمِ ہند و پاک نہیں
سوا گلوں کے گریباں کسی کا چاک نہیں
یہ عالمِ بشری احترام کا عالم
تمام تر ہے درود و سلام کا عالم
نفس نفس میں مرے زمزمہ محبت کا
مرا وجود قصیدہ بشر کی عظمت کا
یہ سب کرشمہ ہے انسانیت کی وحدت کا

# پروین شاکر

وہ ودیاپتی کی شاعری کی
معصوم و حسین و شوخ رادھا
وہ اپنے خیال کا کنہیا
اس شہر میں ڈھونڈنے گئی تھی
دستور تھا جس کا سنگ باری

وہ فیض و فراق سے زیادہ
تقدیس بدن کی نغمہ خواں تھی

تہذیب بدن کی رازداں تھی
گلنار لبوں کی تہنیت میں
گلنار لبوں سے گلفشاں تھی
لب آشنا لب غزل کے مصرے
جسم آشنا جسم نظم پیکر
لفظوں کی ہتھیلیاں حنائی
تشبیہوں کی انگلیاں گلابی
سرسبز خیال کا گلستاں
مبہم سے کچھ آنسوؤں کے چشمے
آہوں کی وہ ہلکی سی ہوائیں
صد برگ ہوا میں منتشر تھے
تتلی تھی کہ رقص کر رہی تھی
اور درد کے بادل سے چھن کر
نغموں کی پھوار پڑ رہی تھی
پرشور منافقت کے بازار
افواہیں فروخت کر رہے تھے

وہ اپنی شکستہ شخصیت کو
اشعار کی چادروں کے اندر
اس طرح سمیٹنے لگی تھی
احساس میں آ رہی تھی وسعت
نظروں کا افق بدل رہا تھا
اور درد جہان آدمیت
ٹوٹے ہوئے دل میں ڈھل رہا تھا

اس عالمِ کیف وکم میں اک دن
اک حادثے کا شکار ہو کر
جب خوں کا کفن پہن لیا تو
اڑتیں صلیبیں نوحہ خواں تھی
خاموش تھا کربِ خود کلامی
اب کچھ بھی نہیں رہ گیا ہے باقی
باقی ہے سخن کی دلنوازی

جنت میں ہے جشنِ نو کا سماں
محفل میں مجاز و بائرن ہیں
موجود ہیں کیٹس اور شیلی
یہ مرگِ جواں کے سارے عاشق
خوش ہیں کہ زمینِ پاک سے اک
نو مرگِ بہار آ گئی ہے
لپٹی ہوئی خاک کی ہے خوشبو
اور سایہ فگن سحابِ رحمت

# صفارت خانۂ جاں

(ایک نظم ہزار سال پرانی)

ہمارے دل میں اک صفارت خانۂ جاں ہے
صفارت جس کا پرچم دل جلوں کی آہِ سوزاں ہے
بس اک دستورِ عشق و عاشقی جو میر ساماں ہے
یہاں آنے کا رستہ کوچۂ چاکِ گریباں ہے
یہاں ہے روشنی تنہا چراغِ چشمِ پرنم کی
یہاں آؤ تو کھل جائیں گی راہیں سارے عالم کی

یہاں کشمیر بھی، ڈھاکہ بھی ہے، کاشی بھی کعبہ بھی
زمیں کا حسن بھی اور جلوۂ عرشِ معلیٰ بھی
یہاں جہلم بھی ہے دجلا بھی ہے ڈینوب و گنگا بھی
عقب میں دور تک پھیلا ہوا دشتِ تمنا بھی
سرودِ منزلِ ما کبریا اس کا ترانہ ہے
حقیقت ہے فقط انساں، باقی سب فسانہ ہے

# نذرِ اختر الایمان

رواں ہے کشتیٔ عمر رواں آہستہ آہستہ
خیال و خواب ہو گا یہ جہاں آہستہ آہستہ
جو اٹھتا ہے دل و جاں سے دھواں آہستہ آہستہ
بجھی جاتی ہے کوئی کہکشاں آہستہ آہستہ

٭٭٭٭

# تین شعر

تری دلبری کا تحفہ، یہ ستارہ بار آنکھیں
مے شوق سے اچھلتی خوش و پر خمار آنکھیں

مرے دل پہ سایہ افگن مری روح و جاں میں روشن
یہ فرشتہ گیر زلفیں یہ خدا شکار آنکھیں

رہے تا ابد سلامت یہ دل و نظر کی جنت
یہ صدا بہار پیکر یہ صدا بہار آنکھیں

٭٭٭٭

# احمد فراز کے نام

(چلو میں ہاتھ بڑھاتا ہوں دوستی کے لیے)

فراز

تمھارا ہاتھ بڑھا ہے جو دوستی کے لیے
مرے لیے ہے وہ اک یارِ غم گسار کا ہاتھ
وہ ہاتھ شاخِ گلِ گلشنِ تمنا ہے
مہک رہا ہے مرے ہاتھ میں بہار کا ہاتھ

خدا کرے کہ سلامت رہیں یہ ہاتھ اپنے
عطا ہوئے ہیں جو زلفیں سنوارنے کے لیے
زمیں سے نقش مٹانے کو ظلم و نفرت کا
فلک سے چاند ستارے اتارنے کے لیے

زمینِ پاک ہمارے جگر کا ٹکڑا ہے
ہمیں عزیز ہے دہلی و لکھنؤ کی طرح
تمھارے لہجے میں میری نوا کا لہجہ ہے
تمھارا دل ہے حسیں میری آرزو کی طرح

کریں یہ عہد کہ اوزارِ جنگ جتنے ہیں
انھیں مٹانا ہے اور خاک میں ملانا ہے
کریں یہ عہد کہ اربابِ جنگ ہیں جتنے
انھیں شرافت و انسانیت سکھانا ہے

جئیں تمام حسینانِ خیبر و لاہور
جئیں تمام جوانانِ جنتِ کشمیر
ہو لب پہ نغمۂ مہر و وفا کی تابانی
کتابِ دل پہ فقط حرفِ عشق ہو تحریر

'تم آؤ گلشنِ لاہور سے چمن بردوش
ہم آئیں صبحِ بنارس کی روشنی لے کر
ہمالیہ کی ہواؤں کی تازگی لے کر
پھر اس کے بعد یہ پوچھیں کہ کون دشمن ہے'

# ویدِ مقدس

شعورِ انساں کے آفتابِ عظیم کی اولیں شعائیں
جو لحن و آواز بن گئی ہیں
وہ اولیں عالمِ تحیر
زمین کیا آسمان کیا ہے؟
ستارے کیوں جگمگا رہے ہیں
تحیر اک نغمۂ مسلسل
تحیر اک رقصِ والہانہ
تحیر اک فکرِ عارفانہ

کوئی ہے خالق تو وہ کہاں ہے؟
اگر نہیں ہے تو پھر یہ کیا ہے؟
یہ دل میں کس نور کی ضیاء ہے؟
بشر کا جلوہ ہے یا خدا ہے؟

********

# چنڈالکا [1]

یہ خاکِ پاک جو گوتم کے قدموں سے منوّر ہے
شراوستی کی بستی ہے
یہاں اک سادہ و معصوم دل
روشن ہوا تھا عشق کے پاکیزہ شعلے سے
دھواں اٹھا
بدن سے عود و عنبر کی مہک آئی
وہ خوشبو
اب بھی آوارہ ہے جنگل کی ہواؤں میں

********

1 میرے وطن بلرام پور سے چند میل کے فاصلے پر شراوستی کا قدیم علاقہ ہے جہاں گوتم بدھ نے بہت سی راتیں گذاریں۔ چنڈالکا ایک اچھوت لڑکی ہے جو گوتم بدھ کے ایک شاگرد آنند پر عاشق ہوگئی تھی یہ عشق اس کو گوتم بدھ کے وہار تک لے آیا اور وہ وہیں رہ گئی۔

# غزل

شمع کا، مے کا، شفق زار کا گلزار کا رنگ
سب میں اور سب سے جدا ہے لبِ دلدار کا رنگ

تہہ عارض جو فروزاں ہیں ہزاروں شمعیں
لطفِ اقرار ہے یا شوخیِ اقرار کا رنگ

آئی مہکی ہوئی پھر جشنِ ملاقات کی رات
جام میں ڈھلنے لگا شام کے رخسار کا رنگ

عکسِ ساقی سے دمک اٹھی ہے ساغر کی جبیں
اور کچھ شوخ ہوا بادۂ گلنار کا رنگ

ان کے آنے کو چھپاؤں تو چھپاؤں کیسے
بدلا بدلا سا ہے میرے در و دیوار کا رنگ